RNI Number : MPHIN/2016/70609

ISSN NUMBER : 2455-9814

Dhingra Family Foundation USA

वर्ष : 2, अंक : 8,
जनवरी-मार्च 2018
मूल्य पचास रुपये

# विभोम स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

# शिवना प्रकाशन : जनवरी 2018 सेट में शामिल पुस्तकें

प्रगति मैदान पर आयोजित होने वाले नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2018 में "शिवना प्रकाशन-डींगरा फ़ाउण्डेशन" का स्टॉल हॉल क्रमांक 12 ए / 12 में स्टॉल क्रमांक 105 है। कृपया अवश्य पधारें।

विमर्श - नक़्क़ाशीदार केबिनेट
संपादक : पंकज सुबीर

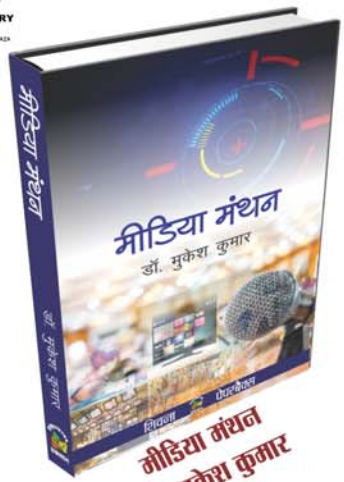


मीडिया मंथन
डॉ. मुकेश कुमार

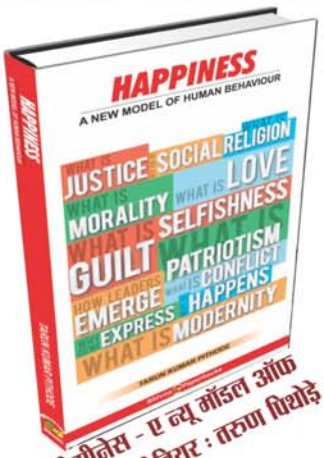


हैप्पीनेस - ए न्यू मॉडल ऑफ ह्यूमन बिहेवियर : तरुण पिथोड़े

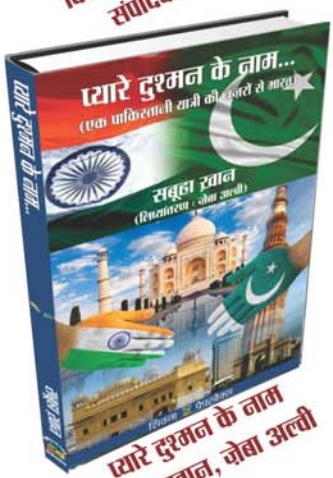


प्यारे दुश्मन के नाम
सबूहा ख़ान, जेबा अल्वी

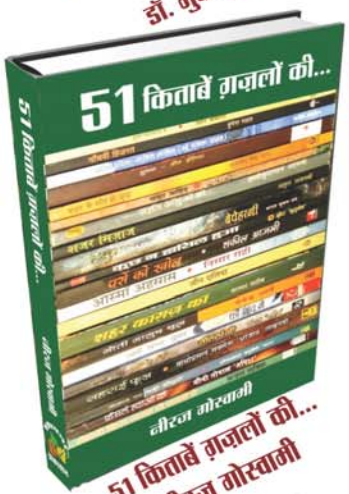


51 किताबें ग़ज़लों की...
नीरज गोस्वामी

तुम्हारे जाने के बाद
कृष्णकांत निलोसे

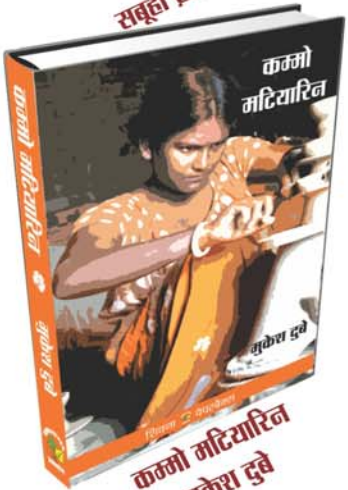


कम्मो मटियारिन
मुकेश दुबे

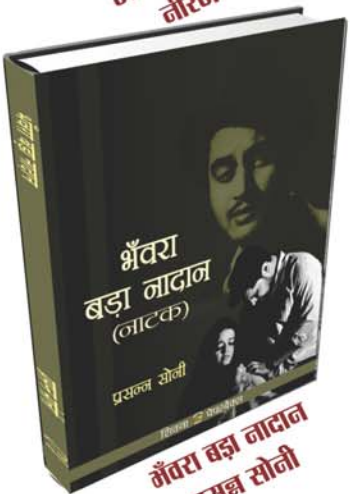


भँवरा बड़ा नादान
प्रसन्न सोनी

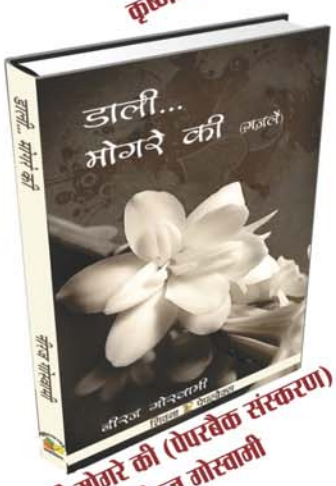


डाली मोगरे की (पेपरबैक संस्करण)
नीरज गोस्वामी

नई दिल्ली के प्रगति मैदान पर आयोजित होने वाले "नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2018" में लेखक मंच पर आयोजित कार्यक्रम में शिवना प्रकाशन के नए सेट की पुस्तकों का विमोचन किया जाएगा।

**शिवना प्रकाशन कार्यक्रम**
**"पुस्तक विमोचन समारोह"**
लेखक मंच, हॉल क्रमांक 12
दिनांक : 9 जनवरी 2018
समय : 12:45 से 2:15 तक
मुख्य अतिथि :
डॉ. प्रेम जनमेजय
अध्यक्षता :
डॉ. सुशील सिद्धार्थ
संचालन : शहरयार

***

**विभोम-स्वर कार्यक्रम**
**"अनुवाद की आवाजाही हिन्दी, उर्दू और अंग्रेज़ी साहित्य के बीच"**
लेखक मंच, हॉल क्रमांक 12
दिनांक : 12 जनवरी 2018
समय : 12:45 से 2:15 तक
मुख्य अतिथि :
सबूहा ख़ान (उर्दू)
अध्यक्षता :
तरुण पिथोड़े (अंग्रेज़ी)
वक्ता : गीताश्री (हिन्दी), प्रज्ञा (हिन्दी), ज़ेबा अल्वी (उर्दू)
संचालन : पंकज सुबीर


शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने
सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan


शिवना प्रकाशन की पुस्तकें सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर

amazon http://www.amazon.in
flipkart.com http://www.flipkart.com
paytm ebay
https://www.paytm.com http://www.ebay.in

दिल्ली में पुस्तकें प्राप्त करें : हिन्दी बुक सेंटर, 4/5 आसफ अली रोड
फोन : 011-23286757 http://www.hindibook.com

संरक्षक एवं प्रमुख संपादक
**सुधा ओम ढींगरा**

संपादक
**पंकज सुबीर**

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय
पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001
दूरभाष : 07562405545, 07562695918
मोबाइल : 09806162184
ईमेल : vibhomswar@gmail.com

ऑनलाइन 'विभोम-स्वर' :
http://www.vibhom.com/vibhomswar.html
http://vibhomswar.blogspot.in
फेसबुक पर 'विभोम स्वर'
https://www.facebook.com/vibhomswar
एक प्रति : 50 रुपये (विदेशों हेतु ५ डॉलर $5)
सदस्यता शुल्क
200 रुपये (एक वर्ष), 400 रुपये (दो वर्ष)
1000 रुपये (पाँच वर्ष), 3000 रुपये (आजीवन)

विदेश प्रतिनिधि
**अनिता शर्मा** (शंघाई, चीन)
**रेखा राजवंशी** (सिडनी, आस्ट्रेलिया)
**शिखा वार्ष्णेय** (लंदन, यू के)
**नीरा त्यागी** (लीड्स, यू के)
**अनिल शर्मा** (बैंगकॉक)
डिज़ायनिंग
**सनी गोस्वामी, शहरयार**
तकनीकी सहयोग
**पारुल सिंह**
संपादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक, अव्यवसायिक।
पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी।
समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर मध्यप्रदेश रहेगा।

# विभोम-स्वर

## वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

**वर्ष : 2, अंक : 8, त्रैमासिक : जनवरी-मार्च 2018**
**RNI NUMBER : MPHIN/2016/70609**
**ISSN NUMBER : 2455-9814**

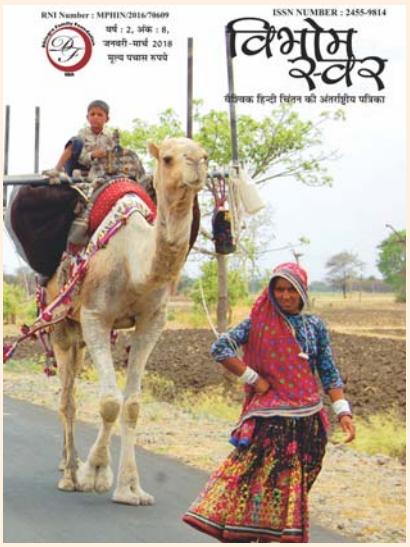

आवरण चित्र
**राजेंद्र शर्मा बब्बल गुरु**

**Dhingra Family Foundation**
101 Guymon Court, Morrisville
NC-27560, USA
Ph. +1-919-678-9056 (H),
+1-919-801-0672(MO.)
Email: sudhadrishti@gmail.com

## इस अंक में

# विभोम-स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

**वर्ष : 2, अंक : 8**

**त्रैमासिक : जनवरी-मार्च 2018**

**संपादकीय 5**

**मित्रनामा 7**

**साक्षात्कार**

डॉ. उदय नारायण गंगू से सुधा ओम ढींगरा की बातचीत 9

**कथा कहानी**

ढोर
डॉ. अचला नागर 13

एक सड़क ऐसी
कृष्णा अग्निहोत्री 17

यह कैसी शवयात्रा.. !
तेजेन्द्र शर्मा 19

कर्फ्यू
चौधरी मदन मोहन 'समर' 26

मौलाना
शहादत 30

नूर बानो
अफ़रोज़ ताज 33

**लघुकथाएँ**

नारी विमर्श
महेश शर्मा 16

एक छत
गोविन्द भारद्वाज 29

शांत मौत
डॉ. संगीता गाँधी 40

प्रेरणा
सदाशिव कौतुक 48

**भाषांतर**

पंजाबी कहानी
दाढ़ी वाला बाबा
रीतू कलसी
अनुवाद- एन नवराही 38

**व्यंग्य**

हम आपके थे कब
संपत सरल 41

विलायती राम पांडेय और नोज़ पिन
लालित्य ललित 45

छपास पीड़ा
समीर लाल 'समीर' 47

बाबाओं के देश में
कैलाश मण्डलेकर 49

हैस टेग और मैं
अरुण अर्णव खरे 50

**आत्मकथा के अंश**

रेतीले अंधड़ों से हरी-भरी तलहटी तक
डॉ.सुमित्रा महरोल 51

**शहरों की रूह**

थाईलैंड के विश्वास या अंध- विश्वास
अनिल शर्मा 52

अमेरिका का हालोईन का त्योहार
लावण्या शाह 54

**संस्मरण**

एक अंतहीन प्रेम कथा
शशि पाधा 55

**आलेख**

हिन्दी कहानी और लिव-इन संबंध (प्रवासी महिला कहानीकारों का संदर्भ)
डॉ. मधु संधु 59

**कविताएँ**

रिम्पी खिल्लन सिंह 62

राजेन्द्र नागदेव 62

रेखा भाटिया 63

मंजु मिश्रा 64

सुमन उपाध्याय 65

धर्म जैन 66

अमृतलाल मदान 67

**नव पल्लव**

समुद्र विजय 68

**समाचार सार**

मीरा स्मृति सम्मान समारोह 69

साहित्य उत्सव का आयोजन 70

डॉ. मिज़ोकामी का व्याख्यान 70

नमिता सिंह की पुस्तक का लोकार्पण 71

पूरन सिंह की कहानी का मंचन 71

गिरीश पंकज को 'व्यंग्यश्री' 72

इब्बार रब्बी को राजकमल पुरस्कार 72

डॉ. नीरज दइया को संभागीय पुरस्कार 72

डॉ. लारी आज़ाद को कर्मवीर सम्मान 73

वार्षिक उत्सव मनाया 73

बैंक ऑफ़ बड़ौदा द्वारा संगोष्ठी 73

**आख़िरी पन्ना 74**

### विभोम-स्वर सदस्यता प्रपत्र

यदि आप विभोम-स्वर की सदस्यता लेना चाहते हैं, तो सदस्यता शुल्क इस प्रकार है : 200 रुपये (एक वर्ष), 400 रुपये (दो वर्ष), 1000 रुपये (पाँच वर्ष), 3000 रुपये (आजीवन)। सदस्यता शुल्क आप चैक / ड्राफ़्ट द्वारा विभोम स्वर (VIBHOM SWAR) के नाम से भेज सकते हैं। आप सदस्यता शुल्क को विभोम-स्वर के बैंक खाते में भी जमा कर सकते हैं, बैंक खाते का विवरण इस प्रकार है : Name of Account : **Vibhom Swar**, Account Number : **30010200000312**, Type : **Current Account**, Bank : **Bank Of Baroda**, Branch : **Sehore (M.P.)**, IFSC Code : **BARB0SEHORE** (Fifth Character is "Zero") (विशेष रूप से ध्यान दें कि आई. एफ. एस. सी. कोड में पाँचवा कैरेक्टर अंग्रेज़ी का अक्षर 'ओ' नहीं है बल्कि अंक 'ज़ीरो' है।) सदस्यता शुल्क के साथ नीचे दिये गए विवरण अनुसार जानकारी ईमेल अथवा डाक से हमें भेजें जिससे आपको पत्रिका भेजी जा सके:

**नाम :**_____ **डाक का पता :**_____

_____ **सदस्यता शुल्क :**_____ **चैक / ड्राफ़्ट नंबर :**_____

**ट्रांज़ेक्शन कोड ( यदि ऑनलाइन ट्रांसफ़र किया है ) :**_____ **दिनांक :**_____

(यदि सदस्यता शुल्क बैंक खाते में नकद जमा किया है तो बैंक की जमा रसीद डाक से अथवा स्कैन करके ईमेल द्वारा प्रेषित करें।)

**संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय :** पी. सी. लैब, शॉप नंबर. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001, दूरभाष : 07562405545, मोबाइल : 09806162184, ईमेल : vibhomswar@gmail.com

संपादकीय

# महिला ही दूसरी महिला को पहले चोट पहुँचाती है

सुधा ओम ढींगरा
101, गाईमन कोर्ट, मोर्रिस्विल्ल
नॉर्थ कैरोलाइना-27560, यू.एस. ए.
फोन : +1-919-678-9056
मोबाइल : +1-919-801-0672
ईमेल sudhadrishti@gmail.com

मित्रो, नव-वर्ष के आगमन के साथ ही अमरीका का नारी विमर्श एक क्रांतिकारी मोड़ ले चुका है। किसी भी तरह के मानसिक और शारीरिक शोषण के विरुद्ध एक होकर लड़ने की मशाल यहाँ की स्त्रियों ने जला ली है। सामाजिक सक्रियतावादी तराना बुर्के अपने सोशल नेटवर्क My Space पर 2006 में Me Too शब्द ले कर आईं। इस नेटवर्क से तराना बुर्के ने अश्वेत, दमित और वंचित उन महिलाओं को अपना दु:ख-दर्द बाँटने के लिए आवाहन दिया, जो यौन शोषण, शारीरिक उत्पीड़न का शिकार हुई हैं। बुर्के एक डॉक्युमेंटरी बना रही हैं, जिसका शीर्षक उन्होंने Me Too रखा, कहतीं हैं कि इन शब्दों का प्रयोग करने की प्रेरणा उन्हें एक तेरह साल की लड़की से मिली, जिसने उन्हें अपने बलात्कार के बारे में बताया था और वे उसे कह नहीं पाईं-Me Too....

पर अब इन शब्दों को अमेरिका के हर शहर और कोने में बसी स्त्रियों को जागरूक करने के लिए प्रयोग में लाया जा रहा है। यहाँ की स्त्रियों को एक बात समझ में आ गई है कि अगर उन्हें बलात्कार, यौन शोषण और उत्पीड़न को रोकना है तो उन्हें एकजुट होना पड़ेगा और पितृसत्ता के विरुद्ध एक होकर लड़ना पड़ेगा। तभी वे एक दूसरे का दर्द बाँट सकती हैं।

अमेरिका के प्रेज़ीडेंट डॉनल्ड ट्रम्प की जीत के बाद यहाँ की महिलाओं के आत्मसम्मान को बहुत चोट लगी। डॉनल्ड ट्रम्प पर कई महिलाओं ने सेक्सुअल हैरासमेंट के आरोप लगाए थे पर उन्हें नज़रअंदाज़ कर दिया गया। बहुत-सी महिलाओं ने उन्हें वोट डाला, वे राजनीतिक विचारधारा और सोच में बँधी दूसरी तरफ अपनी जात और उसके कष्टों के बारे में सोच ही नहीं पाईं। बस उसी विचारधारा और सोच को झंझोड़ने का प्रयास किया जा रहा है।

गत दिनों हॉलीवुड अभिनेत्री एलिसा मिलानो ने अंतरराष्ट्रीय प्रोड्यूसर हार्वी वाइन्सटाइन पर यौन शोषण के आरोप लगाए; हालाँकि एलिसा के सामने आने के बाद बहुत सी लड़कियों और महिलाओं ने भी हार्वी वाइन्सटाइन पर आरोप लगाए। उससे पहले वे अलग-अलग कारणों से बोल नहीं पाई थीं। एलिसा के सामने आने से उन्हें प्रोत्साहन मिला। एलिसा Me Too से इतनी प्रभावित हुई कि उसने ट्विटर का हैशटैग बना कर पूरी दुनिया में सेक्सुअली हैरास नारी जाति को जाग्रत करने और इससे जुड़ने की हुँकार लगाई है। Me Too अब एक आंदोलन बन गया है।

अब तक अमेरिका की हज़ारों यौन पीड़ित महिलाओं के साथ पूरे विश्व के अलग-अलग देशों की सेक्सुअली हैरास नारियाँ इसके साथ जुड़ गई हैं; यौन उत्पीड़ित और यौन शोषित पुरुष भी यहाँ आकर अपनी कहानी कहने लगे हैं। यह आंदोलन अब रंगभेद से परे जा चुका है। श्वेत, अश्वेत, सरहदों पार की महिलाएँ, धर्म और विचारों के घेरे से परे होकर यहाँ अपना दु:ख-सुख बाँटती हैं।

नारी एकता शक्ति का परिणाम ही कहेंगे, अलाबामा राज्य से सेनेट के चुनाव में खड़े हुए रिपब्लिकन रॉय मूर हार गए। उन पर कई लड़कियों और महिलाओं ने शारीरिक शोषण के आरोप लगाए थे। अलाबामा राज्य रिपब्लिकंज़ का गढ़ है और पिछले पच्चीस वर्षों से कभी कोई डेमोक्रेट् नहीं जीता। डॉनल्ड ट्रम्प रिपब्लिकन हैं; हालाँकि राजनीतिक पंडित अपने-अपने स्तर पर इस हार को तोल रहे हैं पर अमेरिका की स्त्रियाँ बेहद खुश हैं, उन्होंने रॉय मूर को हराने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी थी। उनका यह मानना है कि अगर ऐसे लोग सत्ता में आने से रोके जाएँगे तो बाकी लोगों को सबक मिलेगा और वे डरेंगे।

निर्विवाद यह तथ्य भी सामने है कि अभी भी बहुत सी नारियों को साथ लेना है; जो सामाजिक रुतबे, आत्मविश्वास की कमी, कैरियर का डर और पितृसत्ता के दबाव के चलते इस आंदोलन से जुड़ नहीं पा रहीं, उसी से पुरुष की ऐसी मानसिकता को बढ़ावा मिल रहा है। पितृसत्ता आदिकाल से ही एक रही है। अगर एकजुट नहीं हो पाईं तो वे हैं महिलाएँ। महिला ही महिला की दुश्मन है। पुरुष की प्रताड़ना एक मुद्दा है पर घर और समाज में महिला ही दूसरी महिला को पहले चोट पहुँचाती है। हालाँकि स्वदेश की तरह यहाँ की

## संपादकीय

नारी पुरुष पर निर्भर नहीं है। वह उसके साथ कंधे से कंधा मिला कर चलती है। आत्मनिर्भर और आत्मसम्मानित नारी है यहाँ की। देश की तरह उन पर सामाजिक और घरेलु दबाव नहीं, कोई बहू यहाँ जलाई नहीं जाती।

यहाँ स्वतंत्र विचारों वाली, शिक्षित, अपने अधिकारों के प्रति जागरूक, आत्मनिर्भर नारी का संघर्ष है, प्रकृति के उस मूलभूत सिद्धांत 'इच्छा' और 'न' के प्रति, जिस पर उसका पूर्ण और मौलिक अधिकार है, जो पुरुष अपनी सत्ता के मद में उससे छीन लेता है।

दो देशों से जुड़े होने के कारण (एक जन्मभूमि और एक कर्मभूमि) इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि जन्मभूमि के शहरों में महिला शिक्षित, स्वावलंबी हो गई है, काफी हद तक स्वतंत्र होने की कोशिश कर रही है पर जब तक सामाजिक ढाँचे, पारिवारिक सोच और पुरुष सत्ता की मानसिकता में परिवर्तन नहीं होगा, तब तक भारतीय नारी उस मंज़िल को नहीं पा सकेगी जिसकी वह अधिकारी है। उसके लिए देश की स्त्रियों को भी एक होने की ज़रूरत है, तो क्यों न घरों से ही इसकी शुरूआत की जाए.....

अब तक आप सबने बहुत साथ दिया है, नए वर्ष में भी आपसे इसी तरह के सहयोग की कामना है।

विभोम-स्वर और शिवना साहित्यिकी की टीम की ओर से आप सबको नव वर्ष की अनंत मंगलकामनाएँ!!! नया साल आप सबके जीवन में ढेरों खुशियाँ और उल्लास लाए।

**आपकी,**



**सुधा ओम ढींगरा**

### बधाई

इस वर्ष के तीनों शीर्ष सम्मान लेखिकाओं को दिए जाने की घोषणा हुई है। एक स्त्री होने के कारण यह समाचार निश्चित रूप से बहुत सुख प्रदान करते हैं। इस साल पूर्व में जहाँ वरिष्ठ लेखिका नासिरा शर्मा जी को साहित्य अकादमी सम्मान देने की घोषणा हो चुकी है, वहीं अभी कुछ दिनों पूर्व प्रतिष्ठित ज्ञानपीठ सम्मान वरिष्ठ लेखिका कृष्णा सोबती जी को और प्रतिष्ठित व्यास सम्मान वरिष्ठ लेखिका ममता कालिया जी को प्रदान किए जाने की घोषणा की गई है। विभोम-स्वर की पूरी टीम की ओर से हिन्दी की इन वरिष्ठ लेखिकाओं को बहुत-बहुत बधाई तथा शुभकामनाएँ।

***

### ढींगरा फ़ाउण्डेशन अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान के बारे में

मित्रों, ढींगरा फ़ाउण्डेशन अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मानों की घोषणा हम अभी तक नहीं कर पाए हैं। सम्मानित किए जाने वाले रचनाकारों के नाम तय हो जाने के बाद भी हम घोषणा नहीं कर पा रहे हैं, क्योंकि अमेरिका में बदली हुई राजनैतिक परिस्थितियों के कारण आयोजन करना मुश्किल हो गया है। फ़ाउण्डेशन द्वारा पिछले पाँच-छह माह से प्रयास किया जा रहा था कि किसी प्रकार आयोजन हो सके, लेकिन अभी तक के परिणाम निराशाजनक प्राप्त हुए हैं। यदि दिसम्बर अंत तक कुछ सकारात्मक नहीं हो पाता है तो हमें अंततः यह सम्मान समारोह भारत में ही आयोजित करने का निर्णय लेना होगा।

***



**हर वर्ष बीत जाने की नियति को लेकर ही आया है। किसी को पता नहीं चलता कब बहुत चुपके-से एक पूरा वर्ष गुज़र जाता है। हम ठगे-से सोचते हैं कि अरे! अभी तो आया था वर्ष। कुछ ऐसे क्षण होते हैं जो सुंदर फूलों की तरह यादों में बस जाते हैं, उनको ही दामन में सहेज कर आइए नए साल का स्वागत करें।**

## मित्रनामा

### मौलिक और ताज़ा सृजन की ज़मीन

लेखन-सरोकार और सद्भावना स्वरूप पत्रिकाएँ तो प्राय: प्राप्त होती ही रहती हैं, लेकिन अप्रत्याशित रूप से प्राप्त 'विभोम स्वर' और 'शिवना साहित्यिकी' पत्रिका का अक्टूबर-दिसम्बर 2017 अंक मेरी प्रसन्नता को कई गुना बढ़ा गया। ऐसा लगा जैसे साहित्य की विभिन्न विधाओं की गंध लिए एक ताज़ा झोंका आकर दिलो-दिमाग़ को हर्षा गया है। दोनों पत्रिकाओं के गेटअप और उनकी सामग्री में नएपन का एक मनभाता आकर्षण मुझे लगा। आवरण पृष्ठ जितना सुन्दर और समयोचित है- उतना ही रोचक और कुछ ख़ास कहतीं रचनाएँ हैं। कृपया इस साहित्यिक अनुष्ठान के लिए बधाई और शुभकामनाएँ स्वीकार करें। प्रसन्नता की बात है कि दोनों पत्रिकाओं के लिए आपके पास अच्छी टीम है। मैं आपकी इन दोनों पत्रिकाओं को लेकर आशान्वित इस कारण से भी हूँ कि इन दोनों ने इन्टरनेट देव की भभूत अपनी देह पर नहीं रमाई है। आजकल की अधिकतर सरकारी विज्ञापन जीवी पत्रिकाएँ-इन्टरनेट का कचरा ढो रही है। ऐसी पत्रिकाएँ पाठक और साहित्य, दोनों की तरफ से अपनी आँखें मूँदी रखती हैं। मुझे खुशी है कि आपकी पत्रिकाएँ मौलिक और ताज़ा सृजन की ज़मीन पर खड़ी हैं। इनकी यह प्रकाशन-यात्रा अपनी अभिनवता के साथ सतत जारी रहे, यह कामना है। सीहोर जैसी छोटी जगह से दो स्तरीय पत्रिकाओं की शुरूआत करके महानगरों को चुनौती दी है। प्रयास प्रशंसनीय ही नहीं, प्रणम्य भी है।

**-युगेश शर्मा, 11 सौम्या एन्क्लेव एक्सटेंशन, चूना भट्टी, भोपाल-16**

***

### प्रजेंटेशन और डिज़ाइन अच्छा है

शिवना साहित्यिकी और विभोम-स्वर के नए अंक मिले। इन पत्रिकाओं का प्रजेंटेशन और डिज़ाइन अच्छा है। लेकिन सामग्री के चयन में थोड़ी और मेहनत की ज़रूरत है। काग़ज़ की नाव इस अंक की सबसे बेहतर कहानी है।

**-मनोज रूपड़ा**

***

### हिंसक प्रवृत्तियों पर चिन्ता उचित

विभोर-स्वर का अक्तूबर-दिसम्बर अंक मिला (तीन मास की प्रतीक्षा जानलेवा है) सम्पादकीय में त्योहारों की शुभ कामनाओं के साथ आपने विश्व भर में फैलती हिंसक प्रवृत्तियों पर चिन्ता उचित ही व्यक्त की है। अभी हाल ही में न्यूयार्क में आठ साइकिल सवारों को आतंकी ट्रक द्वारा कुचल जाने की दिल दहलाने वाली घटना हुई। गत मास अम्बाला से विकेश निझावन व अरुण आए थे यहाँ, उनसे भी देश-प्रदेश के हालात पर यही चर्चा हुई। अनिल शर्मा ने अपने साक्षात्कार में प्रवासी साहित्य पर बात करते हुए न्यूज़ीलैण्ड के रोहित हैप्पी का ज़िक्र किया है। वह शुरू में मेरे छात्र रहे। एक बार उन्होंने आकलैंड में एक कवि सम्मेलन में मेरी कविताओं का भी पाठ किया था तथा बाद में प्रेस कटिंग तथा साहित्यिक संस्था का प्रमाण पत्र भी भेजा था। वैसे भी मैंने स्वंय जा कर ईथोपिया, मॉरीशस एवं कराची के World Social Forum -2006 में काव्य पाठ किया। ..... प्रस्तुत अंक में ऋतु भनोट की कहानी में तारा बीबी का मंदिर भी ज्यों एक सजीव पात्र है। पत्नियों द्वारा रोगी, ऐयाश पतियों की भी सेवा उन्हें माँ का रूप देती है जो बच्चों के सब गुप्त दोष भी छुपा लेती है। यह भारत के अंचलों में ही सम्भव है। पेशावर वाली माँ (पारुल सिंह) का संबोधन शिल्प अनूठा है, तथा चरित्र मर्म-स्पर्शी है। व्यंग्य में रिटायर दारोग़ा की चतुराई, लघुकथाएँ में राष्ट्र गान गाता कृशकाय वृद्ध तथा सफ़ेद परतों में लाल चुनरी छुपा रखने वाली बाल विधवा चाची-नानी न भूलने वाले पात्र हैं। आख़िरी पन्ने पर सुबीर जी ने तीर संधान करते रहने वाले टी वीं एंकरों की ख़ूब ख़बर ली है। वाकई यह समय नकारात्मकता से भरा हुआ ख़तरनाक समय है जो जान बूझ कर पैदा किया जा रहा है।

**-अमृतलाल मदान, सारशब्द कुंज, 1150/11, प्रोफ़ेसर कालोनी, कैथल 136027, मोबाईल: 09466239164**

***

### उत्कृष्टतम् पत्रिका विभोम-स्वर

सद् - साहित्य के लिए एक उत्कंठा मुझे हिन्दी और अंग्रेज़ी की उत्कृष्ट पत्रिकाओं की तरफ आकर्षित करती रही है और उन पत्रिकाओं में उत्कृष्टतम् पत्रिका विभोम-स्वर का मुझे बहुत ही बेसब्री से इंतज़ार रहता है। अक्टूबर-दिसम्बर अंक के मिल जाने पर कितनी प्रसन्नता हुई, यह शब्दों में नहीं कह सकता। बेटियाँ घर की रौनक होती हैं। चाहे कोई भी उत्सव हो जिन घरों में बेटियाँ/बहनें नहीं होतीं हैं वो घर-घर जैसा नहीं लगता है - श्रीहीन और अमांगलिक। विभोम-स्वर के आवरण पर हँसती-मुस्काती और दीपक की रौशनी से दिपदिपाती दो लड़कियाँ इस अंक की सुन्दरता को बढ़ाने के साथ-साथ हृदय के अंधकार को मिटाने वाली हैं।

हम मनुष्य जाति जितने भी सभ्य हो गए हों, पर हमारी आदिम प्रवृतियों में ज़्यादा फर्क नहीं आया है और आज भी लोभ, मोह, काम, क्रोध और हिंसा से ग्रसित हैं हम और बेहद छोटी सी बात पर हमारी यह आदिम प्रवृतियाँ हमें अमानुषिक कृत्यों में लिप्त कर देती हैं। हम आज भी भीतर से उतने ही हिंसक हैं जितने कि आदिम युगों में थे। संपादकीय के शीर्षक (हिंसक प्रवृत्ति के परिणाम पूरा विश्व भुगत रहा है) ने भी मुझे अपनी ओर आकर्षित किया और इस संवेदनशील संपादकीय की अवहेलना कर आगे बढ़ जाना संभव न हुआ। एक अद्भुत हुलास और उत्साह के साथ मैं शब्दों में उतर गया। सचमुच बहुत ही खूबसूरत और विशिष्ट महीने हैं अक्टूबर, नवम्बर और दिसम्बर जब पूरा माहौल उत्साह और उत्सव से भरा - पूरा रहता है और लोग उत्सवों की तैयारी में व्यस्त रहते हैं। क्या देश और क्या विदेश हर तरफ गहमागहमी और रसरंग। त्योहारों पर बात करते -करते आपने बड़ी कुशलता से विदेश के सकारात्मक पहलुओं पर विचार किया है जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जाना चाहिए। वाकई हमारे देश में विदेशी अपसंस्कृति को अपनाने में तो कोई कोताही नहीं बरती जाती है पर वहाँ के अनुशासन, सफाई और देश के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की ज़िम्मेदारी से हम कोई सबक नहीं लेते हैं और हर बात के लिए बस सरकार को ही कोसते हैं। अगर जनता जागरूक नहीं रहेगी तो सरकार क्या-क्या कर देगी भला ? आपने एकदम सही बात कही है कि, 'छोटे-छोटे परिवर्तनों से

ही हम देश को निखार सकते हैं, संवार सकते हैं।'' परिवर्तन की सही परिभाषा गढ़ती इन पंक्तियों को पढ़ते हुए आपके हृदय में देश के प्रति कैसे भाव हैं।

लॉस वेगस में जो कुछ घटित हुआ वो नृशंस और अमानुषिक था। आज पूरी दुनियाँ में हिंसा ही हिंसा है और तो और जिस देश में बुद्ध और गाँधी जैसे अहिंसा के पुजारी हुए वो देश भी दिन प्रति दिन और भी हिंसक और अभद्र होता जा रहा है। हिंसा की चपेट में आकर मानवीयता खून के आँसू बहा रही है। अमेरिका जैसे विकसित देश में भी डॉक्टर जुमना नागरवाला और डॉ. फखरूद्दीन जैसे कसाई मासूम बच्चियों के clitoris के ख़तने का कारोबार चला रहे थे इन पर मुक़दमा चलेगा पर ऐसे कसाईयों को तो फाँसी दे देनी चाहिए। एशियाई देशों में अगर लड़कियों के साथ ये नृशंसता होती है तो हम कहते हैं कि ये जाहिलों का समाज है पर अमेरिका जैसे अत्याधुनिक देश में भी ऐसा कुकृत्य करने वाले हैं तो क्या कहा जाए ? बेहद अफ़सोसनाक और शर्मनाक है कि नारी कहीं भी सुरक्षित नहीं है।

मेरे पास समय की बड़ी मारामारी है; क्योंकि पेशे से कलाकार हूँ और पेंटिंग करना जो कभी शौक हुआ करता था अब मेरी रोज़ी - रोटी है। बचपन से मेरे दो ही शौक थे, एक चित्र बनाना और दूसरा साहित्य सेवन, पर जैसे-जैसे मेरा पहला शौक मेरे कमाई का माध्यम बनता गया दूसरे शौक से एक दूरी मेरी मजबूरी होती गई ! दिन के समय कुछ भी पढ़ना संभव नहीं हो पाता है;क्योंकि जब तक लड़का स्कूल में रहता है तब तक मैं पेंटिंग करता हूँ और उसके आने पर उसे भी समय देना पड़ता है और इसलिए रात के समय ही थोड़ा साहित्य सेवन कर लेता हूँ। आपके महत्त्वपूर्ण संपादकीय को पढ़ लेने के बाद इच्छा हुई कि अनिल शर्मा से आपकी बातचीत का लुत्फ लिया जाए पर ऐसा संभव न हो सका और रात भर जाग कर पढ़ने लगूँ तो पत्नी नाराज़ होने लगती है। लेकिन इधर प्रवासी साहित्य और साहित्यकारों के प्रति अपने बढ़ते आकर्षण के कारण आपके ऑनलाइन साक्षात्कार के माध्यम से प्रवासी भारतीय साहित्य के विशेषज्ञ के रूप में चर्चित अनिल शर्मा के शब्दों में प्रविष्ट हुआ और पढ़ते-लिखते कब सुबह हो गई पता ही नही चला ! युवावस्था से ही हिन्दी के लिए समर्पित अनिल शर्मा का व्यक्तित्व बहुत अच्छा लगा और मैं तनमन से समर्पित शब्दों की आत्मा में प्रवेश करता हुआ मैं जैसे आनन्द में आप्लावित हो उठा। अपनी भाषा से गहरे तक जुड़े साहित्यकारों और हिन्दी प्रेमियों के योगदानों की चर्चा करते हुए ब्रिटेन में हिन्दी के प्रचार-प्रसार और नई पीढ़ी तक हिन्दी को पहुँचाने की अपनी प्राथमिकता की भी चर्चा की है अनिल शर्मा ने जिसे पढ़कर मन प्रसन्न और प्रफुल्लित हो गया। आज चहुँ ओर प्रवासी हिन्दी लेखन स्वीकृत और सम्मानित है पर प्रवासी साहित्य को इस मुकाम तक पहुँचाने में जिन प्रवासी लेखकों ने अपना स्वर्णिम योगदान दिया उसके लिए हिन्दी जगत् उन साहित्यकारों का सदैव ऋणी रहेगा। प्रवासी साहित्य के सम्बन्ध में मेरे अज्ञान को दूर करने वाला यह वार्तालाप एक अद्भुत स्नेह जगाने लगा प्रवासी साहित्य के लिए और मैं शब्दों में डूब गया किसी ध्यानमग्न बगुले की तरह। साहित्य के मूल्यांकन के दृष्टिकोण से इसका वर्गीकरण आवश्यक है पर मूल रूप से साहित्य का उद्देश्य जनकल्याण है ! कुछ लेखक किसी ख़ास वाद या विचारधारा से प्रभावित होकर लिखते हैं तो कुछ किसी भी वाद से परे बस लिखते हैं और आलोचक उनके साहित्य में किसी न किसी वाद को आरोपित कर उसका मूल्यांकन करते हैं। मैं साहित्य को शुद्ध साहित्य के रूप में स्वीकार करने का पक्षपाती हूँ और न मुझे किसी ख़ास वाद या विचारधारा से स्नेह है न परहेज़। मैं हर विमर्श को महत्त्वपूर्ण मानते हुए प्रवासी-विमर्श का भी हिमायती हूँ, क्योंकि प्रवासी भारतीय की संवेदना से जुड़ने का इससे बेहतर और सशक्त माध्यम दूसरा नहीं है हमारे पास। यह प्रवासी साहित्य ही है जो हिन्दी को वृहत्तर परिपेक्ष्य और परिवेश प्रदान करता है। प्रवासी साहित्य के अध्येताओं के लिए एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ है यह साक्षात्कार।

अपनी कहानी में किसके मरने की कहानी कह रही हैं अनिलप्रभा कुमार, यह जानने के लिए ' उसका मरना ' को पढ़ना आवश्यक लगा और मेरी नज़रें शब्दों पर टिक गईं। इस अराजक समय में किसी भी रिश्ते की कोई अहमियत नहीं रह गई है और रिश्तों को खाद - पानी आपसी स्नेह और अपनत्व से ही मिलता था। समाज में सामंजस्य था और लोग एक दूसरे के सुख-दुख में काम आते थे, पर अब वैसी स्थिति नहीं रह गई है और लोग अपनी - अपनी निजी ज़िन्दगी में मस्त और सीमित हो गए हैं। एक समय था जब परिवार का अर्थ वृहत था और संयुक्त परिवार के सदस्य ही नहीं बल्कि अरिजन - परिजन भी इक तरह से परिवार का ही हिस्सा हुआ करते थे। अब इस न्यूक्लीयर फैमिली के दौर में किसी को अपने सगे - संबन्धियों से कुछ खास मतलब या सरोकार नहीं रह गया है। अनिलप्रभा जी ने जो कहानी लिखी है उसमें कुछ लोग अपने रिश्तेदार से इसलिए नाखुश हैं कि उनको न ज़फर की मौत की खबर दी गई और न अंतिम संस्कार में शामिल किया गया। अब तो भारत में भी लोगों के पास इस सबके लिए समय नहीं है लेकिन अमेरिका में अतिव्यस्त और व्यावसायिक जीवन जीते पात्र जो जाति - बिरादरी और अपने समाज से मुक्त जीवन जी रहे हैं और भारत के बारे में सोचते हैं कि यहाँ मनुष्यता बची हुई है और लोगों में समाज का डर है और वे समाज के प्रतिकूल नहीं जाते हैं। खैर, जो भी हो पर कहानी में आनन्द आ रहा था और मैं शब्दों के साथ लगा रहा। मौत के बाद मुर्दे को यूँही चुपचाप दफना दिया जाए या 'व्यूइंग' के लिए मेकअप तथा कपड़ों से सजाकर उसकी नुमाइश करें, मुर्दे को कोई फर्क नहीं पड़ता पर समाज की जो परिपाटी है उसे नहीं निभाई तो लोगबाग हँसते हैं। रिश्ते की गर्माहट और छीजती संवेदनाओं के इस अराजक समय में यह कहानी बेहद ज़रूरी और मार्मिक है।

डॉ. ऋतु भनोट की 'तारो बीबी' की चन्द पंक्तियों को पढ़ने के बाद मैं किसी सम्मोहन से बंधा पूरी कहानी पढ़ गया। सचमुच बहुत ही दिलकश नज़ारा होता था गाँव में लगने वाले मेले का और इस कहानी ने बचपन की पुरानी स्मृतियों को जैसे संजीवनी प्रदान कर दिया और बड़ी तत्परता से एक-एक शब्द को पढ़ने लगा क्योंकि

मेले के अलावा भी कहानी में बहुत कुछ था जो तृप्ति दायक था। नानी का स्नेह भरा व्यक्तित्व और अपनापन कैसा आह्लादक होता है और इस संवेदनशील कहानी में रिश्ते की मिठास को कुछ इस तरह से परोसा गया है कि दिल खुश हो गया। हालाँकि इस कहानी में जैसे गाँव का वर्णन है वैसे गाँव अब अपवाद ही हैं, क्योंकि अब गाँव – गिराँव में भी परिवर्तन की हवा पहुँच गई है और रिश्तों की आँच मद्धिम पड़ने लगी है। कृषि आधारित उद्योग और अर्थव्यवस्था संकटग्रस्त है और जीवनशैली और रहन-सहन भी अब पहले जैसा नहीं रहा है। लोकगीत भी लोकजीवन से लुप्त हो रहे हैं पर एक ही चीज़ है जो यथावत् है और वह है स्त्रियों का समर्पित सेवा – भाव और उनका शोषण। इस सुन्दर कथा के लिए लेखिका को हार्दिक धन्यवाद।

'और गुड्डो भाग गई' तो आख़िर क्यों भागी ? इस सवाल को लेकर अनर्गल उधेड़बुन में पड़े रहने के बजाय मैंने वन्दना अवस्थी दुबे के शब्दों में प्रविष्ट होना ज़्यादा महत्त्वपूर्ण समझा क्योंकि 'बोल मेरी मछली कितना पानी ?' वाला यह खेल बचपन में हम सब भी खेला करते थे। खेल-खेल में शब्दों से खेलना खूब आता है वन्दना जी को। कथा इतनी कुशलतापूर्वक बुनी गई है कि आश्चर्य होता है लेखिका की प्रवीणता पर। इस कहानी में वर्णित विषय पर बहुत कम ही कहानियाँ पढ़ी हैं मैंने। बचपन से एक साथ खेलते-कूदते लड़के- लड़कियों के किशोरावस्था में आने पर अचानक ही लड़कियों के लिए लड़कों के साथ नहीं खेलने का फतवा जारी हो जाता है। लेकिन इस तरह के बर्ताव का कारण न जानने के कारण गुड्डो की समझ में नहीं आता है कि जिसके साथ ग्यारह साल तक खेलने के लिए किसी ने भी मना नहीं किया तो अचानक ही यह पाबंदी क्यों लगने लगा कि, 'लड़कियों को सिर्फ लड़कियों के साथ ही खेलना चाहिए !' इस तरह के बेतुके फ़रमान से बच्चे अवाक् थे। कुछ ज़्यादा ही पाबंदियाँ लगाकर हम सोचते हैं कि हम लड़की को सुशील और संस्कारी बना रहे हैं। लेकिन आदर्शों के खोल लगाकर हम अपनी बेटियों को भीतर से दब्बू, खोखला और कमज़ोर ही बना रहे होते हैं। लड़कों से दूर रहने की ताकीद करने के बावजूद भी हम रुकते कहाँ हैं, हमारी आँखें ही नहीं बल्कि हमारा पूरा अस्तित्व ही ऐसे सक्रिय रहता है जैसे कि हम इन्सान नहीं सीसीटीवी कैमरा हों। युवा होती लड़कियों को अपनी देह के प्रति इतना अस्वाभाविक बना दिया जाता है जैसे वे लड़कियाँ नहीं कोई छुईमुई हों जो लड़कों के देखते ही कुम्हला जाएँगी। आए दिन लड़कियों के घर के माहौल से तंग आकर भागने की खबरें मीडिया की सुर्खी बनती हैं। मैं ये नहीं कहता कि लड़कियों को हर बात में खुली छूट मिले, पर ऐसा भी नहीं हो, कि उनका अपने ही घर में दम घुटने लगे। आख़िर लड़कियों को लेकर आशंकाओं में झूलता क्यों रहता है हिन्दी समाज ? क्यों उनको लड़कों से कमतर समझा जाए ? क्या लड़कियों ने आज यह साबित नहीं कर दिया है कि वे लड़कों से कम नहीं, बल्कि कुछ ज़्यादा हैं। गुड्डो भाग गई इस कहानी में पर हमारे समाज में तो रोज़ कितनी ही गुड्डो भागती हैं अपने जेल जैसे घर को छोड़कर और फिर उनका कुछ भी अता – पता नहीं मिलता। गुड्डो के भाग जाने पर मेरा मन अनिष्ट की आशंका से काँप उठा, पर थैंक्स गॉड। कुछ भी ऐसा – वैसा नहीं हुआ और गुड्डो सही – सलामत घर आ गई। बड़ों को चाहिए कि बच्चों के साथ बड़ी समझदारी और ऐहतियात से पेश आएँ, क्योंकि युवा को तो कैद किया जा सकता है पर युवा मन के अरमानों को नहीं।

**-नवनीत कुमार झा, हरिहरपुर, दरभंगा, बिहार**

***

### हर अंक पहले से बेहतर

विभोम-स्वर और शिवना साहित्यिकी दोनों पत्रिकाएँ नियमित प्राप्त हो रही हैं। एक बात दिल से निकल रही है कि पत्रिका का बेसब्री से इंतज़ार रहता है और पत्रिकाएँ पढ़ने के बाद स्वयं को बेहद समृद्ध महसूस करने लगती हूँ। एक-एक कहानी, कविता, लेख रुचिकर एवं स्तरीय होते हैं। हर अंक पहले से बेहतर आ रहा है। पूरी टीम को बहुत- बहुत बधाई!!

**अर्पणा गोविन्द, सेंट लुईस, मिज़ूरी, यूएसए**

***

### लेखकों से अनुरोध

'विभोम-स्वर' में सभी लेखकों का स्वागत है। अपनी मौलिक, अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी। रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा। बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फ़ाइल अथवा वर्ड की फ़ाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीऍफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें, इस प्रकार की रचनाएँ विचार में नहीं ली जाएँगी। रचनाओं की साफ़्ट कॉपी ही ईमेल के द्वारा भेजें, डाक द्वारा हार्ड कॉपी नहीं भेजें, उसे प्रकाशित करना अथवा आपको वापस कर पाना हमारे लिए संभव नहीं होगा। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। पुस्तक समीक्षाओं का स्वागत है, समीक्षाएँ अधिक लम्बी नहीं हों, सारगर्भित हों। समीक्षाओं के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, लेखक का चित्र तथा प्रकाशन संबंधी आवश्यक जानकारियाँ भी अवश्य भेजें। एक अंक में आपकी किसी भी विधा की रचना (समीक्षा के अलावा) यदि प्रकाशित हो चुकी है तो अगली रचना के लिए तीन अंकों की प्रतीक्षा करें। एक बार में अपनी एक ही विधा की रचना भेजें, एक साथ कई विधाओं में अपनी रचनाएँ न भेजें। रचनाएँ भेजने से पूर्व एक बार पत्रिका में प्रकाशित हो रही रचनाओं को अवश्य देखें। रचना भेजने के बाद स्वीकृति हेतु प्रतीक्षा करें, बार-बार ईमेल नहीं करें, चूँकि पत्रिका त्रैमासिक है अत: कई बार किसी रचना को स्वीकृत करने तथा उसे अंक में प्रकाशित करने के बीच कुछ अंतराल हो सकता है।

धन्यवाद

संपादक

vibhom.swar@gmail.com

साक्षात्कार

# मॉरीशस में हिन्दी भाषा का कोई भी इतिहास आर्यसमाज के हिन्दी प्रचार का उल्लेख किये बिना लिखा नहीं जा सकता

( डॉ. उदय नारायण गंगू के साथ सुधा ओम ढींगरा की बातचीत )

*मॉरीशस में आर्य समाज द्वारा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करने वाले डॉ. उदय नारायण गंगू ऋषि दयानंद इंस्टिट्यूट के डीन, आर्य सभा मॉरीशस के प्रधान, 'आर्योदय' पत्र के मुख्य संपादक, आर्य समाज के विद्यालयों में प्रवेशिका, परिचय, प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा, एस.सी., एच.एस.सी., विद्या विनोद, विद्या रत्न, विद्या विशारद, विद्यावाचस्पति, सिद्धांत भास्कर, सिद्धांत शास्त्री, सिद्धांत वाचस्पति और अब बी.ए. और एम.ए. के शिक्षण-कार्य में रत, महात्मा गाँधी संस्थान में, क्रमशः शिक्षाधिकारी, हिन्दी व्याख्याता, वरिष्ठ व्याख्याता के रूप में भी कार्यरत हैं। डॉ. गंगू ने भोजपुरी पर भी बहुत काम किया है। मेरी उनसे हिन्दी, भोजपुरी और आर्य समाज को लेकर ऑन लाइन बातचीत हुई –*

डॉ. उदय नारायण गंगू जी ऋषि दयानंद इंस्टिट्यूट के डीन, आर्य सभा मॉरीशस के प्रधान, 'आर्योदय' पत्र के मुख्य संपादक, आर्य समाज के विद्यालयों में प्रवेशिका, परिचय, प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा, एस.सी., एच.एस.सी., विद्या विनोद, विद्या रत्न, विद्या विशारद, विद्यावाचस्पति, सिद्धांत भास्कर, सिद्धांत शास्त्री, सिद्धांत वाचस्पति और अब बी.ए. और एम.ए. के शिक्षण-कार्य में रत, सन् 1981 से महात्मा गाँधी संस्थान में, क्रमशः शिक्षाधिकारी, हिन्दी व्याख्याता, वरिष्ठ व्याख्याता के रूप में कार्यरत हैं।

डॉ. गंगू जी की प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें हैं-एक समर्पित जीवन-जीवनी के अंतर्गत-मॉरीशस के निर्माता : सर शिवसागर रामगुलाम-जीवनी, स्वाधीनता के अमर सेनानी : सुखदेव विष्णुदयाल-जीवनी, एक प्रेरक व्यक्तित्व : श्रीमती धनवंती रामचरण-जीवनी,वेद-पीयूष-निबंध संग्रह, मॉरीशस का भोजपुरी लोक साहित्य - शोध-प्रबंध और अंग्रेज़ी पुस्तकें हैं-Hindu Names in Mauritius, Hinduism for H.S.C.,Light of Truth (Abridged Version), Arya Samaj Movement in Mauritius and South Africa, Vedic Marriage Rites in Mauritius, Daily Prayer, Samarpan इत्यादि। स्थानीय और भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में सैकड़ों लेख प्रकाशित।

संपर्क: Michael Leal Avenue, Near Mw Lane, (Pailles Arya Samaj), Pailles, Mauritius.
ईमेल: aryamu@intnet.mu

**प्रश्न :** *मॉरीशस के भोजपुरी लोक साहित्य पर शोध-कार्य करने का विचार कब और कैसे आया?*

**उत्तर :** इस प्रश्न का उत्तर देने से पहले मैं यह बताना चाहूँगा कि मेरी मातृभाषा भोजपुरी रही है। पूज्या माता जी इसी बोली में लोरियाँ गाकर मुझे अपनी गोद में सुलाती रहीं। मैं इसी बोली की ध्वनि सुनकर पला-बढ़ा। मैं दिसम्बर, सन् 1981 ई0 में मॉरीशस के मोका ग्राम में स्थित 'महात्मा गाँधी संस्थान' के भाषा विभाग में कार्य-रत हुआ। हिन्दी भाषा-शिक्षण से संबंधित विविध कार्य करने के पश्चात् मुझे कुछ वर्षों तक भोजपुरी लोक साहित्य विभाग में योगदान देना पड़ा। उन दिनों इस संस्थान के भोजपुरी विभाग में भोजपुरी, हिन्दी और अंग्रेज़ी में एक त्रिभाषी शब्द-कोश का निर्माण कार्य हो रहा था। इस कार्य के लिए मुझे भोजपुरी मुहावरों, कहावतों, पहेलियों, लोककथाओं, लोकगीतों आदि का संग्रह करना पड़ा। मैंने भोजपुरी लोक साहित्य की अनेक विद्याओं को लिपिबद्ध किया तथा इन विधाओं से भोजपुरी के कई हज़ार शब्द संकलित किये। जब मैं महात्मा गाँधी संस्थान के भोजपुरी लोक साहित्य विभाग में कार्यरत था तब मेरा संपर्क जीवाजी विश्वविद्यालय', ग्वालियर की प्रोफ़ेसर शशिप्रभा श्रीवास्तव से हुआ। उन दिनों वे मॉरीशस-यात्रा पर आई हुई थीं। मैंने अपनी संगृहीत सामग्रियाँ उन्हें दिखाईं। उन्होंने मुझे पीएँच. डी के लिए शोध करने की प्रेरणा दी। मैं भारत पहुँचा और उनके मार्ग-दर्शन में 'मॉरीशस के भोजपुरी लोक साहित्य का भारतीय संस्कृति के सन्दर्भ में अनुशीलन' विषय पर शोध-कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। चार वर्षों के शोध के फलस्वरूप मैंने पीएँच. डी की उपाधि प्राप्त की। महात्मा गाँधी संस्थान द्वारा मेरा शोध-प्रबन्ध पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हुआ।

**प्रश्न :** *आर्यसमाज ने मॉरीशस में हिन्दी को प्रोत्साहित करने के लिए क्या भूमिका निभाई ?*

**उत्तर :** हिन्दी के प्रचार-प्रसार में आर्यसमाज की भूमिका बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। यह समाज अपने स्थापना-काल से अब तक हिन्दी पढ़ाई पर बल देता आया है। यहाँ यह बताना समीचीन होगा कि सन् 1934 से 1915 तक भारतीय रोटी-रोज़ी की खोज में शर्तबन्द श्रमिक के रूप में मॉरीशस आते रहे। चूँकि अधिकांश जनों की भाषा भोजपुरी थी, अतः यही भाषा भारतीय मूल के लोगों की बोलचाल की भाषा बन गई। कुछेक पढ़े-लिखे श्रमिक रात्रि-काल में 'फूस के बने बैठका' में रामचरितमानस का गान करते थे और सत्संग में भाग लेने वालों को भोजपुरी में ही दोहे-चौपाइयों को समझाया करते थे। बीसवीं सदी के प्रथम दशक में महर्षि दयानन्दकृत 'सत्यार्थप्रकाश' ने इस देश में आर्यसमाज की स्थापना की। बात सन् 1902 की है। बंगाल से आई हुई एक टुकड़ी भारत लौट रही थी। उस सेना में

भोलानाथ तिवारी नाम का एक हवलदार था, जिसके पास 'सत्यार्थप्रकाश' की एक प्रति थी। उसने वह पुस्तक अपने ग्वाले, भिखारी-सिंह को दे दी। चूँकि भिखारीसिंह वह पुस्तक पढ़ने में असमर्थ थे, अत: उन्होंने खेमलाल लाला नामक व्यक्ति को पुस्तक दे दी। खेमलाल जी पुस्तक पढ़कर बड़े ही प्रभावित हुए। उन्होंने अपने दो अन्य मित्रों को वह पुस्तक बताई। फलत: 'सत्यार्थप्रकाश' पर सत्संग होने लगा। इसी ग्रन्थ के पठन-पाठन से यहाँ खड़ी बोली हिन्दी का प्रचार हुआ। खड़ी बोली हिन्दी आर्य समाजियों की भाषा बन गई। सन् 1901 के अक्तूबर मास में युवा बारिस्टर मोहनदास कर्मचन्द गाँधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटते समय कुछ दिनों के लिए मॉरीशस में रुक गए थे। उन्होंने यहाँ के गोरे पूँजीपतियों को अनपढ़ भारतीय श्रमिकों के प्रति घोर अन्याय करते पाया। मॉरीशस में बसे भारतवंशियों का कोई रक्षक न था। सन् 1907 में गाँधी जी ने मणिलाल मगनलाल नाम के एक वकील को हिन्दुओं की रक्षा के लिए मॉरीशस भेजा। बारिस्टर मणिलाल ने खेमलाल लाला, गुरुप्रसाद दलजीतलाल, गयासिंह आदि व्यक्तियों के सहयोग से मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुई में 8 मई 1911 में आर्यसमाज की स्थापना की और हिन्दी में धुआँधार भाषण देकर नवजागरण उत्पन्न किया। सन् 1911 में भारत लौटने पर उन्होंने एक प्रकाण्ड विद्वान, डॉक्टर चिरंजीव भारद्वाज को सपरिवार मॉरीशस भेजा। डॉक्टर चिरंजीव भारद्वाज दिवसकाल में मरीज़ों की चिकित्सा करते थे और रात्रि तथा सप्ताहान्त में घूम-घूम कर हिन्दी में भाषण करते थे। उनकी पत्नी, सुमंगली देवी लड़कियों की पढ़ाई के लिए कन्या पाठशालाओं की स्थापना करती थीं। इस तरह आर्यसमाज ने अपनी स्थापना के आरम्भिक वर्षों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार किया। सन् 1950 तक आर्यसमाज ने मॉरीशस के गाँव-गाँव और शहर-शहर में सैकड़ों हिन्दी पाठशालाएँ खोल दीं। आर्यसमाज के आरम्भिक चार दशकों में भारत से दर्जनों आर्यसमाजी विद्वान मॉरीशस आए और लम्बे समय तक यहाँ रहकर वैदिक धर्म के साथ ही हिन्दी का प्रचार-प्रसार करते रहे। उन विद्वानों से प्रभावित होकर कई युवक उच्च पढ़ाई के लिए भारत गए और डी0ए0वी0 कॉलिजों में अध्ययन करके हिन्दी के योग्य विद्वान बनकर स्वदेश लौटे। उन्होंने अखिल मॉरीशस में हिन्दी के वातावरण का निर्माण किया। उन विद्वानों में पंडित काशीनाथ किष्टो, पंडित वेणीमाधव सतीराम, पंडित वासुदेव विष्णुदयाल, पंडित सुखदेव रामप्यार, पं0 लक्ष्मणदत्त शास्त्री आदि के नाम गर्व से स्मरण किये जाते हैं, जिन्होंने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अथक प्रयास किया। गत एक सदी से आर्यसमाज अपनी कार्यकारिणी समिति में मात्र हिन्दी का प्रयोग करता आया है। सभी कार्यवृत्तान्त हिन्दी में लिखे जाते हैं। आर्यसमाज की सभी शाखाओं का केन्द्र 'आर्यसभा' है, जो हिन्दी की कई परीक्षाओं का संचालन करके छात्र-छात्राओं को प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालयीय स्तर की पढ़ाई के लिए प्रेरित करती रही है। मॉरीशस में आर्यसमाज ही मात्र एक ऐसी हिन्दू संस्था है, जो 1912 से आज तक अनेक हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन करती आई है। इन पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी भाषा का खूब प्रचार किया गया। आर्यसमाजी विद्वानों ने अपनी लेखनी के माध्यम से विपुल मात्रा में हिन्दी साहित्य का वर्धन किया है। मॉरीशस में हिन्दी भाषा का कोई भी इतिहास आर्यसमाज के हिन्दी प्रचार का उल्लेख किए बिना लिखा नहीं जा सकता।

**प्रश्न :** *आप सन् 1964 से हिन्दी अध्यापक के रूप में कार्य-रत हैं। विदेशों में हिन्दी पढ़ाना इतना सरल नहीं है। क्या-क्या चुनौतियाँ आपको आईं ?*

**उत्तर :** पहले मैं इस बात पर बल देना चाहूँगा कि मॉरीशस यूरोपीय या अफ्रीकी देशों जैसा नहीं है। सन् 1970 के दशक में श्रीमती इंदिरा गाँधी जब मॉरीशस आई थीं, तब उन्होंने मॉरीशस को 'लघु भारत' कहा था, क्योंकि उन्होंने यहाँ भारतीय संस्कृति का वर्चस्व देखा था। उन्होंने मॉरीशस को विदेश माना ही नहीं था। चूँकि पूर्वजों के प्रयास से इस देश में हिन्दी का वातावरण निर्मित था, इसलिए जब मैं हिन्दी अध्यापक बना तब मेरे सामने चुनौतियाँ नहीं के बराबर थीं। मैंने प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालयीय, सभी स्तरों पर शिक्षण-कार्य किया। पढ़ने वाले अधिकांश छात्र-छात्राएँ भोजपुरी भाषी थे। उन बच्चों के अभिभावकों को अपनी भाषा और संस्कृति पर गर्व था। इसलिए वे अपने बच्चों को हिन्दी सीखने की प्रेरणा देते थे। जो हिन्दू माता-पिता भोजपुरी भाषी नहीं थे, वे अपने बच्चों को हिन्दी पढ़ने से मना करते थे। मुझे ऐसे माता-पिताओं को समझाना पड़ता था। घर पर क्रिओल बोलने वाले बच्चों को देवनागरी वर्णों का सही उच्चारण करने में कठिनाई होती थी। उन्हें महाप्राण वर्णों का शुद्ध उच्चारण सिखाने में मुझे काफ़ी मेहनत करनी पड़ती थी। बहुत से ऐसे भी गैर हिन्दू थे, जो भारतीय भाषाओं को हेय दृष्टि से देखते थे। भारतीय भाषाओं के अध्यापकों को ऐसे लोगों का सामना करना पड़ता था। आज परिस्थिति बदलती जा रही है। वर्तमान में बहुत से ऐसे हिन्दू माता-पिता हैं, जो यह समझते हैं कि बच्चों को हिन्दी सीखना आवश्यक नहीं है। हिन्दी शिक्षकों के सामने अनेक चुनौतियाँ आ खड़ी हुई हैं। पुराने ज़माने में स्वैच्छिक संस्थाओं में हिन्दी सीखने वालों की संख्या प्रशंसनीय थी। हिन्दी के प्रति अनुराग पुन: पैदा करना है।

**प्रश्न :** *आर्यसमाज के विद्यालयों में आप हिन्दी-शिक्षण-कार्य में रत रहे हैं। क्या भारतीय मूल के लोगों के अतिरिक्त आपने अन्य स्थानीय लोगों को भी हिन्दी पढ़ाई है?*

**उत्तर :** जी हाँ। परन्तु हिन्दी सीखने वाले गैर हिन्दुओं की संख्या न्यून रही है। न केवल आर्यसमाज में, वरन् 'महात्मा गाँधी संस्थान' और 'रॉयल कॉलिज क्यूर्पिप' में भी मुझे कई फ्रेंच भाषियों को हिन्दी सिखाने का मौका मिला है। चूँकि उन्हें हिन्दी द्वितीय भाषा के रूप में सिखानी पड़ी, इसलिए मुझे विशेष श्रम करने की आवश्यकता पड़ी।

**प्रश्न :** *आपने सन् 1981से महात्मा गाँधी संस्थान में क्रमश: शिक्षाधिकारी, हिन्दी व्याख्याता, वरिष्ठ व्याख्याता के रूप में कार्य किया है। हम जानना चाहते हैं कि महात्मा गाँधी संस्थान मॉरीशस में क्या-क्या कार्य करता है?*

**उत्तर :** महात्मा गाँधी संस्थान को अपने संविधान के अनुसार भारतीय भाषाओं के शिक्षण के साथ ही संगीत एवं ललित कलाओं की भी शिक्षा देनी पड़ती है। इस

संस्थान का प्रमुख उद्देश्य भारतीय संस्कृति को बढ़ावा देना है। इस संस्थान द्वारा एक विशाल माध्यमिक विद्यालय का संचालन किया जाता है, जिसमें विविध विषयों की पढ़ाई 'हायर स्कूल सर्टिफ़िकेट' स्तर तक होती है। 'स्कूल सर्टिफ़िकेट' एवं 'हायर स्कूल सर्टिफ़िकेट'की परीक्षाएँ कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से ली जाती हैं। इस संस्थान के अनेक विभाग हैं। अनेक विषयों में बी0ए0 और एम0ए0 स्तर तक की पढ़ाई होती है। महात्मा गाँधी संस्थान का एक संग्रहालय है, जिसमें भारतीय आप्रवासियों से संबंधित हज़ारों दस्तावेज़ सुरक्षित रखे गए हैं। यहाँ शोध-कार्य होता रहता है। इस संस्थान का एक विशाल सभागार भी है, जिसमें अक्सर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन होता रहता है। इस सभागार में समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का भी आयोजन होता है। प्रति वर्ष दो अक्तूबर को बड़े ही उत्साहवर्धक वातावरण में गाँधी जयन्ती मनाई जाती है। महात्मा गाँधी संस्थान का एक विशाल प्रेस भी है। इसके द्वारा अनेक भाषाओं में पुस्तकें एवं पत्र-पत्रिकाएँ नियमित रूप से छपती रहती हैं। इस संस्थान के 'सर्जनात्मक लेखन एवं प्रकाशन विभाग' की ओर से बच्चों के लिए 'रिमझिम' और साहित्य-प्रेमियों के लिए 'वसन्त' पत्रिका का प्रकाशन होता है। यह विभाग नवोदित लेखकों को भी साहित्य-सृजन की प्रेरणा देता है।

**प्रश्न :** *मॉरीशस में हिन्दी की स्थिति कैसी है ? क्या युवा पीढ़ी की इसके प्रति रुचि है ?*

**उत्तर :** मॉरीशस में हिन्दी की स्थिति संतोषजनक है। यद्यपि हिन्दी इस समय रोज़गार की भाषा नहीं है, जिसके कारण सभी माता-पिता अपने बच्चों को हिन्दी सीखने की प्रेरणा नहीं देते, तथापि ऐसे भी परिवार हैं, जिन्हें अपनी संस्कृति की रक्षा की चिन्ता है। शायद ही कोई इस बात से अवगत न हो कि भाषा संस्कृति की वाहिनी है। मॉरीशस में 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' की स्थापना सन् 1934 में हुई, जिसका एक मात्र उद्देश्य शुद्ध हिन्दी का प्रचार-प्रसार करना रहा है। इस संस्था का आदर्श वाक्य है- ''हिन्दी गई तो संस्कृति गई।'' आर्य सभा मॉरीशस द्वारा संचालित सैकड़ों सायंकालीन और रविवारीय हिन्दी पाठशालाओं में प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर हिन्दी का शिक्षण-परीक्षण-कार्य नियमित रूप से होता है। आर्य सभा अपने डी0ए0वी0 कॉलिजों में हिन्दी की माध्यमिक पढ़ाई और 'ऋषि दयानन्द संस्थान' में बी0ए0,एम0ए0, 'सिद्धान्त भास्कर', 'सिद्धान्त शास्त्री', 'सिद्धान्त वाचस्पति', 'धर्म भूषण', 'धर्म रत्न' आदि परीक्षाओं के लिए छात्र-छात्राओं को हिन्दी भाषा और हिन्दी के माध्यम से धार्मिक शिक्षण करती है। सरकारी प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में सैकड़ों अध्यापक-अध्यापिकाएँ हिन्दी पढ़ा रहे हैं। नई पीढ़ी के जो लोग हिन्दी नहीं पढ़ रहे हैं, वे भी हिन्दी फ़िल्मों और फ़िल्मी गीतों के द्वारा हिन्दी का सामान्य ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। रेडियो-टेलीविजन पर चौबीसों घण्टे हिन्दी गूंजित होती रहती है। महात्मा गाँधी संस्थान द्वारा प्रकाशित 'रिमझिम' और 'वसन्त' पत्रिका हिन्दी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'पंकज' और आर्य सभा द्वारा निकलने वाले 'आर्योदय' आदि पत्रों पर पुरानी और नई फीढ़ी के बीसियों लेखक-लेखिकाओं की रचनाएँ छपती रहती हैं। स्थापित साहित्यकारों की विविध विधाओं में लिखित हिन्दी पुस्तकें प्रकाश में आती रहती हैं। कहना उचित होगा कि मॉरीशस में हिन्दी की स्थिति सन्तोषजनक है।

**प्रश्न :** *युवा पीढ़ी को हिन्दी के प्रति आकृष्ट करने हेतु क्या किया जा रहा है?*

**उत्तर :** बहुविध प्रयास किये जा रहे हैं। सभी प्राथमिक एवं माध्यमिक सरकारी विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण 'हायर स्कूल सर्टिफ़िकेट' स्तर तक हो रहा है। आर्यसभा अपने दो सौ हिन्दी पाठशालाओं में हिन्दी का शिक्षण प्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा कर रही है। 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा संचालित 'परिचय', 'प्रथमा', 'मध्यमा' और 'उत्तमा' परीक्षाओं में प्रतिवर्ष हज़ारों छात्र-छात्राओं को बिठाने का प्रयास करती आ रही है। अनेक स्वैच्छिक संस्थाओं की ओर से हिन्दी की पढ़ाई हो रही है। 'ऋषि दयानन्द संस्थान' और 'महात्मा गाँधी संस्थान' में बी0ए0 और एम0ए0 की परीक्षाओं में भाग लेने के लिए अभिभावक अपने बच्चों को प्रेरणा दे रहे हैं। भारतीय उच्चायोग एवं हिन्दी संगठन की ओर से हिन्दी में सांस्कृतिक कार्यक्रम और साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन होता रहता है। मॉरीशस के रेडियो-टेलीविजन से चौबीसों घण्टे हिन्दी में कार्यक्रम प्रस्तुत हो रहे हैं। नई पीढ़ी को पठन-लेखन में रुचि पैदा करने के लिए हिन्दी-प्रेमी पूर्व से कहीं अधिक प्रयत्नशील हैं।

**प्रश्न :** *आपकी उपलब्धियाँ क्या हैं?*

**उत्तर :** मेरी उपलब्धियाँ मेरे वे छात्र-छात्राएँ हैं, जिन्होंने हिन्दी-सेवा का व्रत धारण किया है। बावन वर्षों तक मैंने शिक्षण-कार्य किया है। प्राथमिक स्तर से प्रारम्भ करके विश्वविद्यालयीय स्तर तक हिन्दी पढ़ाई है। मुझे इस बात का सन्तोष है कि मेरे छात्र-छात्राओं ने मेरा अनुकरण किया है। वे डिग्रियाँ प्राप्त करके विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी का प्रचार कर रहे हैं। सैकड़ों लोग हिन्दी शिक्षण-कार्य में संलग्न हैं। कुछ लोग जन-संचार के क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। बहुत से लोग पुरोहिताई कार्य करके हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। कुछ लोग साहित्य सृजन-कार्य में प्रवृत्त हैं। मेरे छात्र-छात्राएँ मुझे 'गुरु जी' तो कहते ही हैं। उनके माता-पिता भी मुझे सम्मानपूर्वक इसी शब्द से सम्बोधित करते हैं। हिन्दी शिक्षण के साथ ही मेरी हिन्दी रचनाओं ने भी मुझे प्रतिष्ठित किया। समय-समय पर मेरी पुस्तकों का विमोचन गण्यमान्य जनों द्वारा होता रहा। सन् 1989 में मेरी एक पुस्तक - 'मॉरीशस के निर्माता:सर शिवसागर रामगुलाम' का लोकार्पण 'भारतीय संस्कृति-साहित्य कला संस्थान', जयपुर, भारत द्वारा हुआ। उस विमोचन-समारोह में तत्कालीन परिवहन मन्त्री, माननीय रामकिशन जी वर्मा के कर-कमलों द्वारा ताम्रपत्र प्रदान करके मुझे सम्मानित किया गया। वास्तव में यह सम्मान मेरा नहीं था, प्रत्युत हिन्दी भाषा का था। आज तक मुझे जो भी राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय उपाधियाँ दी ही हैं, वे सब हिन्दी-सेवा के कारण हैं। ये मेरी उपलब्धियाँ हैं।

*डॉ. उदय नारायण गंगू जी से बातचीत करके मुझे मॉरीशस में आर्य समाज की भूमिका, हिन्दी और भोजपुरी भाषाओं के बारे में विस्तृत जानकारी मिली। आभारी हूँ उनकी।*

***

# ढोर

डॉ. अचला नागर

''संतो दादी फिर क्या किया हुक्म सिंह बाबा ने ?''

''अरे लाल, वो तो लोहे से बने थे... सैर से गाम आते ई जो एक घर से धुआँ - सा उठता देखा- फौरन जान गए डकैती पड़ी है। ज़रा और आगे को बढ़े तो बात नक्की हो गई कि ठाकुर साब की हवेली में आग लगा दी है मरों ने... अन्दूक - बन्दूक तो बिनके लगी ई रहती थी हरदम। क्या किया बिन्ने, दबे पाँव सर्र से एक पेड़ पर चढ़ गए, जिसकी एक डाल ठाकुर साब की हवेली से भिड़ती थी और बस कूद पड़े हवेली की छत पे। अब वहीं से निशाना साध गरज कर बोले, ''जिसका काल बिसे बुला रिया है चलाये गोली''- फिर नेक आँगन की तरफ उझक के बोले - ''बाहर की फिकर को छोड़ के आग बुझाने का जतन करो, हुकम सिंह बाबा का सेर गरजन सुन के डकैतों में सन्नाटा छा गया.... बिनके तो नाम से ई वो थर्राते थे - असल में तो जब बिन्हें ख़बर मिली कि हुकम सिंह गाम से बाहर गए हैं, तभी उन्होंने मौक़ा अच्छा देखकर डकैती सोची.... मगर... खैर, हाँ तो बन्सी बेटा जे घड़ी डाकू कासी सिंह की परीक्षा की घड़ी बन गई... गोली दागे तो हुकम सिंह के अचूक निशाने का बिसे इलम था.... न दागे तो संगी - साथी बिसे कायर मानकर बिसी पर चढ़ बैठें। पल दो पल विचार सोच कर कासी ने हुकम सिंह की तरफ को निसाना साध के घोड़ा दबाई दिया बन्दूक का बस, फिर तो लालन दोनों तरफ से गोलियों की जो बरखा हुई है वो कोई भुलाने वाली बात नई। इकल्ले हुकम सिंह अपने अचूक निशाने से डकैतों को लिटाते ही चले गए। जभी उन्हें लगा कि अब बिनके कने आखरी गोली बची है - अगर जे बात दुसमनों ने जान ली कोई तरह, तो उन्हें देखते - ई - देखते भून डाला जाएगा।....आखिर को महावीर का ध्यान करके जिन्होंने कासी की तरफ निसाना जे सोचकर साधा कि अगर जे मर गया तो बाकी के पाँव तो आप ही से उखड़ जाएँगे, लेकिन बिनके घोड़ा दबाने से पैले ई एक गोली आ के बिनकी जाँघ में लगी वो लड़खड़ाये, मगर फिर सँभल के गोली छोड़ ही दी जो ठीक निशाने पे लगी। कासी मारा गया और डकैतों में भगदड़ पड़ गई। अब तो गामवाले भी घरों से लट्ठ ले - लेकर निकल पड़े और भागते डकैतों की खूब धुनाई की.....''

''दादी, हुकम सिंह बाबा की जाँघ में जो गोली....'' अरे बेटा, ऐसी न जाने कित्ती गोलियाँ लगी थीं बिनको, सरीर में घाव ही घाव भरे पड़े थे, वो गाम की ही नहीं, देस की आन पे मिटने वालों में थे। गोरों को मार भगाने वाली भारी लड़ाई के वो भी सिपाई थे। जाने कित्ती बार तो जेल गए कित्ते दुःख उठाए....

''इसीलिए तो दादी.... बाबा का कितना नाम है। आज हमारे स्कूल में उनकी मूर्ति स्थापित की गई थी, तभी तो शहर से बहुत सारे बड़े -बड़े नेता आए थे। मंत्री जी भी थे। उन्होंने अपने भाषण में यही कहा कि त्याग और वीरता का जैसा जीवन हुकम सिंह बाबा ने जिया वह एक आदर्श है। हम बच्चों को भी उन्हीं की तरह साहसी और ईमानदार बन कर अपने घर, गाँव और देश की रक्षा करनी चाहिए।''

''एक बात बताओ संतो दादी, इतना अच्छा आदमी जब मरा होगा तो गाँव वाले, उनके

डॉ. अचला नागर ने कई फ़िल्मों की पटकथा एवं कहानी लिखी हैं जिनमें प्रमुख हैं - निकाह, आख़िर क्यों, बाग़बान, बाबुल, ईश्वर, मेरा पति सिर्फ मेरा है, निगाहें, नगीना, सदा सुहागन, ईश्वर आदि। आपको साहित्य भूषण पुरस्कार, हिन्दी उर्दू साहित्य एवार्ड कमेटी सम्मान, यशपाल अनुशंसा सम्मान, साहित्य शिरोमणि सम्मान प्राप्त हो चुके हैं। आपकी प्रकाशित कृतियाँ हैं- नायक-खलनायक, बोल मेरी मछली (कहानी संग्रह), बाबूजी बेटाजी एंड कंपनी (संस्मरण), छल (उपन्यास)।
संपर्क : क्लासिक अपार्टमेन्ट, 3डी/603 पाटलीपुत्र नगर, ओशियारा, जोगेश्वरी (पश्चिम) मुंबई

घर वाले... सब... तब तो खूब रोए होंगे... धूम-धाम से उनके अंतिम काम किए होंगे...? है न...?''

सुनकर संतो मौन रहीं। बालक ने फिर हड़काया, ''दादी बताओ न..।''

''बेटा, जब वो गुज़रे, मैं याँ थी नहीं... अपने भईया के घर चली गई थी। सो मुझे ठीक - ठाक कुछ खबर नहीं। वैसे सुनी तो जेई थी कि कारज बड़ी धूम - धाम से हुए थे बिनके.... अच्छा... अब तू उठ लालन, मुझे ऊँघ आ रई है.... आया...''

लेकिन सौड़ में जाने के बाद भी सच तो यह था कि संतो की आँखों में ऊँघ का नामोनिशान नहीं था। हुकम सिंह की कद्दावर सुदर्शन छवि जैसे यादों के छपाके मार - मारकर सोने नहीं दे रही थी उनको....

जब ब्याह कर आई थीं इस गाँव में तो जहाँ देखो हुकम सिंह के चर्चे.... उसके पौरुष के, कद - काठी के.... बहादुरी के, सुनकर संतो के किशोर मन में हूक - सी उठा करती थी - कभी देखें तो सही कौन गबरू है वह ? लेकिन यह इच्छा कभी पूरी होगी और वह भी इतने अटपटे ढंग से, इस बात की उसे कल्पना भी न थी... जाड़ों के दिन... महावटी बादलों के कारण दोपहर ढले से ही साँझ घिर आई थी। गोटे लगे पीले पोंमचे से मुँह ढँके रोज़ की तरह पानी लेने कुएँ पर जा पहुँची वह। अभी उसकी कलसिया अधबर में ही थी कि पास कहीं से आती बनैले जीव की घुर्राहट ने हाथों से डोर छुड़ा दी। खड़ - खड़ करती गराड़ी से होती कलसिया खट्ट से पेंदी में जा बैठी और संतो दम साधती यह जा, वह जा, लेकिन चार कदम पर ही उसकी हमजोलियों ने उसे इस हाल में देखा तो बाँह थाम ली - ''अरी, काँ को भागी जा रही है बवरिया ?''

''अरी बोल न....''

''व... वो... उत माँऊँ.... बनैला जीव...'' हाँफते - हाँफते मुश्किल से इतना ही कह पाई थी संतो।

''बनैला जीव... हाय राम, कुइयाँ पर क्या करने आया है नासपीटा... चल देखें....ढ्ढ''

''न, मैं नई जिज्जी....'' संतो मचल गई।

''अरी, आ तो डरपोकनी कहीं की।'' फिर हरदेई जिज्जी आगे - आगे संतो को बाँह से पकड़े हुए, और पीछे - पीछे सारी लुगाइयाँ, अब बता, काँ को है मरा बनैला ?''

''व.... वो.... उत माँऊँ से बोला था।'' सुनते ही सबकी सब मुँह पे पल्लू दबा कर खिलखिला पड़ी थीं। हैरान - सी संतो सबको देखे जा रही थी, तभी हरदेई जिज्जी उसे जबरन ढ़केलती उसी तरफ ले चलीं जिधर से बनैला का गर्जन सुनाई पड़ा था। संतो की ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे, मगर मुँह से वह कुछ न बोली, ''संतो ले देख अपने बनैले को.... अरे, हुकम भईया....'' सामने एक सुदर्शन कद्दावर जवान - जहान पराये मर्द को देखकर यूँ ही संतो लाज से दोहरी हो रही थी, ऊपर से वह हरदेई जिज्जी और तमाशा किये जा रहीं थीं..... ''जि.... ज्जी'' कहती संतो हाथ छुड़ाने को कसमसाई मगर तब तक अपनी बड़ी - बड़ी सुर्ख आँखें खोलकर वह गबरू भी इधर - उधर बिट बिट ताकने लगा था.... और घूँघट नीचे सरकाते - सरकाते भी पल भर को संतो की आँखें उन आँखों से मिल ही गई थीं। शरमाकर संतो जिज्जी की ओट में होने लगी तो उसे खींचकर और भी सामने करते हुए वह बोली, ''हुकम भईया, जे हमारी छोटी - सी नई नवेली भौजी है.... गोमा काकी की छोटी बहू।''

''अच्छा - अच्छा, अपने बल्लो के घर से ....?''

''हाँ, और बिचारी अभी जे भी नई जाने की जे तुम्हारे सोने का ठीया है और सोना भी कैसा कि घुर्राटे जंगली जिनावरों को भी मात करें। जे बिचारी आज इधर इकली आ निकली और तुम्हारी आवाज़ सुन जान छुड़ाकर भागी। सो मैंने सोची कि एक बेर तुमसे मिला के इसके जी का डर निकाल ही देना चंइए.... क्यों ?''

अपनी सास से संतो बहुत डरती थी.... तिनके बराबर चूक हो जाए तो ढेरों कहनी.... अनकहनी सुना डालती थी। वैसा ही था उसका लाड़ला बेटा भी। प्यार भरे बोलों को संतो के कान तरस कर रह जाते थे। फूल सी नाज़ुक देह, दिन भर का धंधा और ऊपर से दुनिया भर की जली - कटी.... ऐसी ही रोई - झींकी संतो एक दिन जब कुइयाँ पहुँची तो देखा कोई जनी नहीं आई। कलसिया किसी तरह ढीले - ढाले हाथों ऊपर खींची और गागर में पानी ओझ के गागर उठाने लगी कि हाथ से छूटकर गागर भद्द... और संतो का जिया धक्क.... अब क्या हो ? सास का मुँह तो पहले से ही फूला है, अब अगर खाली हाथ जाएगी तो सीधे ''परलय'' ही आएगी।.... तब ? ''वो'' भी तो ऐसा ही है मरा... निठल्ला कहीं का.... सारे दिन जुए - सट्टे के आलावा दूसरा काम नहीं। अरे, तभी तो सास ऐसे तीते बोल सुना देती है। जेठजी की तरह अगर कमाऊ पूत होता तो मजाल थी सास की, कुछ कह जाती। अरे, अपने मर्द पर ही औरत इठला सकती है, जिठानी जी की टेंट में जब देखो रुपिया - धेली लगी ही रहती है। संतो के मुँह से एक लम्बी सुलगती - सी साँस निकल गई .... हाय.... आज अगर उसके पास एक पावली भी होती तो किसी बालक को दौड़ाकर मँगा लेती नई गागर.... लेकिन अब क्या हो....

मारे बेबसी के संतो की आँखों से आँसू चू पड़े। पल्ले से आँखे पोंछ दूसरे हाथ से कलसिया उठा जैसे ही संतो ने डग बढ़ाया तो सामने हुकम सिंह को देखकर पाँव ठिठक गए। आँखें जैसे चुम्बक - सी चिपक गईं। रौबदार चेहरे पर घनी काली मूँछें, लोहे - सी देह, आँखें जैसे.... जैसे.... संतो को लगा ये आँखें उसने पहले कहीं देखी हैं.... याद आया, उसके पीहर की साफ़ नीले जल वाली झील में कभी - कभी सैलानी बाबू लोग मछली पकड़ने के लिए दूधिया पालदार नावें छोड़ देते थे। टीले पर बने अपने घर से देखी गई यह झील.... हुकम सिंह की आँखें देखकर उसे अनायास ही याद हो आई। फिर आपे में आते ही लाज से दोहरी होती संतो ने आगे बढ़ना चाहा, तभी - ''क्यों री.... रो काहे रही थी ?''

''अरी बोल न... गागर फूट गई, इसी से न ?'' आँखें झुकाए- ही - झुकाए संतो ने सिर हिला दिया, ..... ''हाँ''.....

''सो क्या हुआ, पावली की ही तो बात है, कौन सौ - दो - सौ का नुकसान हुआ है, जा घर को जा....'' न जाने इस कहने में क्या था कि कलसिया ज़मीन पर धर दोनों हाथों में मुँह छिपाकर संतो भरपूर रो पड़ी। हिचकियाँ बंध गईं। हुकम सिंह दो कदम

आगे बढ़े, एक बार संतो के सिर को हौले से थपका और फिर पहले वाली जगह पर खड़े होकर बोले, ''अरी, काहे को रोये चली जा रही है बैमाता.... समझा, गोमा काकी गुस्सा करेंगी, हैं ? है भी ज़रा करू,.... खैर, तू फिकर मत कर, यहीं थम पल भर, मैं अभी गया अभी आया।''

हुकम सिंह वेग ही चले गए थे और संतो मुग्ध आँखों, ओझल होने तक उन्हें देखती ही रही थी। फिर वहीं धरती पर बैठ गई थी.... कई बरस पहले गाँव के मेले में एक बेर तसवीर आई थी। हम तुम जैसे ही हाड़ - माँस के मर्द - बइय्यर नाचते - गाते दिखते थे, बस आवाज नहीं आती थी। पास में खड़ा एक आदमी उस तसवीर की कहानी बताता जाता था। बस, वोई पहली या आखिरी तसवीर देखी थी संतो ने। उसमें जो एक मरद देखा था, वह तो जैसे संतो के जी में ही उतर गया था लेकिन ऐसे सलोने बाँके मरद को एक सजी - सँवरी पतुरिया जैसी लुगाई के आगे - पीछे दौड़ते देखकर गुस्सा भी बहुत आया था उसे। साथ ही यह विचार भी, ''कोई ऐसा ही मरद उसे ब्याहकर ले जाए तो...? ..... लेकिन कहाँ.... यह विचार तो बाढ़ के पहले ही मुर्झा - मुर्झू कर बराबर हो गया। पति रूप में जो उजड्ड - सा मरद उससे बंध गया था, यह तो कहीं से भी उस तसवीर वाले जैसा न था। हुकम सिंह को देख, जाने क्यों संतो को उस तसवीर की एक - एक बात याद पड़ने लगी। हाय, अपनी लगी - सगी से कुइयाँ पर कैसी तो छेड़खानी करता था वो.. अगर कहीं वैसे ही....

तभी, नई गागर लिए हुकम सिंह अपनी मतवाली चाल से आते दिखलाई पड़े, संतो ने घूँघट खींच लिया। हुकम सिंह ने कलसिया कुइयाँ में डाली और पानी खींचने लगे, सर्र - सर्र.... घूँघट में दो उँगलियों से सन्ध बनाकर संतो उधर ही देखती रही। हुकम सिंह की बाँहों की तड़पती मछलियों को संतो हैरानी से देखे जा रही थी। गराड़ी पर घिसटती रस्सी से हो रही धड़ - धड़ की आवाज़ संतो की अपनी भीतरी धड़ - धड़ में कहीं गड्ड मड्ड हो रही थी। कलसिया का पानी गागर में लोट, दोनों हाथों से गागर उठाकर हुकम सिंह ने संतो के सिर पर धर दी। संतो ख़ामोशी से आगे बढ़ गई कि पीछे से आती आवाज़ ने उसे पल भर को फिर ठिठकाया, ''अब रोइयो मती ना कभी, मेरी सौं.... देख, जित्ते आँसू बहे न, उत्ता ही खून बहता है सरीर का, समझी ना ?''

बस, उनकी यही बात रास्ते भर ही नहीं उमर भर पीछा करती रही है संतो का। आँखों में आँसू आने चाहे कि संतो ने उस ''सौं'' को याद करते हुए उन्हें भीतर ही घुटक डाला है....लेकिन आज.... इतने सालों बाद वह अपने आँसुओं से हार रही है। कुइयाँ वाले दर्शन ही बिनके अंतिम ''जिन्दे'' दर्शन बनकर रह गए। फिर जब देखा भी तो.... अब क्या जवाब दे संतो बालकों को, जब वो पूछते हैं - ''हुकम सिंह बाबा का अंतिम काम तो बड़ी धूम - धाम से हुआ होगा.... क्यों दादी ?''

संतो की उमर ही अब कोई होगी दस ऊपर तीन बीसी। अगर होते तो कोई अस्सी - पिच्चासी के तो होते ही हुकम सिंह, जब गुज़रे तब भी रहे होंगे कोई सत्तर पिचहत्तर के वो। यूँ भी, भगवान का दिया सब था बिन पे।.... घर - द्वार, आस - औलाद, नाम भी बड़ी हौंस से रखे थे - राम सिंह, लखन सिंह.... लेकिन नाम, नाम भर के ही रहे, व्यवहार दोनों में कुत्ते - बिलाव का सा रहा। कुछ भी हो, अपनी ओर से उनके लिए कोई कसर नहीं छोड़ी हुकम सिंह ने। पक्का घर भी बनवाया तो ऐसा कि बाहर से देखने पर एकमएक - मगर भीतर से बीच का दरवज्जा बंद कर लो तो दो घरों का एक दूसरे से कोई मतलब ही न रहे। ऊँची पढ़ाइयों के लिए बेटों को शहर भेजने तक से न चूके वो। सोचते थे पढ़ - लिखकर आएँगे तो पंडित बिसम्भर दयाल के बेटों की तरह अंगरेजी खेती करेंगे और खेत - खलिहान से चौगुना लाभ उठाएँगे। इससे अधिक और क्या चाहिए था उन्हें, लेकिन सपना, सपना ही रह गया। शहर की हवा ऐसी रास आई बेटों को कि वे देहरी ही भूल गए। तभी बीच में हुकम सिंह को लकुआ मार गया और जंगल का वह शेर परबस होकर रह गया। खेत - वेत समेटना अब, उनके बस का नहीं रह गया था, सो तार देकर उन्होंने अपने दोनों बेटे बुलवा लिए। घर, घर का सामान, खेत - खलिहान, ढोर - डंगर, सबका हिस्सा बाँट हो गया - एक बाप को छोड़कर - घरों में ताले डाल, खेत बँटाई पर दे, ढोरों को गोबरधन ग्वाले को सौंप राम - लखन की जोड़ी अपने - अपने धाम चल दी। हाँ, जाते - जाते एक उपकार ज़रूर करता गया लखन, लम्बे - चौड़े अहाते में मवेशियों के घास के सहारे बनी भूसे की कोठरी खाली कराके, बाप का खटोला वहाँ डलवा कर, गोबरधन की जोरू से कहता गया कि घर की रोटी के संग दो रोटी उसके बाप को भी डाल दिया करे। बस। लखन ने अपना फरज निभा दिया - अब गोबरधन की जोरू दो रोटी डालती है या चार, या एक भी नहीं, इन सारी बातों की जानकारी रखने के लिए शहरी बाबुओं के पास न तो टैम ही था, न ही कोई ज़रूरत। जानकारी रखने लायक बातें तो बस यह होती थीं कि अब के साल खेती से कितना फायदा हुआ - मेहनताना काट के गोबरधन ने घी बेच के कितने पैसे दिए, वग़ैरह वग़ैरह। इन सारी घरेलू बातों की हवा भी उड़ी तो गोबरधन के ही मुँह से - वर्ना हुकम सिंह ने तो जैसे अपने मुँह पर टाँके मार लिए थे।

कई बरस बाद, संतो के जेठ के लड़के मलखान ने बड़े हुलस के बताया कि गाँव में बहुत बड़ा ''पुरोगाम'' होने वाला है। सैर से बड़े - बड़े अफसर नेता आएँगेढ्ढ हुकम सिंह ताऊ के मवेशियों वाले थान के अगाड़ी के हाते में बहुत बड़ा पंडाल खींचा जाएगा। झंडे - झंडी, लाऊड अस्पीकर और भी जाने क्या - क्या। संतो के कारण पूछने पर उसने बताया कि कोई बता रहा था कि राम और लखन दोनों ही भईया ''इलक्सन'' के लिए टिकट का जुगाड़ कर रहे थे। बात बन नहीं रही थी। तभी किसी ने लखन भईया को मंतर फूँका कि जिसका बाप ऐसा नामी - गिरामी स्वतन्त्रता सेनानी हो, उसे टिकट मिलने में क्या अड़चन। बस, ज़रा कुछ कर डालो कि मंत्री जी परभावित हो जाएँ और नहीं तो अपने बुढ़ऊ की ''हीरा जैंती'' मना डालो साली। आगे का जिम्मा हमारा.... बात लखन भईया की बुद्धि में बैठ गई और आज वोई ''पुरोगाम'' है। हुकम सिंह ताऊ की हीरा जैंती वाला, जब तक संतो मलखान से पूछती कि ''जे हीरा जैंती क्या होय है लालन'', तब तक तो वो ये जा, वो जा, संतो का मन किया कि ज़रा देखे तो सही

चलकर ठाठ – बाट.... कैसी होय है यह हीरा जैंती'' – मगर ऐन बख्त पे जनम के दुस्मन उनके निखट्टू मरद को ऐसा साँस उखड़ा – कि वो जा ही ना सकीं.... बाद में उसमें न जाने का मलाल उन्हें आज तक है। जब तक जिएँगी, तब तक ही रहेगा।

थोड़ी देर तक घर के काम – काज करते हुए भी संतो के कान लाउडस्पीकर की अनचीन्ही आवाज़ों पर लगे रहे थे – लेकिन तभी वे आवाज़ें चीख पुकार, त्राहि – त्राहि में बदल गई थीं और फिर एकदम सन्नाटा – सा छा गया था।

बाद में बताया था मलखान ने ऐसे सुन्दर लग रहे थे हुकम सिंह ताऊ कि पूछो मत, नया कुर्ता – धोती, दुसाला पहना – उढ़ा कर अपनी गपची में भरकर, आप ही लखन भईया उन्हें कोठरी से उठाकर मंच की कुर्सी पर बिठला आए थे। आए हुए नेताओं ने उनकी प्रशंसा के पुल बाँध दिए थे, रुपयों की थैली भी भेंट की गई थी.... कि तभी पंडाल के एक सिरे से आवाज़ उठी – ''आग – आग.... भागो भागो...'' फिर तो समझो, भगदड़ ही पड़ गई। मलखान ने धीरे से संतो के कान में यह भी बताया कि हाथ में मशाल लेकर भागने वालों के चेहरे ढंपे होने के बावजूद भी किसी ने राम भईया को चीन्ह लिया था। देखते – देखते पंडाल को ऊँची – ऊँची आग की लपटों ने लील लिया और सारा खेल ख़त्म हो गया।'' सुनते हुए संतो के मुँह से बेसाख्ता निकल पड़ा.... ''और हुकम सिंह..... बो.....?''

रात भर अँधेरे आँगन में बैठी संतो इसी सवाल को फेरती रहीं, और सुबह की पहचट सुनकर उससे ही इसका उत्तर माँगने के लिए खुट – खुट करती दरवाज़े से बाहर हो लीं।

पहले से ही वहाँ भीड़ – भाड़ थी। लेकिन अपने लिए जगह बनाती हुई संतो ऐन वहाँ जा खड़ी हुई जहाँ मय हुकम सिंह के, जले हुए ढोरों का चिराँधता हुआ ढेर पड़ा था।

..... अब ये बातें क्या बालकों को बतानी चइएँ ? वो भी बिनकी – जिनकी मूरत पे सैर से आके बड़े – बड़े आदमियों ने माला चढ़ा के उन्हें आदर्श बनाने की बात कई हो ?

***

**लघु कथा**

# नारी विमर्श

महेश शर्मा

बहुत बड़ी सभा चल रही थी। नारियों पर हो रहे अत्याचारों को लेकर सारा देश चिन्तित था। कहीं बहुएँ घरेलू हिंसा से दुखी थीं। दहेज के लिये उन्हें प्रताड़ित किया जाता था, जला भी दिया जाता था। वृद्ध महिलाएँ बेटों से, पारिवारिक प्रताड़ना से दुखी थी। युवा स्त्रियाँ पतियों की उपेक्षा, उनके अनैतिक व्यवहारों से और अत्याचारों से दुखी थी। महिला वर्ग में, बुद्धिजीवियों में तथा समाजसेवियों में इन बातों को लेकर हाहाकार मचा हुआ था।

मंच पर विराजित तीन महिला वक्ताओं के साथ एक पुरुष वक्ता को भी स्थान दिया गया था, पुरुष वर्ग के लज्जाजनक व्यवहार का जवाब देने के लिये। प्रथम वक्ता एक बहू थी; जिसने परिवारों में होने वाली हिंसा, प्रताड़ना, भेदभाव और दहेज के लिये बहुओं को जला डालने जैसे दुष्कृत्यों की घोर निन्दा करते हुए इन्हें रोकने पर बल दिया।

दूसरी वक्ता एक बुज़ुर्ग महिला थी जो समाज में वृद्ध महिलाओं की उपेक्षा से दुखी थी ,परिवार में सासुओं और बूढ़ी माँ के साथ होने वाले दुर्व्यवहार की दुहाई दे रही थी। तीसरी युवा महिला पुरुषों की आवारागर्दी, चरित्रहीनता और अनैतिकता का बखान करती हुई उनकी बेवफाई के किस्से सुना रही थी। सारा पंडाल शेम-शेम की आवाज़ों से गूँज रहा था। ऐसे में सबकी नज़रें माईक सम्हालते पुरुष वक्ता पर टिक गईं, देखें अब क्या जवाब देता है यह पुरुष प्रतिनिधि।

पुरुष प्रतिनिधि ने कुछ मुस्कराते हुए अपनी बात शुरु की। उसकी मुस्कराहट महिला प्रतिनिधियों को ज़रा भी नहीं सुहा रही थी। 'परम सम्माननीय नारी शक्ति आपके सारे आरोप मंज़ूर हैं, आप सिर्फ यह बता दें कि उपरोक्त सारे अत्याचारों में से अधिकांश में जैसे बहू के प्रति पारिवारिक हिंसा, दहेज, प्रताड़ना या बहू को ज़िन्दा जला देना। बुज़ुर्ग महिलाओं यानी माँ तथा सासु आदि की उपेक्षा प्रताड़ना या कष्ट देना और कार्यालयों में या समाज में पुरुषवर्ग की चरित्रहिनता, दुराचार आदि सभी घटनाओं में एक सहयोगी के रूप में हर जगह क्या कोई एक अन्य नारी भी उपस्थित नहीं है।

परिवार में बहू के ऊपर होने वाले अत्याचारों में सासु-रूप में, माँ तथा सासु के ऊपर होने वाले अत्याचारों में बहू के रूप में तथा पुरुषों के पथभ्रष्ट होने यानी परनारीगमन में किसी अन्य नारी के रूप में भी कोई ना कोई नारी अवश्य ही सहायक रही है। हर जलने वाली बहू को जलाने में, माचिस की तीली या घासलेट का केन लेकर सासु या ननद के रूप में कोई महिला ने भी हाथ बँटाया है। फिर आप पुरुषों को ही दोष क्यों दे रही हो? आपके ऊपर होने वाले अत्याचार काफ़ी कम हो जाएँगे पहले आप सब नारियाँ भी तो संगठित हो जाओ।

पुरुष प्रतिनिधि की बात समाप्त होते-होते पूरी सभा में सन्नाटा छा गया था। सारी महिलाएँ एक दूसरे की ओर देखती हुई अपनी गरदनें झुका रही थीं।

***

संपर्क: 224 सिल्वर हिल कालोनी धार, जिला धार, मध्य प्रदेश 454001
मोबाइल: 8236940201
ईमेल: sharma.mahesh46@yahoo.com

# एक सड़क ऐसी

कृष्णा अग्निहोत्री

कृष्णा अग्निहोत्री के अब तक 12 से भी अधिक उपन्यास, 15 कहानी संग्रह, पाँच बालकथा संग्रह, दो आत्मकथा एवं एक रिपोर्ताज प्रकाशित हो चुके हैं। प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ- उपन्यास- बात एक औरत की, बौनी परछाइयाँ, टपरेवाले, कुमारिकाएँ, अभिषेक, टेसू की टहनियाँ, निष्कृति, नीलोफर, बित्ता भर की छोकरी। कहानी संग्रह- टीन के घेरे, विरासत, गलियारे, याही बनारसी रंग बा, पारस, नपुंसक, दूसरी औरत, ज़िंदा आदमी, जै सियाराम, सर्पदंश आदि। बाल साहित्य- बुद्धिमान सोनू, नीली आँखों वाली गुड़िया, संतरंगी बौने। रिपोर्ताज- भीगे मन रीते तन। आत्मकथा- लगता नहीं है दिल मेरा पुरस्कार व सम्मान- कृष्णा अग्निहोत्री को रत्नभारती पुरस्कार, अक्षरा सम्मान, वाग्मणि सम्मान प्राप्त हो चुके हैं।
संपर्क : 532 ए-1, महालक्ष्मी नगर, इन्दौर 452010
मोबाइल : 9826065118

इन्दौर के चौराहों पर सुबह दस बजे व शाम 6 बजे जाम में यदि फँस गए तो निकलने में बहुत समय लगता है पर ऐसा ही चौराहा अलग सा सायाजी पेट्रोल पम्प के पास है। हल्की गर्मी व हल्की बरसात में वहाँ की सर्विस लेन कुछ सीमा तक खाली रहती है। कुछ ऊपर सौगौन व ऐसे ही पेड़ों से भरा लॉन हैं। वहाँ है तो कटीली घास पर कुछ ऊँचे पर वहाँ बैठा जा सकता है, इन्दौर महानगर के प्रदूषण व चिल्ल-पौ से बचकर यहाँ है तो सकून।

जब से शालो के एक-दो बार पैरों में दर्द हुआ तो उसके सारे चैकअप के पश्चात् पता लगा कि उसकी कुछ शुगर बढ़ी है और उसे नित्य टहलना चाहिए। वह भी टहलना चाहती है पर पैरों का कष्ट एक अवरुद्धता पैदा कर देता है। पर हिम्मत बिना तो ज़िंदगी ढकेली भी नहीं जा सकती। सो वो अपनी गाड़ी खड़ी कर सर्विस लेन में घूमने का अभ्यास करने लगी। पास के चौराहे से कुछ दूर इस सर्विस लेन के ऊपर कुछ बैंचे भी लगी है। वहाँ जो एक चौड़ी खाली जगह है वहाँ एक टीन का छप्परा व टीन के घेरे का झोंपड़ा भी बना हुआ है। प्रथम दिन से उसने यहाँ टहलना प्रारंभ किया, वह उस टपरी के भीतर तक झाँकने का आकर्षण रोक नहीं सकी।

एक शाम वह कुछ पल रुकी तो टापरे का दरवाज़ा खुला था, दृश्य सामने था, एक स्त्री, एक पुरुष व बच्ची मोटी, रोटी व भाजी खाकर आपस में चुहलबाज़ी में व्यस्त थे। बीच-बीच में बच्ची हँसती हुई चीख रही थी, ''नहीं बाबा गुदगदी मत करो, मुझे तो आईस्क्रीम चाहिए।'' ''आईस्क्रीम चाहिए?'' पुनः बाबा ने गुदगुदाया व कहा ''ठीक है कल शाम मटकेवाली कुल्फी खिलाऊँगा।'' अपनी सीमित आय में परिवार की संतुष्टी स्पष्ट थी। कुछ पल बाद पीछे हाथ-पैर धो पुरुष ने आगे वाले लॉन में पहुँच मोटे से पाइप से वहाँ लगे पेड़ों को पानी देना प्रारंभ कर दिया। महिला अपने दरवाज़े के सामने पसरकर बैठी और पल्लू से

हवा करने लगी।

बच्ची घाघरा-ब्लाऊज पहने मंदिर के खम्भे की रोशनी में लँगड़ी खेलने में व्यस्त हो गई। मुझे उनके आनंद से हैरत हुई। टपरे में रहकर ये ''ज़िंदादिली? शायद यही मनुष्य को खुशी देती है अन्यथा पूरे समय हाय-पैसा हाय-पैसा वाली नियत व अतृप्ति की भावना ज़िंदगी को अधूरा कर देती है।''

इसी प्रकार रोज़ एक बड़े सागौन के पेड़ के नीचे खड़े पाँच व्यक्ति एक ही समय में एकत्रित होते दिखते। वे आपस में बतियाते, कभी दुखी तो कभी व्यथित दिखाई देते। उसने अनजाने ही उनके पास वाले स्थान पर बैठ गाड़ी खड़ी कर दी।

एक कमज़ोर अधपके बालों वाला व्यक्ति कुछ रूँधे स्वर में बोला ''अरे यार और कितना खर्च? कभी बहू कहती है - आपकी पोती छुट्टियों में ट्रैकिंग को जा रही है उसे दस हज़ार रुपये दे दो। यह प्रार्थना नहीं आदेश रहता है। छः माह बाद पोती को ग्रुप के साथ पिकनिक पर जाना रहता तब दस हज़ार की फरमाइश होती है। पोते को टूर पर भेजना है तो दस हज़ार। मेरी पेंशन 25 हज़ार है, हाँ पहले के कुछ फिक्सड पर ब्याज जमा होता है। एक दिन बेटे ने कहा ''बाबूजी मेरे लेपटॉप की बैटरी ख़राब हो गई नई डालनी है कुछ मदद कर दो।''

''हाँ बोल कितना दे दूँ।''

''दस हज़ार।''

यार बेशर्मी की हद होती है। मेरी चुप्पी से खीज बेटा बोला, ''आख़िर ये सब तो हमीं लोगों का तो है। ऐसा तो नहीं कि जो वो लक्ष्मण यहाँ आपकी मालिश करने व घुमाने आता है उसे भी कुछ हिस्सा देने का इरादा है?''

''नहीं, ऐसा तो नहीं है,'' मैंने पीड़ित हो कहा।

''क्यों, पिछले माह आपने उसके कॉलेज की फीस नहीं दी थी?''

''उसके पिता को रुपये भेजने में कुछ देर हो गई थी। मेरे पैसे तो उसने लौटा दिए थे बेटा।''

''पर बाबूजी ऐसे खर्च हेतु आपको मुझसे तो पूछ लेना चाहिए न।''

अब बताओ, रिटायर्ड होने का तो भाग्य सभी काम वालों का होता है। तो क्या हम अपने बच्चों के गुलाम हो जाएँगे या गुल्लक में बचाया हुआ धन उनके लिए ही खर्च करें। जीवन भर उन्हें पढ़ाया, पाला, अब उनका परिवार भी पालो? क्या हमारा कोई सुख नहीं, इच्छा नहीं? मैं तो सेवाधर्म हेतु एक ट्रस्ट बनाना चाहता हूँ, पर ये लोग अड़ंगा डालेंगे। ज़िंदगी भर बैल जैसा जिए अब मरने के समय पुण्य कार्य भी न कर सकेंगे'' और उनकी आँखें छलछला आईं।

तभी पास स्कूटर पर ही अपना आसन जमाए अधपके बालों वाले व्यक्ति ने आह खींचकर कहा- ''भई मुझे तो शुगर कुछ ज़्यादा ही सता रही है इसलिए यहाँ आ जाता हूँ। घरा छोटा, परिवार बड़ा है अधिक चलना नहीं हो पाता।

मैं छत्तीसगढ़ में सी.आर.पी. में था। एक दिन किरन्दुल में एल.आर.पी. पर गए हम पर घात लगाए बैठे नक्सलियों ने ताबड़ तोड़ फायरिंग जीप पर की, जवानों की जीप गड्ढे में गिरी परन्तु उन्होंने हौसलों से उलट फायरिंग की पर एक हेड व 6 कांस्टेबल मारे गए। नक्सली भागे। मैं एक साधारण अपढ़ आदिवासी हूँ जिसके घरवाले छोटी सी ज़मीन पर खेती करते हैं। बीवी बच्चों से मिलना देर से होता है। गाँव में गुज़ारा न होने से पुलिस में भरती हो गया था। हाँ अब त्याग पत्र दे आया हूँ। गाँव में थोड़ी ज़मीन थी, वहीं घर वालों से जुड़कर खेती किसानी कर अपना गुज़र बसर करने की इच्छा थी।

इन दो वर्षों में हमारे खेतों ने बड़का बाबा की मेहरबानी से बढ़िया सोयाबीन, दाल व गेहूँ की उपज दी। खुशी के मारे मैं व मेरे चाचा ने दो हज़ार रुपये का क़र्ज़ अच्छी बागन हेतु लिया।

सच मानों, ये दो हज़ार का क़र्ज़ा लेने के लिए हमें जो भागदौड़ व खर्च करना पड़ा वह एक दुर्भाग्य ही है। यहाँ जाओ, वहाँ जाओ, ये पेपर लाओ, वो पेपर लाओ, वहाँ बैठो, बाद में आना, सुनते रहे। हमारे पाँच सौ रुपये खर्च हुए। बीज मिला, बोते, फसल काटते क़र्ज़ा हो गया 5 हज़ार। सरकार तो कहती थी कि ब्याज माफ करेगी पर वहाँ तो भई इतना घपला, ये नहीं दर्ज तो वो तारीख ठीक नहीं, मैं व चाचा रो दिए। हम इतना भर तो चाहते थे कि ब्याज व क़र्ज़ एक बार तो शासन माफ करे ताकि हमें राहत मिले, हमें पानी व उपकरण लेने में सुविधा हो।''

''हाँ हाँ, भई कृषि, दूध, सब्जी से ही तो आदमी स्वास्थ्य संभालता है, वैसे भी हमारे बच्चे कुपोषण के शिकार है।''

''पर ऐसा लगा जैसे मौन देश में हम पागल चिल्लाकर बके जा रहे हैं। अब हमने तमिलनाडू के किसानों के निर्वस्त्र आंदोलन को समझा कि वे कितने लाचार थे कि खोपड़ियाँ लिए माफी की गुहार कर रहे थे, यदि उन्होंने कर्ज ले अधिक फसल उगाई तो उन्हें वाजिब कीमत तो शासन को देना चाहिए। अंत में म.प्र. व महाराष्ट्र का किसान भी उपज की सही लागत हेतु सड़क पर उतरा।''

''हाँ पर आप लोगों ने सड़क पर हज़ारों लीटर दूध फेंक, सब्जी उड़ाई, चिढ़ाकर फल खाए वो तो हमारे साथ बेदर्द व्यवहार रहा?''

''देखो सर, भाजपा ने 2014 के चुनाव में अपने घोषणा पत्र में वायदा किया था। पर तीन वर्ष हुए कोई कदम नहीं उठा। हमें समर्थन मूल्य तक नहीं मिला। कोर्ट में भी हलफनामा देकर कहा कि स्वामीनाथन सिफारिश लागू करना मुमकिन नहीं। अब ऐसी बेरुखी से कृषक को क्या कष्ट न होगा? जहाँ तक सड़क पर सामान फेंकने की बात है वह तो गुंडों का कार्य है जो मौका मिलते ही हड़तालों में घुस जाते हैं।''

बहुत देर से चुप बैठे साँवले रंग वाले सज्जन ने विचारक जैसा मत रखा, ''भई देखो भारत एक कृषि प्रधान देश है, यहाँ दूध की नदियाँ बहती रही, कृषि व दूध का ही ध्यान न रखा गया तो जनता क्या खाएगी? नक्सली तो कभी न कभी समाप्त होंगे पर किसान यदि आत्महत्या करेगा तो जीवन निर्वाह ही समाप्त हो जाएगा।''

''है तो चिंता की बात। वास्तव में आज़ादी के बाद गुलामी के निशान लिए एक बड़ा तबका अपने पैतृक धंधे से विमुख हो गाँव छोड़ शहर में बाबू बनने में ही स्वयं को बड़ा समझने का प्रयत्न करने लगा। कृषि जो प्रथम स्थान पर थी वो घुटते हुए बहुत नीचे आ गई। कृषि धंधा या तो ज़मींदारी के हाथ रहा या गरीब गवई ने उसे अपनाया। अब उसका महत्त्व इतना हो गया कि कृषि महाविद्यालय बन गए। कृषक बनने में क्षोभ निराशा नहीं, व्यक्ति को अभिमान होने लगा। पर पढ़कर निकलते ही रुपये की तो बरसात नहीं होगी सो क़र्ज़ उठाना ही

पड़ेगा। सरकार इस नई पीढ़ी को कम ब्याज दर पर तो क़र्ज़ देना था। ये क्या कि बिचौलियों ने शिक्षितों और निरक्षरों को एक ही डंडे से हाँका। राजनेताओं के बड़े-बड़े वायदे पर तीन साल से अधिक समय में भी किसानों को ''एक देश एक नीति'' न मिली वे मँझधार में हैं, केन्द्र की अर्थनीति संकट में है। ढेरों गाँव अपने अस्तित्व हेतु लड़ रहे हैं। आपमें से जो भी पढ़ा-लिखा है वह जानता है कि हमारा क्षेत्र दाल, अनाज से पटा है और विदेश से माल मँगवाया जाना? यही क्या किसानों को प्रोत्साहन देने? भला यह कैसी नीति है?''

''न्यूनतम समर्थन मूल्य के अतिरिक्त कुछ बोनस देने की बात होती तो कुछ बात बनती। दालों के अतिरिक्त सरसों, प्याज़, कपास, मिर्च सबमें यही स्थिति है।''

''बड़े कॉरपोरेट निवेशकों को छोटे से संकट में भी चोर बाज़ार बना जैसे बड़े पैकेज दिए जाते है। जितनी तवज्जो स्टॉक मार्केट के लुढ़कने की मिलती है उसका अंशमात्र कृषि मूल्य गिरावट को नहीं मिलता अब जब पानी सर से ऊपर जा रहा है तो धैर्य तो टूटना ही है।''

''अभी आप क्या कर रहे है?'' गंजे सर वाले ने पूछा।

''वो देखिए दो पंक्तियाँ छोड़ वो जो मुख्य सड़क के ऊपर प्लेटफार्म है, वहाँ मेरी दोनों बेटियाँ बढ़िया चाय व गरम पकौड़े बेच रही हैं। वो... दिखा न घंटी व लाइट लगा ठेला, उस पर चमक रहा है 'हरिओम' नाम। बहुत संतुष्टि काम है। साफ-सफाई व गर्म नाश्ता। पर साथ में बच्चियों को कई सज्जनों की चुहल बाजियाँ भी सहन करनी पड़ती हैं। यदा-कदा यहाँ मज़ाक अधिक होता है इसीलिए दूर से मैं यहाँ निगरानी करता रहता हूँ। 9 बजते ही ठेला बंद व किसी कोने के अँधेरे में शरण। यहाँ घर तो लेने से रहे।''

''यह सब भी तब चलेगा जब तक नगर पालिका की कुदृष्टि ठेले पर नहीं पड़ती।''

''जब की तब देखी जाएगी। फिलहाल पेट तो भर रहा है।''

अरे वो देखो पाँच-छः बच्चे टमाटर खाते हुए झगड़ रहे है, हँस भी रहे हैं। शालो ने अपना स्कूटर बढ़ाया व सामने के पेड़ के नीचे उचक कर बैठ गई। वहाँ से वो उन किशोर बच्चों को अच्छी तरह देख सकती थी। उनमें से चेक्स की शर्ट व फटी जीन्स वाले बच्चे के हाथ में कोई सस्ता सा मोबाइल था। वह कुछ दिखाकर कह रह था, ''लो मंत्रीजी का यह कार्य वायरल हो गया। स्याला देखो तो क्या बुढ़ापे में मज़ा ले रहा है।''

''तुझे क्या? तू कुछ कम है क्या? पिछली बार डटकर मार पड़ी थी, जब वो छोरी को छूकर भाग रहा था।''

''मैं भी क्या करूँ, छोरी की सुंदर गोरी टाँगे व नीचे से झाँकती सुंदरता। नहीं रहा गया तो उठकर भागते हुए उसे पूरा का पूरा छुआ।''

''जब पिटा तो होश आया कि बच्चू कहाँ राजा भोज व कहाँ गंगू तेली।''

शालो को स्मरण हुआ कि यहाँ बात तो सोचने की है कि जिस उम्र में बच्चों को पढ़ना व जीवन हेतु संघर्ष के लिए तैयार होना चाहिए। वहीं देश का एक भारी तबका निरक्षर व विवेक हीन है जो बच्चों से कमाई करवाता है और वहाँ वे खुले उद्दंड व गंदी गर्द लपेटकर जीते है।

तभी दूसरा बच्चा बोला ''अब मैं बारह वर्ष का हो रहा हूँ पर मेरी माँ ने मुझे होटल में छोड़ दिया। इधर शासन 'बालश्रम एक्ट' बना रहा है उधर हर जगह चाय के ठेलों व अंडे बेचने वाले हमारी ही उम्र के हैं। बारह घंटे भागो - दौड़ो और रात में.....'' शर्माकर बच्चे ने आँख मार कहा ''मालिक के चरण चाँपो तब कहीं अच्छा खाना मिलता है। मुझे कहाँ कुछ समझ आता था, बस मोबाइल देखकर और मालिक की कृपा से सब समझ गया।''

शालो ने सोचा ''सच है बच्चों को नैतिकता की शिक्षा ज़रूर देना चाहिए। मोबाइल पर भी 'एल्डर एवं एडल्ट' जैसा कुछ बंदोबस्त हो अन्यथा बच्चों के लिए दूसरे प्रकार के मोबाइल हो जैसे फ़िल्में उनकी अलग होती है। यदि बच्चे एडल्ट मोबाइल खरीदें या देखें तो उसे अपराध कह उन्हें सज़ा देनी चाहिए।'' शालो पूर्णरूपेण चिंतक जैसा सोच व उपाय ढूँढ़ रही थी।

अचानक पाँचों बच्चे चीखने लगे, ''स्याला मुझे दे... मुझे दे, सबका तू ही मज़ा लेगा।''

शालो ने देखा कि एक के हाथ में जो लाल रंग का कुछ था उसी के लिए लपट-झपट हो रही थी। ''अच्छा है भूखे हैं ये।''

पर अचानक दौड़ने-भागने में टमाटर हाथ से गिरा तो शालो दंग हो गई कि वो एक फटा रूमाल था जिसे उठा बच्चे बारी-बारी से सूँघते दौड़कर चले गए।

- ''ये ऐसी कौन सी चीज़ होगी?'' अनायास शालो को समझ आया ''ये तो कोई नशा है'' तभी एक गिरा तो उसे उठा दूसरे ने पकड़ा व स्वयं सूँघने लगा।

क्या नस्ल तैयार हो रही है? शालो व्यक्ति थी, अपराधों पर संयम हेतु ऐसी ही सोच पर बंधन की आवश्यकता है।

तभी एक बच्चे की दृष्टि शालो पर पड़ी जो उन्हें घूर रही थी। बच्चे ने भी शालो को देखा व कुछ गिट्टी के टुकड़े बीनने शुरू किए ही थे कि शालो शीघ्रता से स्कूटी चला ये गई वो गई।

स्कूटी की तेज़ रफ्तार कुछ कम हुई तो शालो ने देखा एक अधेड़ इधर-उधर चोरों सा ताकता दो दीवारों के जोड़ के पास जाकर खड़ा हो गया, शांति से पैर टिका। जिसके दाँई ओर लिखा था इन्दौर के स्वच्छता अभियान में नम्बर वन बना रहने में सहयोग करें। बस बेहद चौकन्ना हो उसने वहाँ लघुशंका की व भागता चला गया।

सड़क के अंत में इयर फ़ोन लगाए एक नौजवान मुंडी हिलाता पैर पटकता, जाने-आने वालों, उठने-बैठने वालों की भीड़ से अनभिज्ञ, गुज़रने वाले सारे सरोकारों से बेफ्रिक व उनके परिणामों व प्रतिफलों से अनजान तटस्थ हो पैर हिला रहा था।

न राष्ट्र धर्म, न समाज धर्म को समझने की चिंता, बस उसके चेहरे पर गहरी संतुष्टि थी कि वो भला और उसका मोबाइल भला, शेष जाए भाड़ में। शालो के चेहरे पर एक रूखा बेजान सा भाव उभरा।

उसकी स्कूटी साईंकृपा चौराहे की भीड़ में फँसा था, अब उसे भी कोई चिंता नहीं करनी कि देश में शरणार्थी बढ़ रहे हैं, समस्या उभर रही है और भारत को कुछ देशों से ख़तरा है, बस भीड़-भीड़-भीड़, जाम-जाम-जाम अव्यवस्था, अव्यवस्था, नारे-नारे, जुलूस-जुलूस और माथे का पसीना पोंछ वो स्कूटी स्टार्ट कर चौराहा सुरक्षित पार करने हेतु बढ़ गई।

***

# यह कैसी शवयात्रा.. !

तेजेन्द्र शर्मा

उसे फ़ेसबुक की लत थी... यह कहना शायद पूरा सच नहीं होगा। उसके लिये तो फ़ेसबुक एक नशा था।... पोस्ट, लाइक्स, कमेण्ट... उसके लिये किसी ऑक्सीजन से कम नहीं थे। मेरा दोस्त भी वह फ़ेसबुक के ज़रिये ही बना था। अपनी एक चिट्ठी लिख कर छोड़ गया है... चिट्ठी पढ़ते हुए मैं किन अनुभवों से गुज़रा हूँ... उसके लिये मेरे पास शब्द नहीं हैं...

हाँ वह एक लेखक था, शब्दों का धनी... कल्पना का मारा... ना जाने क्या-क्या सोचता रहता था। पत्र उसने अपनी किसी सहेली शमा को लिखा है जो कनाडा में रहती है.... राज ने नरेन को आवाज़ लगाई... कोई जवाब नहीं... उसने पत्र को उल्टा-पल्टा और पढ़ने लगा....

''शमा तुम नहीं जानती हो कि फ़ेसबुक का क्या नशा है।... पोस्ट, लाइक, कमेण्ट... बस एक अलग दुनिया है... कभी अपनी पोस्ट पर लाइक्स की गिनती करना और कभी दूसरों की पोस्ट देख कर जलना कि उसे भला मुझ से अधिक लाइक कैसे मिले!... यह एक विस्मयकारी दुनिया है शमा...

तुम समझती हो कि इस दुनिया में बदमाशी है, बेहयाई है... हर औरत यहाँ नंगा नाच कर रही है... ऐसा नहीं है शमा... वैसे तुम मेरे कहने भर से कहाँ मानने वाली हो... तुमने ज़िन्दगी में कभी कोई नशा किया ही कहाँ है... लंदन में पाँच साल रही... अब पिछले बीस साल से टोरोंटो में हो... मगर वही बोर सी लड़की... जीवन में सिवाय ज़िम्मेदारियों के कोई और रंग नहीं... अरे बेवक़ूफ़ आजकल बिना फ़ेसबुक और व्हट्सएप के बिना जीवन ठीक वैसा ही जैसे बिना ख़ुश्बू की बिरयानी...

जानती हो जब मेरी फ़ोटो लगते ही पचास, सौ, दो सौ, तीन सौ, चार सौ और पाँच सौ लाइक्स मिलते हैं और विश्व भर की ख़ूबसूरत औरतें उन पर कमेण्ट्स करती हैं तो मैं दिन में कितनी बार जवान हो उठता हूँ...

कई बार सोचता हूँ कि तुम से शादी ना करने का फ़ैसला मेरे जीवन का सबसे अहम फ़ैसला था... तुम्हें लगता था कि तुम मुझे प्यार करती हो... मगर सच तो यह है कि तुम प्यार से अधिक अधिकार चाहती हो... तुम मेरे जीवन के हर निर्णय को ख़ुद लेना चाहती थी...

जानता हूँ अगर तुम मेरे साथ होतीं तो मैं कभी भी फ़ेसबुक से नहीं जुड़ पाता... शाम के दो पैग... अरे हाँ... मैं आज भी वैट69 ही पीता हूँ... हिन्दी फ़िल्मों में सत्तर और अस्सी के दशक में यही व्हिस्की पीते थे हीरो भी और विलेन भी... बस तब से मुझे लगता है कि दुनिया की सबसे बेहतरीन व्हिस्की वैट69 ही है।... मुझे और कोई व्हिस्की पसन्द ही नहीं आती। ब्लैक लेबल, शिवास रीगल, रॉयल सैल्यूट... बस नाम हैं मेरे लिये... तुम्हें पता है कि वैट69 हर दुकान पर नहीं मिलती... फिर भी उसके दीवाने उसे ढूँढ़ ही लेते हैं....

दो पैग के बाद फ़ेसबुक का मज़ा ही कुछ और हो जाता है।... जब इन्सान कुछ उड़ता सा तैरता सा फ़ेसबुक पर जाता है तो लगता है जैसे पूरा संसार तैर रहा है। घंटियाँ सी बजने लगती हैं...

शमा फ़ेसबुक पर बहुत मज़ा रहता है... कहीं कोई मर्द औरत का फ़ोटो लगाए एक अलग किस्म का मजमा जमाए बैठा है। वह बहुत आसानी से हर उम्र के लोगों का उल्लू बनाता रहता है। पुणे में मेरा एक दोस्त है इक़बाल... बहुत शरारती है... रीमा शर्मा बना बैठा है। हर हफ़्ते उसे शादी के प्रोपोज़ल मिलते हैं। पैंतीस से सत्तर साल के दूल्हे उससे शादी करने को लालायित हैं। तुम सोचो कितने लोगों को इक़बाल की शरारतों के वजह से जीने का कारण मिल जाता है। कंबख़्त ऐसे ऐसे शेर लिखता है कि ना जाने कितनों का पाजामा ढीला कर देता है। अपनी कागुज़ारियों की दास्तान मुझ से ज़रूर साझा करता है।

शमा, फ़ेसबुक पर भी ऋतुओं का असर होता है। या फिर यूँ कहा जाए कि फ़ेसबुक की

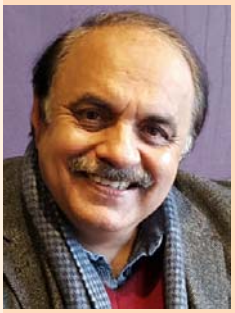

कई सम्मानों से सम्मानित प्रतिष्ठित एवं वरिष्ठ प्रवासी कथाकार तेजेन्द्र शर्मा, जिन्हें ब्रिटेन में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये ब्रिटेन की महारानी एलिज़ाबेथ द्वितीय ने इस वर्ष प्रतिष्ठित मेम्बर ऑफ़ दि ब्रिटिश एम्पायर (एम.बी.ई.) सम्मान से सम्मानित किया है। तेजेन्द्र जी की प्रकाशित कृतियाँ हैं- कहानी संग्रह: काला सागर, ढिबरी टाईट, देह की कीमत, यह क्या हो गया !, बेघर आँखें, दीवार में रास्ता,सपने मरते नहीं, सीधी रेखा की परतें (तेजेन्द्र शर्मा की समग्र कहानियाँ भाग-1), क़ब्र का मुनाफ़ा (सभी कहानी संग्रह), प्रतिनिधि कहानियाँ, मेरी प्रिय कथाएँ, श्रेष्ठ कहानियाँ, ग़ौरतलब कहानियाँ। कविता एवं ग़ज़ल संग्रह: ये घर तुम्हारा है... संप्रति लन्दन से प्रकाशित पत्रिका पुरवाई के संपादक हैं।

संपर्क : 33-A, Spencer Road, Harrow & Wealdstone, Middlesex HA3 7AN (United Kingdom).
मोबाइल: 00-44-7400313433
ईमेल: kathauk@gmail.com

अपनी ऋतुएँ होती हैं। अगर थोड़ा और सोचा जाए तो फ़ेसबुकियों की अपनी-अपनी ऋतुएँ होती हैं। एक मौसम होता है जब लाइक्स की बाढ़ आ जाती है... फिर ऐसा भी होता है कि अकाल सा पड़ जाता है... पोस्ट पर मित्र लोग आते ही नहीं हैं। बहुत कष्ट होता है... जब चक्रधारी अग्रवाल की वॉल पर पंद्रह सौ, दो हज़ार, पाँच हज़ार लाइक्स देखता हूँ तो जल-जल के मर जाता हूँ।

जानती हो कितने तो राजनीतिक पत्रकार हैं जिनका बस एक ही काम है - सुबह उठना और नरेन्द्र मोदी के विरुद्ध विष वमन करना शुरू कर देना। मैंने भी उनका मज़ाक उड़ाते हुए एक पोस्ट डाली थी। मगर मैंनें देखा है कि फ़ेसबुक पर पढ़ा-लिखा आदमी भी पल भर में जानवरों का सा व्यवहार करने लगता है। यहाँ कोई संघी हो जाता है तो कोई भक्त... दूसरी तरफ़ की सेना में पुरस्कार वापसी ब्रिगेड है तो कहीं सिक्युलर हैं... फ़ेसबुक क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय मंच है तो यहाँ की सहनशक्ति भी पश्चिमी देशों की तरह है... एकदम हिंसात्मक हो उठते हैं फ़ेसबुकिया लोग। कई बार सोचता हूँ कि आख़िर इतनी हिंसा क्यों...

शमा बहुत सोचने के बाद इस नतीजे पर पहुँचा कि फ़ेसबुक पर लिखे हुए शब्दों को इमोशन तो पढ़ने वाला देता है। चाहे बात मज़ाक में कही गई हो मगर पढ़ने वाला उसे अपने ढंग से पढ़ेगा और अपनी मन:स्थिति के अनुसार ही उन शब्दों में इमोशन भरेगा। मैं तो वैसे ही लड़ाई झगड़े से घबराता हूँ। भला सोचो कि मैं कैसे उन लोगों से उलझ सकता हूँ। मगर तुम जानती हो कि ग़लत बात किसी की नहीं सहता फिर भला यहाँ अपनी प्रकृति के विरुद्ध कैसे काम कर सकता हूँ।

कभी-कभी मुझे भी लगने लगता है कि मैं फ़ेसबुक के बिना रह नहीं पाऊँगा। जैसे तुम व्हाट्सएप से जुड़ गई हो... मैं फ़ेसबुक से। मगर व्हाट्सएप का एक फ़ायदा है कि वहाँ बहस की गुंजायश ना के बराबर है... बस दे दनादन गुड मॉर्निंग, गुड नाइट, शुभ रविवार... वगैरह वगैरह... कभी एक नेता का कार्टून तो कभी दूसरे का। तुम सच-सच बताना कितने लोगों के संदेश या वीडियो देख पाती हो ? हर दूसरा आदमी एक ग्रुप बनाए हुए है। ग्रुप एडमिन बनना जैसे कोई सरकारी ओहदा हो। तुम तो फिर भी कुछ ढंग के मैसेज भेजती हो... यहाँ तो कुछ ऐसे भी हैं जो दिन भर बस उँगलियाँ फिसलाए जाते हैं फ़ोन के की-पैड पर।

एक बात तो तुम्हें माननी ही पड़ेगी शमा कि फ़ेसबुक की हर लड़की ख़राब चरित्र की नहीं होती। जैसे हर जगह कुछ लोग अच्छे होते हैं तो कुछ लोग बुरे भी होते हैं। हाँ, एक हादसा मेरे साथ भी हुआ जब एक लड़की मेरे साथ साल भर चैट करती रही... मगर लड़का बन कर। बहन-माँ की गालियाँ भी चैट में इस्तेमाल करती रही। हमने जीवन के हर विषय पर बातें कर लीं। यहाँ तक कि एक बार तो तुम्हारा ज़िक्र भी कर बैठा... मगर यह नहीं बताया कि तुम कनाडा में रहती हो। बस तुम्हें याद किया और मिस किया। उस लड़की ने मुझे क़रीब दस महीनों बाद बताया कि वह एक लड़की है और मुझ से प्यार करने लगी है। अब प्यार शब्द काफ़ी हल्का सा हो गया है। अंग्रेज़ी का आई लव यू टू... तो इतना बनावटी लगता है...

तुम आजकल अपनी सेहत पर ध्यान नहीं दे रही हो... दिन में दर्जन भर संदेश व्हाट्सऐप पर भेजती हो। कभी-कभी तो यह भी भूल जाती हो कि जिन संदेशों में सेक्सुअल टोन रहती है उन्हें देख कर पढ़ने वाला भेजने वाले की एक छवि बना लेता है। फिर वो खुल कर बात करना शुरू करता है... ज़ाहिर है कि तुम्हारे जैसी औरत को बुरा लगेगा... अभी हाल ही में दसों दिशाओं वाले ग्रुप में तुमने ऐसा व्हिडियो पोस्ट किया कि कोई भी देखने वाला सोचेगा कि तुम बुरी तरह से फ़्रस्ट्रेटिड औरत हो जिसे सेक्स नहीं मिल रहा। जबकि तुम तो फ़ेसबुक पर इसलिये नहीं हो क्योंकि तुम्हें लगता है कि हर इन्सान यहाँ सेक्स के लिये है।

मुझे लगता है कि फ़ेसबुक व्हाट्सऐप से बेहतर विकल्प है... पोस्ट पर अधिक लोग टिप्पणी करते हैं... लाइक्स तो जैसे शरीर में ऑक्सीजन का काम करते हैं... जब किसी पोस्ट में डबल, ट्रिपल सेंचुरी लगती है तो मज़ा आ जाता है...

वैसे मैंने एक बात नोट की है... फ़ेसबुक पर अगर अधिक बौद्धिक पोस्ट डाली जाए तो कोई प्रतिक्रिया होती ही नहीं। हम हिन्दी वाले बहुत इंटेलेक्चुअल होने का नाटक तो करते हैं मगर भीतर से खोखले होते हैं।

सोशल मीडिया होते हुए भी फ़ेसबुक एक व्यक्ति का एक बहुत ही निजी स्थान है जहाँ वह किसी को 'मित्र अनुरोध' भेजकर और दूसरों के 'मित्र अनुरोधों' को स्वीकार करके नेटवर्क का एक हिस्सा बन जाता है। 'फ़ेसबुक मित्र' पारंपरिक अर्थों में मित्रों की परिभाषा में बिल्कुल फिट नहीं बैठते हैं। अपने दोस्तों की अपनी सूची का विश्लेषण करते हुए, मैंने देखा कि मेरे 'दोस्तों' की एक बड़ी संख्या ऐसी है जिनके बारे में मुझे शायद ही कुछ पता है। कुछ ऐसे भी हैं जो मेरे साथ केवल इसलिये जुड़े हैं क्योंकि हम एक ही संगठन में काम करते हैं। ऐसे दोस्त भी हैं जिन्हें मैं केवल फ़ेसबुक पर मिला था लेकिन अब हम बहुत क़रीबी रिश्ता महसूस करते हैं।

सच तो यह है कि अधिकांश मामलों में हम एक-दूसरे के बारे में, अपनी धार्मिक और सामाजिक मान्यताओं, मूल्यों के मानदण्ड, एक दूसरे के राजनीतिक झुकाव आदि के बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं रखते हैं। ऐसे उदाहरण भी मौजूद हैं, जब लोग 'दोस्तों' को अपनी पसंद के ढाँचे में लाने की कोशिश करते हुए अनुचित दबाव डालते हैं ? कई बार तो डर लगने लगता है कि अगर मैं शेक्सपियर की प्रशंसा करता हूँ, तो मुझे एक यहूदी-शत्रु का नाम दे दिया जाएगा, क्योंकि शाइलॉक के माध्यम से शेक्सपियर ने अपने नाटकों में से एक पूरे समुदाय को विकृत कर दिया है?

वैसे मैं अपनी सीमाओं को पहचानता हूँ, मुझे पता है कि मुझे सामाजिक बातचीत के मानदंडों का पालन करना होगा, परन्तु भगवान् के लिए, मैं किसी को अपनी पोस्ट की व्याख्या मनमाने ढंग से करने की अनुमति नहीं दूँगा। यदि आपको मंज़ूर है, तो आप मेरे दोस्त हैं यदि नहीं, तो हम एक दूसरे का साथ छोड़ने के लिए स्वतंत्र हैं; लेकिन मैं किसी भी फ़ेसबुक मित्र को कभी भी विश्वासों और मूल्यों के बारे में अपने आप को संचालित करने का हक़ नहीं दूँगा... न ही देता हूँ।

जीवन बहुत बदल गया है शमा... ऐसा

भी तो हुआ है कि एक पत्रकार पहले मेरा मित्र था फिर फ़ेसबुक पर भी जुड़ गया। मगर उसके राजनीतिक विचार इतने उग्र थे कि कहीं कोई तालमेल बैठने का तरीक़ा समझ नहीं आ रहा था। उसकी भाषा इतनी उग्र थी कि वह तू तड़ाक से बात कर रहा था जबकि अपने आपको मेरा छोटा भाई कहता रहा है। मैंने अपने फ़ेसबुक जीवन में अब तक केवल पाँच लोगों को ब्लॉक किया है। हर बार लगता था जैसे मुझ से कोई क़त्ल हो रहा है।

वैसे फ़ेसबुक पर भी देखा है कि गुटबाज़ी बहुत है... हर गुट अपने अपने लोगों की पीठ खुजाता रहता है। अब तो कोई बिहारी है तो कोई पंजाबी है... कुछ पुराने वाले गुट तो हैं ही... कई बार सोचता हूँ कि पुराने दिन कितने रोमांटिक होते थे... लड़की का नाम पूछने में महीनों गुज़र जाया करते थे... आज तो रात साथ बिता लेते हैं मगर एक दूसरे का नाम नहीं पता होता....

तुम से थोड़ी नाराज़गी भी है... यार तुम कभी मेरी किसी भी बात से सहमत नहीं होती हो। मगर अब मैं तुम्हारी एक नहीं सुनने वाला... मेरे जीवन की एक ही फ़ैन्टेसी है... मैं जानना चाहता हूँ कि मेरे मरने के बाद मेरे दोस्त मेरे बारे में क्या कहते हैं... कितने लोग मेरी मौत पर कमेण्ट्स करते हैं... कितने मित्र अपनी वॉल पर मेरा चित्र लगा कर पोस्ट लिखते हैं... मैं यह सब अपनी आँखों से देखना चाहता हूँ...

सुनो शमा... अगर मैं सचमुच मर गया तो मैं कुछ ख़ुद नहीं देख पाऊँगा... कुछ महसूस नहीं कर पाऊँगा... मरने के बाद लोग क्या कहते हैं क्या सोचते हैं... मेरे लिये यह सब जीने से अधिक महत्त्वपूर्ण है। तुमने साथ देने से साफ़ इन्कार कर दिया।

शमा हो सकता है कि तुम सोच रही हो कि तुमने बदला ले लिया। कभी मैंने तुम्हें इन्कार किया था आज तुमने... नहीं शमा, मैंने इन्कार नहीं किया था... बस ग़लतफ़हमी सी हो गई थी... शायद कम्यूनिकेशन गैप... वर्ना तुम्हें पाकर तो मैं धन्य हो जाता... तुम्हारे बिना तो बस एक ही बात दिमाग़ में आती है... यह कैसी उदासी है, यह कैसी जुदाई है / कितने रिश्ते नाते, फिर भी तन्हाई है।

शमा मुझे याद है मेरी एक दोस्त को कैंसर हो गया था... पैन्क्रियाज़ का कैंसर... जानती हो यह एक विचित्र प्रकार का कैंसर है जिसका पता केवल चौथी स्टेज पर चलता है... जब मैंने उसके कैंसर की ख़बर डाली थी तो उस पर क़रीब दो सौ साठ कमेण्ट आए थे... उनमें से कोई भी मेरी दोस्त को जानता नहीं था। वो तो लंदन में रहती भी नहीं थी... हाँ, ल्यूटन में रहती थी। सिर्फ़ मेरी मित्र होने के नाते उस पर इतनी टिप्पणियाँ आ गईं...

मैं लगातार उसका सेहत बुलेटिन जारी करता रहा और उसकी मृत्यु होते-होते कमेण्ट और लाइक की संख्या एक हज़ार को पार कर गई। यह पहली बार था जब मेरी किसी भी पोस्ट को इतने कमेण्ट्स और लाइक्स मिले थे। शमा... मुझे तो लगने लगा कि रोज़ ही कोई ना कोई बीमार हो... उसकी मृत्यु हो जाए और मैं उसकी पोस्ट डालूँ... बस लाइक्स और कमेंट्स की झड़ी लगती रहे... जैसे किस एक्टर के लिये लाइट, एक्शन और कैमरा होता है ठीक उसी तरह लाइक्स और कमेण्ट हमारे लिये।

जब तुमने मेरी मृत्यु की पोस्ट डालने से इन्कार कर दिया, तो मुझे स्वयं ही कुछ इन्तज़ाम करना था। आज सोचता हूँ कि तुमने पोस्ट ना डालने का निर्णय लेकर कितना अच्छा किया। तुम तो फ़ेसबुक पर जाती ही नहीं हो... तुम्हारे मित्र ही कितने होंगे... पूरी पोस्ट बेकार चली जाती। मैं अगले सोमवार को उस वक़्त पोस्ट डालूँगा जब भारत में सुबह के 10 बज चुके होंगे... मेरे बहुत से फ़ेसबुक मित्र तो ऑफ़िस के कम्प्यूटर पर ही फ़ेसबुक देखते हैं।

शमा तुम्हें याद है पिछले वर्ष मैं सेन्ट्रल मिडलसेक्स हस्पताल में एक छोटी सी सर्जरी के लिये एडमिट हुआ था... उसके कुछ फ़ोटो मेरे पास हैं। उन्हें आज ही मेमरी स्टिक से निकालता हूँ। हस्पताल के नीले रंग के कपड़ों में हैं वो फ़ोटो... मेरा पूरा प्लैन है कि पाँच दिन से अधिक अपने आपको ज़िन्दा नहीं रखूँगा... बस सोमवार को एडमिशन और शुक्रवार को मृत्यु... मैं पहले ही दिन लिख दूँगा कि आज से मेरा बेटा मेरी सेहत का बुलेटिन जारी करता रहेगा।

तुम सोच रही होगी कि आख़िर मैं तुमसे यह सब बातें क्यों साझा कर रहा हूँ... सच तो यह है कि मुझे पूरा यक़ीन है कि तुम तो अपना फ़ेसबुक अकाउण्ट कभी खोलोगी नहीं और ना ही मेरे इस संदेश को पढ़ोगी... लेकिन अगर कभी खोलो और पढ़ो तो जान पाओगी कि मैं किन हालात से गुज़र रहा था।

मैंने सोचा था कि अपने बेटे को इस मुहिम में शामिल कर लूँ... मगर जानता हूँ कि बेटा मेरा मज़ाक उड़ाएगा... कभी मेरा साथ नहीं देगा... अब तो उसे मिले हुए भी क़रीब तीन साल हो गए हैं... सुना है कि उसने दाढ़ी रख ली है... चिन्ता केवल एक है कि मेरी बहन और माँ का क्या होगा।... माँ तो कभी कम्प्यूटर पर जाती नहीं है मगर बहन तो रोज़ फ़ेसबुक देखती है... सोचता हूँ कि अपनी पोस्ट डालने से पहले अपनी बहन को ब्लॉक कर दूँ। कम से कम माँ को इस कष्टकारी समाचार को सुन कर आँसू नहीं बहाने होंगे... साला मरना भी कौन सा आसान काम है...

अब इस काम को और नहीं टाला जा सकता... मैं पोस्ट ऐसी लिखना चाहूँगा कि पूरे मित्र-जगत् में एक तूफ़ान सा आ जाए... आँखें गीली हो जाएँ, दिल बैठ जाएँ और सब मेरी और सिर्फ़ मेरी बात कर रहे हों... जो मुझसे खार खाए रहते हैं और पीठ पीछे हमेशा छुरियाँ चलाते रहते हैं, वो सब सामने आकर फ़ेसबुक पर क्या कहते हैं... यह जानना बहुत ज़रूरी है... शायद मेरे इन-बॉक्स में कुछ ऐसे संदेश भी आएँ कि सुनो, मैं तुम से आज तक कह नहीं पाई... मगर सच तो यह है कि मैं तुमसे बहुत प्यार करती हूँ... ये पाँच दिन मेरे जीवन के सबसे अधिक हलचल वाले दिन होने वाले हैं... मैं पाँच दिन काम पर नहीं जाऊँगा... पोस्ट हिन्दी में ही लिखूँगा ताकि ऑफ़िस वाला कोई क्लीग पढ़ ना ले...

तुम तो जानती हो कि मैं कभी पूजा पाठ में विश्वास नहीं करता मगर अचानक आजकल सुबह उठ कर ॐ नमः शिवाय की माला करने लगा हूँ। लगता है जैसे कोई धार्मिक अनुष्ठान करने जा रहा हूँ। आज सुबह ही टीवी पर देखा कि तुला राशि वालों को एक ख़ास ढंग से गायत्री मंत्र का पाठ करना चाहिए... हर पंक्ति से पहले 'ह्रिम' शब्द जोड़ना चाहिए और मंत्र के अंत में भी इसी शब्द का जाप करना होगा।

यही कर रहा हूँ। मैं शायद दुनिया का पहला इन्सान होने जा रहा हूँ, जो अपनी मौत का आँखों देखा हाल स्वयं विश्व को सुनाएगा और अपनी शवयात्रा दिखाएगा... सोमवार आख़िर आने में इतनी देरी क्यों कर रहा है?

ना जाने यह मेमरी स्टिक कहाँ रखी गई है।... अरे हाँ ये फ़ोटो तो मेमरी स्टिक में नहीं बल्कि दूसरी हार्ड ड्राइव में सेव कर रखी हैं।... शायद गूगल के पिकासा में भी सेव कर रखी हों... अभी पिकासा खोल कर देखता हूँ.... तीन महीने से पिकासा चेक ही नहीं किया... शमा लोगों को इमोशनल करने के लिये मैंने अपने कमरे, किताबों और लैपटॉप डेस्क... सबके फ़ोटो खींच लिये हैं...इन सबका इस्तेमाल मुझे अगले पाँच दिनों में करना है...

शमा आज अपनी पहली पोस्ट तैयार कर ली है... ''इन किताबों के बीच साँस लेना अच्छा लगता है / हर एक पन्ना, काग़ज़ों की सियाही और जिल्द की ख़ुशबू ज़िन्दगी देती है / लैपटॉप के ज़रिये पूरी दुनिया बन गई है परिवार / अचानक हुक्म हुआ है कि बस अब चलने की बारी है / यहीं छोड़ना होगा सब - किताबें, लैपटॉप और रिश्ते।... पिछले तीन महीनों से हस्पताल के चक्कर लगा रहा था... ब्लड टेस्ट, स्कैन, चेकअप... बस जीवन इनके इर्द-गिर्द ही घूम रहा था। ना इन दिनों कुछ ख़ास पढ़ा ना लिखा। मगर परसों मेरे कंसल्टेण्ट पीटर टेलर ने मुझे साफ़-साफ़ बता दिया है कि मुझे कैंसर है - 'पैन्क्रिअस कैंसर' यानि कि मेरी पाचक ग्रन्थि में कैंसर हो गया है। डॉक्टर का कहना है कि यह कैंसर बेआवाज़ कैंसर के रूप में जाना जाता है। इस कैंसर का पता अंतिम स्टेज पर ही चलता है। लगता है कि अब मेरा अंतिम समय भी आ पहुँचा है। रॉयल मार्स्डन हस्पताल में बहुत किस्मत से एडमिशन मिलता है... सभी मित्रों की दुआओं और प्यार का नतीजा है कि डॉ. पीटर ने मेरा केस ले लिया है और इस ऐतिहासिक हस्पताल में बेड भी दिलवा दिया है।... बस दस दिन बाद मैं वहाँ पहुँच जाऊँगा... पिछले कुछ दिनों अपनी किताबों को क़रीने से लगाता रहा... दोस्तो, इन किताबों को बहुत प्यार और शिद्दत से इकट्ठा किया है। आप तो जानते ही हैं कि हमारी युवा पीढ़ी को हिन्दी साहित्य की किताबों से कितना लगाव है... इसलिये अपनी मित्र शमा को यह ज़िम्मेदारी दे रहा हूँ कि यदि मैं हस्पताल से वापिस घर नहीं आ पाया तो वह मेरे सभी मित्रों में मेरी नौ सौ अस्सी किताबें बाँट दे।... बस एक बात... यदि मैंने जाने-अन्जाने में किसी का भी दिल दुखाया हो, मैं उन सबसे क्षमा माँगता हूँ।... एक बात और... जब तक मैं अपनी सेहत का बुलेटिन आप तक स्वयं पहुँचा सकूँगा... पहुँचाता रहूँगा... यदि कोमा में पहुँच गया तो मैंने अपने पुत्र और एक मित्र को अपने अकाउण्ट का पासवर्ड दे दिया है... मुझे पूरी उम्मीद है कि सूचना आप तक पहुँच जाएगी....। अब अगले हफ़्ते रॉयल मार्स्डन... वैसे राजेश खन्ना की तरह कह सकता हूँ... अरे हस्पताल हो तो ऐसा जो रॉयल हो।''

शमा मैं जानता हूँ कि मेरा पुत्र तो कभी इस खेल में मेरा साथ देगा नहीं... मुझे स्वयं ही अपना बेटा भी बनना पड़ेगा। इस वक्त मेरी हालत कुछ वैसी ही है कि जब हम गैस पर दूध उबलने के लिये रख देते हैं और दूध के उबलने का इन्तज़ार शुरू कर देते हैं।... वोह इन्तज़ार कितना कठिन होता है... दूध उबलने में ही नहीं आता... कुछ कुछ वैसा ही हो रहा है... सोमवार आ ही नहीं रहा।

आज ईर्ष्या के एक नए दौर से गुज़र रहा हूँ। एक लेखिका ने बस अपनी फ़ोटो लगाई और लिखा - ''और बताइयेज'' और सुबह से धड़ाधड़ लाइक्स आ रहे हैं और बन्दे उस पर मरे जा रहे हैं। मैं आज मुक्तिबोध पर एक पोस्ट डालने जा रहा था... मुलतवी कर दिया। मैंने भी धड़ से अपनी बिना मूँछों की तस्वीर चिपका दी... अभी तक चर्चा का विषय बनी हुई है।

मैं सोचता था कि केवल मैं ही इस चिन्ता में मरा जा रहा हूँ। आज तो सुन कर बहुत अच्छा लगा कि विजय जॉली भी इसी का शिकार है। आज फ़ोन पर कह रहा था भाई साहब मेरी रेडियो स्टेशन वाली पोस्ट पर पाँच सौ से अधिक लाइक्स आ गए। यानी समस्या सबके जीवन की एक ही है... लाइक्स और कमेंट्स, इसके बिना सब जीवन सूना।

वैसे एक छोटा सा संदेश व्हाट्सएप के लिये भी बना दिया है। लघुकथा वाले, प्रवासी मतवाले, दस और बस, हरियाणा-पंजाब-हिमाचल आदि ग्रुपों में पोस्ट करना है... वहाँ से ज़ाहिर है हर जगह संदेश पहुँच ही जाएगा। मेरी कोशिश है कि पूरा खेल एकदम पर्फ़ेक्ट हो जाए।

शमा जैसे-जैसे दिन बीत रहे हैं दिमाग़ में नए- नए विचार पैदा हो रहे हैं। अपनी पुरानी स्कीम त्याग दी है। अब अपने जी.पी. के ज़रिये अपने आपको हस्पताल में दाख़िल करवाने की चिट्ठी ले ली है। मेरी नाक की हड्डी बढ़ी हुई है। उसका ऑपरेशन करवा रहा हूँ... बस वहीं बहुत सी ताज़ा तस्वीरें अलग-अलग पोज़ में ले ली जाएँगी। उन तस्वीरों में मेरी मौत की तस्वीरें भी शामिल होंगी। सब कुछ बहुत रीयल लगेगा।

शमा आज पहली पोस्ट डाल दी है। साथ में अपनी सबसे बेहतरीन फ़ोटो लगाई है। जानती हो आधे घन्टे में पैंसठ कमेंट और सवा सौ लाइक आ गए।... गधे हैं... मरने की ख़बर भी लाइक कर रहे हैं। मगर सबसे अच्छा तो लगा कि पहला कमेंट विक्रम मेहरा का था... हमेशा मेरी पीठ पीछे बुराई करता है। मेरे लेखन की कितनी आलोचना करता फिरता है। मगर आज लिखता है, ''नरेन जी, भगवान् में विश्वास तो नहीं करता, मगर आपके लिये भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि आप पूरी तरह से स्वस्थ हो कर घर लौटें।'' उल्लू का पट्ठा समझता है कि मैं उसे जानता नहीं हूँ।

जिस हिसाब से लोगों के लाइक्स और कमेंट्स आ रहे हैं, उससे लगने लगा है कि मेरी मौत एक भव्य घटना होने जा रही है। आज तो वो प्रोफ़ेसर भी मेरी वॉल पर आ गई जो अपने आपको दलितों का मसीहा कहती है... उसे भी अचानक महसूस हो गया कि मैं एक अच्छा इन्सान हूँ...

शमा आज तो नवभारत टाइम्स और जनसत्ता में समाचार भी प्रकाशित हो गया है कि मैं भयंकर कैंसर से पीड़ित हूँ। लगता है जैसे पूरा हिन्दी जगत् आज सोगमई हो गया है... सबकी ज़बान पर एक ही बात है... नरेन मल्होत्रा का कैंसर...यह भी अच्छा है कि बहनें अंग्रेज़ी का अख़बार ख़रीदती हैं वर्ना उन्हें समाचार पत्र से पक्का मालूम हो जाता।

मैं भारत के हिन्दी जगत् के लिये कितना महत्त्वपूर्ण हूँ... मुझे आज पहली बार पता

चला है... लाइक्स और कमेंट्स बढ़ते जा रहे हैं... मुझे भी आज ही पता चल रहा है कि मैं हँसमुख हूँ.... मैं ज़िन्दादिल हूँ.... मेरा लेखन कितना महत्त्वपूर्ण है... तुम कह सकती हो कि मैं सिम्पैथी-सीकर हूँ... मैं चाहता हूँ कि लोग मेरे बारे में अच्छा लिखें, अच्छा बोलें... दो दिन दिन बाद ही एक नई पोस्ट डालने वाला हूँ। अपने दो तीन दोस्तों को लंदन यूस्टन के दीवाना रेस्टॉरेण्ट में लंच के लिये बुलाया है। अरे हाँ उसमें रमा भी शामिल है। आज की पोस्ट पर रमा तो लगभग रो ही दी थी। उन तीनों को कहा है कि मेरा प्री-ऑप है... एक्स-रे, बल्ड टेस्ट, वगैरह वगैरह... तुम अगर आज मुझे देख पातीं तो देखतीं कि मैंने कैसे अपने चेहरे पर एक मुर्दनी वाली मुस्कान चिपका ली है। चाहे आमने-सामने या फिर फ़ोन पर... मेरी आवाज़ में भी एक खोखलापन भर गया है...

आज सुबह बहन जी का फ़ोन आ गया... ''काका तेरा फ़ोन नहीं मिल रहा। जब देखो तब बिज़ी... तेरा फ़ेसबुक अकाउण्ट भी नहीं दिखाई दे रहा।''... मैं शान्त सब सुनता रहा और खोखली हँसी हँसता रहा। उनसे रहा नहीं गया, ''काके तेरी तबीयत तो ठीक है ना? राजन बता रहा था कि तूने फ़ेसबुक पर कोई पोस्ट डाली है कि तू बीमार है।''

''नहीं बहन जी, आप बिल्कुल चिन्ता ना करें। दरअसल मेरा फ़ेसबुक अकाउण्ट हैक हो गया है। पता नहीं कौन उसमें क्या-क्या लिख रहा है। और बहुत से दोस्तों ने शिकायत की है कि वो भी मेरा फ़ेसबुक पेज नहीं देख पा रहे। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। मैं आपको रोज़ फ़ोन कर लिया करूँगा।.... ''

देखा तुमने शमा... मैं अब हालात को कैसे निपटा लेता हूँ। अब मुझे कोई परवाह नहीं। चाहे कोई मुझे झूठा कहे या फ़रेबी... मेरे लिये यह जानना बहुत आवश्यक है कि मेरी मौत पर मेरे मित्रों, मेरे रिश्तेदारों, काम पर साथियों, लेखक बिरादरी और मेरे दुश्मनों की क्या प्रतिक्रिया होती है।

आज मित्रों के साथ दिवाना में लंच किया। वहाँ बफ़े लंच होता है - विशुद्ध शाकाहारी। सब ऐसे भोजन कर रहे थे जैसे श्मशान घाट में बैठे हों। बीच-बीच में पापड़ के कुचले जाने की आवाज़ आती या फिर प्याज़ के चबाए जाने की। फचड़ पचड़... क्रंच क्रंच.... मगर आज की पोस्ट डालने की ज़रूरत मुझे नहीं पड़ी... रमा ने स्वयं ही एक रुलाने वाली पोस्ट डाल दी।

''हम जानते हैं कि वह दीवानावार काम करता है... हमेशा मुस्कुराता रहता है और उसका लेखन तो लाजवाब है ही... वह लड़ेगा... वह इस कैंसर को पछाड़ देगा... आज हम दीवाना रेस्टॉरेण्ट यूस्टन में मिले... आज के मेज़बान थे मोहन अहलावत। नरेन ने सबके साथ हँसी मज़ाक किया... जमकर भोजन किया अब परसों ही उनकी सर्जरी है। हमारी दुआएँ नरेन के साथ हैं और हमें पूरा विश्वास है कि नरेन हमेशा की तरह हँसते हुए हस्पताल से बाहर आने वाले हैं।... स्टील का बना है हमारा दोस्त नरेन। हम सबकी प्रार्थनाएँ नरेन के साथ हैं।''... यह सोच कर डर भी लगता है शमा जब कल इन मित्रों को सच्चाई का पता चलेगा तो इनकी क्या प्रतिक्रिया होगी। अतुल पाठक ने तो फ़ोन पर यहाँ तक कह दिया, ''नरेन, परेशान नहीं होना... किसी भी चीज़ की ज़रूरत हो बस फ़ोन करना... पैसों की कोई चिन्ता मत करना... यह साले इतने सारे रेस्टॉरेण्ट किस लिये कमाई कर रहे हैं... यारी से बढ़ कर कुछ नहीं।''

शमा आज तो कमाल हो गया है... दिल्ली, भोपाल, मुंबई, वाराणसी, जयपुर, शिमला, रायपुर, अलीगढ़, लंदन, अमरीका, और कनाडा से भी पोस्ट लग गई हैं... ''हमारे प्यारे लेखक नरेन जी को कैंसर जैसे घातक रोग ने घेर लिया है। हम सब दुआ करते हैं कि वे हस्पताल से पूरी तरह ठीक हो कर लौटें।''

विक्रम, अभय, सुनील, रश्मि, अनुराधा... सब जले जा रहे होंगे... इतनी ज़बरदस्त प्रतिक्रियाएँ, टिप्पणियाँ और लाइक्स... मेरी पहली पोस्ट पर 786 लाइक्स हो चुके हैं... सभी पोस्टों के मिला कर तो क़रीब दो हज़ार सात सौ लाइक हो चुके हैं। संगीता का फ़ोन आया था... नहीं जानता था कि उसके दिल में मेरे लिये इतनी गहरी भावनाएँ हैं... रो रही थी हिचकियाँ ले रही थी.. अगर यह पोस्ट ना डालता तो संगीता के मन की आवाज़ कभी मुझ तक ना पहुँच पाती।

आज मैं हस्पताल के कपड़ों में अपनी पहली पोस्ट डालने जा रहा हूँ.....नीले रंग के कपड़ों में नरेन..... ज़हर पीने वाला नरेन उसी रंग के कपड़ों में.... सुनो पोस्ट लिख ली है...

''दोस्तो आज हस्पताल पहुँच गया हूँ। मेरा ब्लड प्रेशर फिर से लिया गया - आप फ़ोटो में देख ही रहे हैं... हाथ के बाहरी हिस्से में सैलाइन ड्रिप के लिये तैयारी कर दी गई है। कहते हैं कि तीन से पाँच घन्टे का ऑपरेशन होगा। मगर जनरल एनेस्थीसिया से बाहर आने में काफ़ी समय लग सकता है। ऑपरेशन से पहले यह शायद मेरी अंतिम पोस्ट है। यदि मौक़ा मिला तो एक बार फिर आपसे बात करना चाहूँगा... मैं सच्चे मन से भगवान् का धन्यवादी हूँ कि मुझे पूरे विश्व से इतना प्यार मिल रहा है।ज महसूस होता है कि दवाइयों के साथ-साथ आपका स्नेह और प्यार भी मेरी रगों में दौड़ रहा है।''

शमा बुरा भी लग रहा है कि पुष्पा रानी और आशालता ने कोई टिप्पणी नहीं की है... कोई बात नहीं... देखूँगा कि मेरे मरने की ख़बर पर उनकी क्या प्रतिक्रिया होती है।

आज व्हाट्सएप ग्रुप भी बना दिया है... नरेन मल्होत्रा सेहत अपडेट... उसमें क़रीब पाँच सौ सदस्य बना दिये हैं। यह ख़्याल रखा है कि जो-जो इन्सान मुझ से जलता है, नफ़रत करता है, उन सबके नाम इस ग्रुप में ज़रूर डालूँ। इसे जान बूझ कर अंग्रेज़ी में बनाया है। संदेश भी अंग्रेज़ी में ही दिया है - क्योंकि यह अपने यार राज की तरफ़ से लिखा है। राज को हिन्दी में बताता गया और वह पट्ठा अंग्रेज़ी में लिखता गया, ''दोस्तो, मेरा नाम राज है - नरेन का ख़ास दोस्त। बचपन से ही मित्र हैं हम... एक ही स्कूल में पढ़े। आज राज की सर्जरी है... क़रीब पाँच से छः घन्टे लगने वाले हैं। सर्जरी के बाद नरेन क़रीब दो दिन रिकवरी रूम या आई.सी.यू. में रहने वाला है। इस बीच मैं आपको उसकी तबीयत के बारे में ताज़ा जानकारी देता रहूँगा।''

व्हाट्स्एप पर भी धड़ाधड़ संदेशों की बारिश सी होने लगी है। काश मैं इंस्टाग्राम और ट्विटर पर भी होता... मुझे दोनों का सिस्टम ही समझ नहीं आता... अगर हो जाता तो कितना ज़बरदस्त हंगामा हो

जाता...

फ़िलहाल तो मैं फ़ेसबुक पर ज़्यादा ध्यान दे रहा हूँ... थोड़ा सा व्हाट्सएप पर। वैसे राज ने इस काम में मेरा पूरा साथ दिया है। अगर वह चाहता तो मेरा भाण्डा फोड़ सकता था... मेरे सबसे बड़े राज़ का हमराज़ है राज...उसने रिक्वरी रूम में आकर भी मेरे कुछ फ़ोटो खटाखट खींच लिये। बेसुध पड़ा नरेन... नाक पर एक मोटी सी पट्टी... फ़ेसबुक मित्र भी बहुत भोले होते हैं। किसी ने नहीं पूछा कि भाई अगर आपको पैन्क्रियाज़ का कैंसर है तो आपकी नाक क्यों पकौड़ा बनी हुई है। सब एक ही चीज़ की ओर ध्यान दे रहे थे... हस्पताल के कपड़े; ग्लुकोज़ का ड्रिप; और बेसुध पड़ा मैं...

मुख्य काम तो अब शुरू होने जा रहा था। राज ने पहला अपडेट तो डाल ही दिया। ''दोस्तो, मैं रॉयल मार्स्डन हस्पताल के डॉ. पीटर और उनके पूरे स्टाफ़ का धन्यवाद करना चाहता हूँ कि ऑपरेशन सफल रहा। नरेन अभी एनेस्थीसिया के असर से बाहर नहीं आया है। उसके होश में आते ही अपडेट दूँगा। फ़िलहाल लगता है कि बला टल ही गई है। ऑपरेशन थियेटर में जाने से पहले आप सबके प्यार के कारण नरेन की आँखें नम थीं। मुझे आप सबके विश्वास पर पूरा भरोसा है... वह पूरी तरह से ठीक हो जाएगा।''

हम भारतीय कितने इमोशनल होते हैं शमा... मुझे मालूम है कि जो भी इन पोस्टों को पढ़ रहा होगा उसकी आँखों में भी पानी आ ही रहा होगा। आज सुबह तक कुल मिला कर चौदह पोस्टस लग चुकी थीं। कहीं भी एक सौ से कम लाइक्स नहीं थे... अधिकांश में पचास से अधिक टिप्पणियाँ थीं। और मेरी पोस्टों पर तो आठ से नौ सौ तक संख्या पहुँच चुकी है।

मैं तय नहीं कर पा रहा कि मौत की सूचना बस सूचना हो या फिर पूरा इमोशनल फ़ण्डा। क्योंकि वो पोस्ट तो पूरी तरह से राज की पोस्ट होगी... सोचता हूँ कि व्हाट्सएप और फ़ेसबुक पर एक ही पोस्ट डाली जाए औऱ वो भी छोटी। आज ही राज से बातचीत करता हूँ। वैसे राज ना होता तो मेरे लिये यह प्रयोग कर पाना संभव ही नहीं होता।

शमा बस वो घड़ी आ चुकी है..... राज ने मेरी फ़ोटो खींच ली है... हस्पताल के बिस्तर पर मृत पड़ा मैं... यानि कि मेरी लाश... हस्पताल के कपड़ों में... मैंने पोस्ट बना ली है... आज पोस्ट करने जा रहा हूँ...

''दोस्तो आज आपको एक दुःखद समाचार देने जा रहा हूँ। मेरा प्यारा दोस्त कैंसर जैसी भयानक बीमारी से जूझता हुआ कल रात नींद में ही चल बसा। सर्जरी से पहले उसने मुझे कहा था – प्यारे दुनिया में अकेला ही आया था... अकेला ही रहा हूँ... अकेला ही चले जाना है। रोना मत मेरे प्यारे... याद रखना... ऐसी करनी कर चलो तुम हँसो जग रोए.....मैं रो नहीं सकता क्योंकि मेरे यार ने मुझे ऐसा करने से रोक दिया था... आप अपने मित्रों को सूचना दे सकते हैं।... हस्पताल में उसका अंतिम चित्र इस पोस्ट के साथ लगा रहा हूँ।''

धमाका हो गया शमा... बीस मिनट में ही एक सो सैंतीस कमेंट्स आ चुके हैं। पहली बार हुआ है कि कमेंट्स लाइक्स से कहीं अधिक आ रहे हैं। मेरे प्रकाशक, मेरे फ़ेसबुक मित्र, मेरे मित्र सभी इसे साझा कर रहे हैं... फ़ेसबुक आज नरेनमई हो गया है... आज तो चक्रधारी अग्रवाल तक ने पोस्ट शेयर की है... वामपन्थी, मध्यमार्गी, दक्षिणपन्थी सभी मेरे प्रति श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं। मेरे ठहाकों की बातें हो रही हैं... शमा तुम फ़ेसबुक पर क्यों नहीं हो... तुम होतीं तो देखतीं कि मेरा फ़ेसबुक ग्राफ़ कहाँ से कहाँ पहुँच गया है।

मुझे एक बात बताओ शमा... क्या एक सप्ताह बाद मुझे यह कह देना चाहिए कि मेरा फ़ेसबुक अकाउण्ट हैक हो गया था और किसी ने मेरी बीमारी और मौत की झूठी ख़बर फैला दी है?... कितने दिन तक मरा रहना ठीक होगा ?

आज तो लंदन के लेखकों ने भी मेरी मौत पर आँसू बहाने शुरू कर दिए हैं। सब पूछ रहे हैं कि अंतिम संस्कार किस क्रेमेटोरियम में होने जा रहा है। आज तो उप-उच्चायुक्त तक ने व्हाट्सएप पर संदेश छोड़ा है... शमा आज पहली बार ज़िन्दगी जीने लायक लग रही है... मर जाने के बाद... पूरी तरह से कन्फ़्यूज़्ड हूँ कि अगला क़दम क्या होना चाहिए।

शमा मैं पागल होता जा रहा हूँ... आज तो सात सौ पन्द्रह कमेंट्स हो गए हैं... आज लाइक्स की परवाह नहीं हो रही... बस सोचता हूँ कि एक हज़ार कमेंट्स पार हो जाएँ...

शमा जानता हूँ कि तुम मेरा फ़ोन नहीं उठाओगीज फ़ेसबुक पर तुम हो नहीं और मैं व्हाट्सएप पर यह सब भेज नहीं पाऊँगा... मेरा मोबाइल बार-बार बज रहा है... मैं तो मर चुका हूँ भला कैसे उठाऊँ फ़ोन... आज भोपाल के अजय सिंह और कानपुर के प्रियव्रत ने भी फ़ेसबुक पर मेरी शान में क़सीदे पढ़े हैं। हरि सिंह तो फ़ेसबुक पर बार-बार मेरे बारे में कुछ लिख रहा है... जब उन सबकी पोस्टों पर मिले कमेंट्स और लाइक्स के बारे में सोचता हूँ तो दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगता है... क्या सच में मेरे मरने से लोग इतने विह्वल हो रहे हैं !

अब मुझ से बरदाश्त नहीं हो रहा शमा... दो हज़ार से ऊपर कमेंट केवल मेरी पोस्ट पर...मेरा दिल ज़ोर-जोर से धड़क रहा है... कहीं मेरा हार्ट फ़ेल ना हो जाए... आज तुम्हारी ज़रूरत महसूस हो रही है... तुम हमेशा मेरी लगाम खींच कर मुझे सच्चाई की कठोर ज़मीन पर खड़ा रखती थीं...

मेरे सामने मेरे कम्प्यूटर की स्क्रीन पर धड़ाधड़ कमेंट चले आ रहे हैं... मेरे हाथ पैर सुन्न पड़ते जा रहे हैं शमा... अचानक माथे पर ठण्डे पसीने आने लगे हैं... लग रहा है जैसे ज़मीन घूम रही है... मैं कहीं गिर ना जाऊँ... काश इस समय मेरे साथ राज होता... शमा... शमा... शमा.... राज... मुझे बचा लो राज...और सन्नाटा छा गया...राज ने पत्र से सिर उठाया...एक बार इधर-उधर देखा... बेडरूम, बाथरूम... नरेन कहीं नहीं... किचन की तरफ़ गया... नरेन का शरीर फ़र्श पर पड़ा था... आँखें ऊपर को चढ़ी हुई और उसके हाथ में एक शीशी थी जिसमें इलायचियाँ थीं... बोतल खोलने का अवसर नहीं मिला था... उसका दिल लाइक्स और कमेंट्स की घंटियों की आवाज़ को सह नहीं पाया था... दौरा ज़बरदस्त पड़ा होगा... आख़िरी शब्द राज के कानों में गूँज रहे थे राज मुझे बचा लो राज... नरेन मरना नहीं चाहता था... मगर कम्प्यूटर स्क्रीन पर लगातार लाइक्स और कमेंट्स की टिंग टिंग जारी थी....

***

# कर्फ़्यू

चौधरी मदन मोहन 'समर'

तवे पर रोटी पलटते हुए चूल्हे में से लकड़ियाँ बाहर खींच कर जग्गो ने उन पर पानी डाला फिर एक नज़र दरवाज़े की तरफ उठाई। दरवाज़े पर किसी तरह की हलचल न पाकर उसने अपनी झुकती हुई कमर को दुनिया का बोझ समझ कर उठाने के लिए घुटनों पर हाथ रख कर सहारा दिया और खड़ी हो गई। आग बुझाने के बाद भी तवे में इतना ताप तो बाकी रह ही जाता है कि आख़री रोटी पूरी तरह से सिंक जाए। फिर उसने एक पलटी रोटी को दी और खींचते हुए दरवाज़े तक गई। दरवाज़ा भी क्या, पुराने सड़ रहे पटियों को जंग लगी कीलों के सहारे ठोंक कर कुत्ते-बिल्ली के निर्बाध प्रवेश को रोकने के लिए बनाई गई ओट भर थी। फिर वैसे भी दरवाज़ा तो घर के लिए होता है तथा घर का अर्थ कभी भी एक टूटा हुआ चूल्हा, एक फटी हुई छींदे (खजूर) की चटाई तथा पुराने पीपे में ठूँस कर रखी एक धोती, चार जगह तुरपाई की गई कमीज़ व पैबंद लगे पजामें पर कतई नहीं होता।

दरवाज़े पर जाकर जग्गो ने अपनी कमज़ोर हुई आँखों पर बरसों पुराने धागे से बँधे एक काँच के चश्मे की मदद से दूर तक देखा लेकिन हरिया उसे आता दिखाई नहीं दिया। वह फिर कमर को सीधी कर चूल्हे के पास आई अधसिकी रोटी को चूल्हे में बचे ताव पर रख सेंकने लगी। रोटी सिंक गई तो हमेशा की तरह रोटियाँ लपेट कर रख दीं।

एक बार फिर उसने दरवाज़े की तरफ देखा लेकिन इस बार हरिया के आने की आहट उसे सुनाई नहीं दी। हरिया का रास्ता देखते-देखते उसने कोने में रखे छींदे की टिपरियाँ उठाई तथा चाकू और रस्सी लेकर बचे हुए छींदे की झाड़ू बनाना शुरू कर दी।

आजकल शहर के मिज़ाज काफी गर्म चल रहे है पिछले सात साल से ही शहर ने अपना मिज़ाज बदला है। पहले ऐसी-वैसी कोई बात नहीं थी। सब मिल-जुल कर रहते थे। होली व ईद पर सब गले लगा करते थे। ढोल मंजीरे व माँदल की थाप से महीने भरे पहले पता चल जाता था कि होली आ रही है। मगर अब शहर में पुलिस की गाड़ियों की शाँय-शाँय, गली-चौराहे पर तैनात खाकी वर्दी में खड़े जवानों के हाथ में डन्डे और नीली चितकबरी वर्दी वाली नई किस्म की पुलिस के मार्च करने से लोगों को पता होता है कि कोई त्योहार आ रहा है। फिर जैसे-जैसे त्योहार पास आता-जाता है वैसे-वैसे शहर की धड़कनें बढ़ती जाती है। कन्ट्रोल की दुकान वाला मिट्टी का तेल देने में आना-कानी करने लगता है। पंसारी की दुकान पर टँगी रेट लिस्ट सिर्फ दिखावे के लिए रह जाती है। भीड़ इतनी बढ़ जाती है कि पंसारी और ग्राहक किसी को भी हिसाब मिलाने की फुर्सत नहीं रह पाती। बाकि बड़े लोगों की बस्ती में लोगों को और क्या-क्या चाहिए यह तो जग्गो को पता नहीं उसे तो बस नून, तेल, आटा और मिट्टी का तेल से मतलब है सो इसकी जानकारी उसे रखनी पड़ती है।

आज भी शहर के मिज़ाज को देख जग्गो काफी बैचेन थी। घर में रखे पीपे में से पोटली निकाल उसे फटकार कर आज उसने रोटी बनाई थी। कल के बचे छींदे से पाँच झाड़ू और बनी थीं। बाज़ार में दस रुपये से ज़्यादा इसके कोई नहीं देता। उसे हरिया का इंतज़ार इसलिए था कि वह जल्दी से छींदा लेकर आ जाए तो वह पाँच सात झाड़ू और बना कर बीस-बाईस रुपये कमा दो ढाई किलो आटा तो लाकर घर में रख ले ताकि कोई ऐसी-वैसी बात हो जाए तो टाईम-बेटाईम रोटियाँ पेट में झोंक कर ज़िन्दा रहा जा सके।

हरिया को न आता देख वह मन ही मन बुदबुदाने लगी। पता नहीं सुबह से गया है लौटा नहीं। यार दोस्तों में खेलने लग गया होगा। फिर वह हरिया के दुर्भाग्य पर विचार करने लगी। हरिया जग्गो का इकलौता पोता है। इस दुनिया में हरिया के सिवाय उसका कोई है

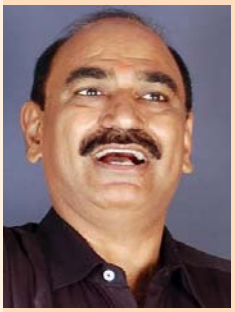

काव्य क्षेत्र में 54 वर्षीय चौधरी मदन मोहन 'समर' को तुलसी माखन सम्मान (2005), श्री राम शरण गुप्त स्मृति सम्मान (2009), स्व. ओमप्रकाश श्रीवास्तव स्मृति सम्मान (2015), पं. दीन दयाल उपाध्याय साहित्य सेवा सम्मान (2016), कर्म श्री सेवा सम्मान (2017) एवं विभागीय कार्य हेतु 425 से अधिक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।
प्रकाशित कृतियाँ :
समर समेटे साक्ष्य (काव्य संग्रह)
संप्रति : पुलिस अधिकारी (मध्यप्रदेश पुलिस)
संपर्क : 16, श्री होम्स, चूना भट्टी, कोलार रोड, भोपाल मध्यप्रदेश 462042
मोबाइल : 9425382012, 9179052222
ईमेल : samar_kavi@yahoo.com

भी नहीं। यह लड़का भी बदनसीबी अपने साथ लेकर पैदा हुआ था, दुनिया में आया तो माँ दुनिया से चली गई। जग्गो ने रुई के फोहो से बकरी का दूध पिला-पिला कर बड़ा किया। पढ़ने जाने की उमर आई तो बाप को सड़क खा गई। ट्रक भी टक्कर मार कर ऐसा ग़ायब हुआ पता ही नहीं चला। पता चलता तो मुआवजा ही मिल जाता जो थोड़ा बहुत काम तो आता। अब यही हरिया उसका सहारा था। हरिया सुबह-सुबह जाता छींदे काट कर ला देता जग्गो झाड़ू बनाती फिर बेच कर दोनों प्राणी दो जून की रोटी खाकर ज़िंदा रहने का स्वाँग पूरा करते।

जग्गो की तंद्रा टूटी पुलिस की गाड़ी का सायरन सुन। सायरन की आवाज़ जग्गो के कानों में मानों पिघले हुए सीसे की तरह पड़ी। उसके दिल की धड़कन बढ़ने लगी। देखते ही देखते पुलिस वालों के जूतों की आहट भी बढ़ गई तथा चलो भागो... दिखना मत... आदि की आवाज़ें सुनाई देने लगी। जग्गो को जिस बात का डर था वही हुआ। लाउड स्पीकर पर मुनादी भी होने लगी- सब अपने-अपने घरों में चले जाओ। कोई भी व्यक्ति अपने घर से बाहर नहीं निकलेगा। इस आदेश का उल्लघंन करने वाले के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जाएगी। जग्गो का दिल बैठने लगा। एक तो घर में खाने को दाना नहीं, दूसरा हरिया घर से बाहर पता नहीं कहा फँसा होगा। पुलिस के हत्थे चढ़ गया तो हाथ-पैर तुड़वाएगा सो तुड़वाएगा, जेल अलग जाएगा। वह फिर दरवाज़े पर आई।

अबकी बार उसकी चाल में कुछ तेज़ी सी आ गई थी। उसने दरवाज़े से बाहर झाँका तो बाहर खड़े हुए हेड साहब ने ललकारते हुए कहा बुढ़िया घर में घुस जा कर्फ़्यू लग गया है।

ऐ... साब... ऐ साब! कह कर जब तक जग्गो हेड साहब को बुलाए तब तक लाल बत्ती वाली गाड़ी को देख कर हेड साहब सैल्यूट मारने गाड़ी के पास चले गए। जीप गाड़ी में बैठे साहब की अस्पष्ट सी आवाज़ जग्गो ने सुनी कि जो भी घर से बाहर दिखे उसके साथ सख्ती से पेश आना। सख्ती शब्द सुनकर जग्गो की सख्त हड्डियाँ मानों ढीली पढ़ने लगी। हरिया अभी भी घर के बाहर जो था।

वह अब बौराई सी घर में टहलने लगी। कभी आसमान की तरफ देख कर हाथ जोड़े कभी दरवाज़े की तरफ देखे। उसे पिछले कर्फ़्यू की घटना याद हो आई। जब बगल वाली फ़रदीन के बेटे आरिफ को गोली लगी थी। गोली लगने के बाद भी वह बच तो गया था मगर अब वह न ज़िन्दों में है और न मुर्दों में फरदीन आज भी उसे देख-देख कर रोती है।

अब उसका गला सूखने लगा था। वह पानी पीने के लिए मटके की तरफ बढ़ी ही था कि दरवाज़े पर धाड़-धाड़ की आवाज़ के साथ ही अरे... रे... रे... की कराहट सुनाई पड़ी। दरवाज़े पर लड़खड़ाता हुआ हरिया घर में घुस रहा था। पीछे-पीछे हेड साहब डन्डा जमाते हुए कह रहे थे... ''साला- बदमाश पता नहीं कर्फ़्यू लगा है'' हरिया को देखकर जर्जर होती जग्गो में मानों विद्युत प्रवाहित हो गई वह दौड़ कर गई और झपटकर हरिया को अंदर खींच लिया। हरिया को सहलाते हुए रुआँसी होकर बोली- ''क्यों रे इतनी देर लगा दी? कहाँ चला गया था रे''

हरिया का हाँफना कम नहीं हुआ था। वह अम्मा... अम्मा कहता हाँफ रहा था। जग्गो ने पानी का गिलास भर कर हरिया को पिलाया तब जाकर हरिया संयत हुआ। संयत होकर उसने जग्गो को बताया कि आज चौपाटी पर कुछ लोग कह रहे थे कर्फ़्यू लग जाएगा। कर्फ़्यू का सुन उसने सोचा कि ज़्यादा छींदे काट कर ले जाए ताकि दो चार दिन का इंतजाम किया जा सके। वह जब छींदे काट कर ला रहा था कि पुलिस की गाड़ी पीछे लग गई। गाड़ी देख छींदे रास्ते में फेंक कर भागा तो कुटते-पिटते जैसे-तैसे यहाँ तक आ सका। इतना बता कर हरिया रोने लगा और जग्गो की गोदी में मुँह छुपा कर बोला- ''अम्मा पुलिस वाले पकड़ कर ले जाएँगे तो तेरा क्या होगा?'' ''नहीं बेटा नहीं... कोई पकड़ कर नहीं ले जाएगा।'' हरिया को दिलासा देते हुए जग्गो ने कहा।

धीरे-धीरे हरिया की पिंडली पर सूजन आने लगी थी शायद हेड साहब का डंडा ज़रा ज़ोर से उसके पैर पर लग गया था। उसे चलने में भी तकलीफ होने लगी थी। जग्गो ने चूल्हा जलाया और उसमें ईंट का एक टुकड़ा डाल कर उसे गरम किया, फिर कपड़े में लपेट कर हरिया के पैर की सिकाई करने लगी। हरिया को जाकर कुछ आराम हुआ तो वह रोटी ले आई। पाँच में से दो रोटियाँ हरिया को खिलाई एक रोटी खुद खाई। कल की चिन्ता करते हुए दो रोटियाँ अनिश्चिता भरे समय के लिए रख दी। अब कर्फ़्यू का कोई भरोसा नहीं था कि कब तक उठे।

रात गुज़री पूरा दिन गुज़र गया। सड़क पर पुलिस के कदमों तथा एक के पीछे एक भागती बत्तीवाली गाड़ियों के अलावा गली में न तो दूध वाले का भोंपू सुनाई दिया और न ही शंकर दादा की चाट गरम की आवाज़ सुनाई दी। हाँ दो एक अख़बार वाले बिल्ला लटकाए कुछ अख़बार बाँट गए थे। दरवाज़े में से झाँकने पर जहाँ तक नज़र दौड़ती थी दरवाज़े बंद दिखाई देते थे। अलबत्ता कुछ कम उम्र के बच्चे कौतुहलवश किसी पुलिस वाले से दोस्ती गाँठने की कोशिश में उसे पानी पिलाते नज़र से टकरा जाते थे। साथ ही आसमान में मँडराती पतंगों की संख्या में कुछ असामान्य इज़ाफ़ा हो गया था। वैसे तो पंतगें किसी शहर की शांति एवं अमन चैन का प्रतीक होती हैं किन्तु कर्फ़्यू के तनाव युक्त व भयभीत माहौल में क़ैद लोगों ने शहर की शांति के स्थान पर अपनी आत्म शांति का मार्ग पतंगों में ढूँढ़ निकाला था। समय का सदुपयोग पतंगें उड़ाने के लिए किया। इस तरह पतंगों की प्रासंगिकता ही बदल गई। अब आसमान में चील-कौओं की तरह मँडराती पतंगें किसी शहर में लगे कर्फ़्यू का संकेत लगने लगी हैं।

जग्गो ने शाम तक इंतज़ार किया। कर्फ़्यू नहीं खुला घर में सिर्फ पाँच झाड़ू बनी रखी थीं। कर्फ़्यू हट जाता तो वह झाड़ू बेच आती। उसने विचार किया कर्फ्यू में हर वस्तु महँगी हो जाती है तो झाड़ू भी तो दो रुपये की जगह तीन रुपये में बिकेगी। मगर शाम तक कर्फ्यू नहीं हटा। एक कोने में एक प्याज़ और तीन हरी मिर्च रखी थी। प्याज़ और हरी मिर्च को सिलबट्टे पर रगड़ लिया थोड़ा सा नमक डाल कर चटनी तैयार की। कल की बची दोनों रोटियाँ लेकर हरिया से बोली- ''ले खा ले'' हरिया ने थाली की तरफ देखा- दो रोटी व चटनी लिए दादी बैठी है। ''अम्मा तू नहीं खाएगी?'' हरिया ने जग्गो से सवाल किया।

''नहीं बेटा मुझे भूख नहीं है''- अपने बिना दाँतों के चेहरे पर एक मुस्कान लाते हुए जग्गो ने कहा।

''अम्मा भगवान् सब ठीक करेगा, जल्दी कर्फ़्यू हट जाएगा तू रोटी खा ले।''

''बेटा, बुढ़ापे में भूख मर जाती है।'' इतना कह जग्गो ने कौर अपने हाथ से हरिया के मुँह में दिया तो ऐसे लगा जैसे उसके हृदय में धरती के पाँचों महासागर हिलोरे लेने लगे हों।

आज सूरज ने औपचारिकता भर पूरी की थी। सुबह पूरब से निकला शाम को पश्चिम में चला गया। पुलिस वाले भी ड्यूटी करते-करते उकता गए थे। उनकी वर्दी पर शुरूआती कड़कपन अब दिखाई नहीं दे रहा था। बल्कि झुँझलाहट और थकान के ग्राफ में बढ़ोत्तरी हो रही थी। शाम चार बजे एक गाड़ी आई थी वह गिनती कर-कर के कुछ पैकेट पुलिस वालों को दे गई थी। पैकट में चार-पाँच पूरियाँ और आलू की सब्जी थी। जग्गो ने गिरती हुई दीवार की झिरी से देखा था हेड साहब और उसके मातहत सिपाही ने सड़क पर खड़े-खड़े पूरियाँ चबाई थीं तथा बगल वाले मकान से एक लोटा पानी माँग कर पिया, एक लम्बी डकार ली तथा फिर चौकस हो गए। व्यक्ति को आराम करने के नाम पर चार दिन तक घर से निकलने का मौका न मिले तो चल जाएगा। लम्बी तान कर सोएगा। लेकिन यदि आज़ादी को प्रतिबंधित कर दिया जाए तो आदमी को अपना घर ही पिंजरा लगने लगता है। इसी प्रतिबंध के चलते कुलबुलाहट होने पर रात में जग्गो की नींद खुली रात काफी बीत चुकी थी। इन दिनों सप्त ऋषि तारा मण्डल आधी के बाद उदय हो रहा था। जबकि इस समय सातों ऋषि आसमान में साफ दिखाई दे रहे थे। कुत्तों के भौंकने की आवाज़ें सन्नाटे को तोड़ रही थीं। बीच-बीच में सड़क पर दौड़ती पीली बत्ती की झकपक-झकपक एक अजीब सा खलल पैदा कर रही थी। बाहर ड्यूटी पर तैनात दोनों पुलिस वाले ठंड में ठिठुर रहे थे। सुबह अख़बार वाले से लिए चार अख़बार भी जल चुके थे। हेड साहब ने मातहत को कहीं पुराना टायर का टुकड़ा लाने के लिए कहा ताकि कुछ देर तक आग साथ दे सके। जग्गो से आख़िर रहा नहीं गया वह दो-तीन लकड़ियाँ लेकर बाहर आई तथा हेड साहब से बोली 'साहब ये लकड़ियाँ ले लो।'

पुलिस वालों ने पहले एक निगाह जग्गो पर डाली फिर हेड साहब बोले 'वाह अम्मा तेरा भगवान् भला करे, अब ठंड दूर हो सकेगी।' लकड़ी लेकर सिपाही ने आग में झोंक दी।

'क्यों साब, यह कर्फ़्यू कब तक चलेगा?' जग्गो ने हिम्मत करके पूछा।

'अम्मा, यह तो हमें नहीं पता।' इतना कह कर हेड साहब दोनों हाथ आग तरफ कर पंजों से सहारे बैठ गए। फिर बुदबुदाने लगे- 'अरे अम्मा इस रोज़ -रोज़ की मारा-मारी से तो तंग आ गए हैं। सरकार एक बार छूट दे दे तो हम बताएँ कैसे शरारती तत्वों को सुधारा जा सकता है।'

हेड साहब की बात सुनकर सिपाही बोला- 'गेहूँ के साथ घुन तो पिसेगा मगर बरसों तक लोग उत्पात मचाना छोड़ देंगे। आ अम्मा तू भी ताप ले।'

सिपाही ने जग्गो को पिंजरे से बाहर निकल कर पंख फड़फड़ाने का अवसर दिया। जग्गो भी डरते-डरते अपने ओटले पर बैठ गई। सिपाही अपनी पीड़ा दबा नहीं सका और फिर एक प्रवाह में बहते हुए कहने लगा -'हद हो गई ड्यूटी की भी कल सुबह से टँगे हैं दो दिन बीत गए घर में घरवाली बीमार है। आज बिटिया का जन्मदिन था बेचारी दिन भर रास्ता देखते-देखते रोती-रोती सोई होगी। कल से न नहाए, न धोए ऐसी भी क्या नौकरी हैं।'

अपनी वरिष्ठता का ध्यान करते हुए हेड साहब ने दिलासा देने वाले अंदाज़ में कहा -'सुना है कल रामादीन पंडित, काजी हबीब खाँ, ज्ञानी संतोष सिंह, फादर डेनियल, कुछ पत्रकार और नेता लोग कलेक्टर के साथ मीटिंग करने वाले हैं। कोई तो हल निकलेगा।'

हेड साहब का यह जुमला सिपाही का दिल नहीं बहला पाया। एक आक्रोश भरे स्वर में लकड़ी की राख के गुल को झटकारते हुए उसने ठंडी साँस खींचते-खींचते कहा -'अरे दिवान जी, इस मीटिंग से कुछ नहीं होगा। यही सब जड़ हैं इस फसाद की- यह लोग आग जलाएँ रोटियाँ सेंके और मरे जनता, परेशान पुलिस।'

'साब जी गरीब की तो सब जगह मौत है। घर में न आटा है न भाजी कल कैसे काम चलेगा। कुछ समझ में नहीं आता।' कुल बुलाहट भरे शब्द जग्गो के अन्दर से निकले।

'हाँ अम्मा देखो- अब जो सबके साथ वह तुम्हारे साथ।' कहते हुए हेड साहब ने जग्गो को दिलासा देना चाहा। तब बत्ती की झकपक फिर पास आती देख दोनों पुलिस वाले गाड़ी की तरफ बढ़े लेकिन गाड़ी बिना रुके सीधी चली गई शायद गाड़ी में मौजूद साहब को झपकी लग गई थी। इधर जग्गो भी बत्ती की झकपक से डरकर भीतर चली गई।

सुबह फिर जब सूरज निकला। कल जैसा सन्नाटा था। हाँ दूध वाले, अख़बार वालों को कर्फ़्यू पास दिया गया था। दूध वाले अपनी कमीज़ पर पास चिपकाए दूध बाँट रहे थे। अख़बार वाले सामान्य दिनों से दुगनी प्रतियाँ लेकर सायकल दौड़ा रहे थे। लोग खिड़की में से झाँक-झाँक कर पेपर खरीदने का प्रयास कर रहे थे ताकि अख़बार से ही शहर के बारे में कुछ जानकारी मिल सके।

दोपहर को सरकार के आला अफसरों ने मीटिंग ली। जनता के प्रतिनिधि कहलाने वाले झक सफेद कपड़ों में तैयार होकर सरकारी गाड़ियों में बैठ मीटिंग में हिस्सा लेने के लिए पहुँचे। धर्म के ठेकेदार, समाज के इंजीनियर, राजनीति के खिलाड़ी तथा गरीबों के स्वयंभू चिकित्सक तथा प्रजातंत्र के जीर्ण-शीर्ण महल में लगे चौथे स्तंभ मीटिंग में शामिल हुए। कर्फ़्यू लगे दो रातें तथा पूरा दिन गुज़ारने के बाद आधा दिन और बीत गया था। लोग घरों में बिलबिला रहे थे। शहर की हवा में अभी भी एक तरह की तल्खी नज़र आ रही थी। मीटिंग में सभी पक्षों ने एक-दूसरे पर लानत-मलानत थोपी। आख़िर में निर्णय लिया गया कि शाम को साढ़े तीन बजे से साढ़े पाँच बजे तक कर्फ़्यू में महिलाओं और बच्चों को छूट दी जाएगी। कोई भी पुरुष घर से बाहर नहीं निकलेगा। इस निर्णय के बाद मीटिंग समाप्त हो गई।

लाउड स्पीकर लगी पुलिस की गाड़ियों से मुनादी की जाने लगी। साढ़े तीन बजे से महिलाओं व बच्चों को बाहर जाने की इजाज़त का सुन कर इन्हें ऐसा लगा मानों बरसों से कैद पंछी को किसी ने कहा दिया

हो तुझे आज़ाद किया जा रहा है। महिलाओं के चेहरे खिल गए बच्चे चहकने लगे जग्गो के चेहरे पर भी एक विचित्र सी चमक दिखाई देने लगी।

फिर जैसे ही साढ़े तीन बजे ऐसा लगा जैसे शीतल बयार गुलाबों से लदी बगिया को शरारत के साथ छेड़ गई हो। एक बाँध सा फूट गया। शहर ऐसा लगने लगा अचानक किसी विधवा की माँग में किसी ने सिन्दूर सजा दिया हो। पंसारी की दुकान पर उसकी लड़कियाँ व पत्नी पहुँच गईं। संजू की चक्की की घड़घड़ाहट सुनाई देने लगी। भाजी-तरकारी वाली टोकरे सिर पर रख निकल पड़ी।

जग्गो भी अपनी पाँच झाड़ू हाथ में लेकर बेचने निकल पड़ी चौपाटी के पास उसे सड़क पर दूर तक बिखरे हुए व कुचले हुए छींदे दिखाई दिए। हरिया की मेहनत को यूँ मरते हुए देख जग्गो के आँसू बह निकले। वह अपनी चिर-परिचित जगह पर जा खड़ी हुई। भीड़ आ रही थी। फिर जा रही थी। सभी अपनी ज़रूरत की वस्तुएँ खरीद रहे थे। सब भाजी-तरकारी व राशन पानी पर टूट रहे थे। ऐसे में किसे फुर्सत थी कि वह झाड़ू खरीदने का समय निकाले। वैसे भी ऐसे माहौल में झाड़ू की कोई उपयोगिता भी नहीं रहती। वक्त के मिज़ाज के अनुसार किसी ने भी जग्गो से झाड़ू खरीदना तो दूर किसी ने उका दाम तक नहीं पूछा।

धीरे-धीरे समय बीतता जा रहा था। जग्गो अब चिल्लाने लगी थी- झाड़ू ले लो, लेकिन आपाधापी के शोर में जग्गो की व्याकुलता भरी पुकार दब कर खो जाती थी।

इतने में पुलिस की गाड़ी मुनादी करती निकल गई- 'सवा पाँच बज गए है कर्फ़्यू की अवधि समाप्त होने को है आप लोग घरों को रवाना हो।' इतना सुन जग्गो का कलेजा बैठने लगा, वह घर कैसे जाएगी। झाड़ू वापस ले जाना आज उसे दुनिया का सबसे बड़ा बोझ दिखाई दे रहा था।

वह दौड़ती हुई एक मकान के सामने पहुँची बोली- 'बाई जी झाड़ू ले लो।'

नहीं चाहिए - अंदर से एक बेरुखी सी आवाज सुनाई दी।

बहन जी झाड़ू ले लो- पास के मकान के बाहर खड़े हो उसने बड़ी आशा से पुकारा जग्गो के कानों में निराशा भरा स्वर फिर सुनाई दिया अब जग्गो का कलेजा बैठने लगा था। उधर कर्फ़्यू समाप्त होने की अवधि पल-पल घटती जा रही थी। जग्गो फिर एक मकान के सामने चिल्लाई- झाड़ू ले लो बाई जी झाड़ू। जो मरजी आए वह दे देना- लेकिन मकान का बंद दरवाज़ा नहीं खुला।

सामने के मकान पर उसने एक संभ्रात सी महिला को जल्दी-जल्दी बढ़ते देखा। वह यह मौका खोना नहीं चाहती थी। वह दौड़ती-दौड़ती महिला के पास गई। हाथ जोड़ कर बोली- बाई जी पाँच झाड़ू है रख लो। बस पाँच रोटी दे दो। मुझे पैसे नहीं चाहिए। वह अपनी बात पूरी करे इतने में सायरन बजाते हुए पुलिस की गाड़ी मुनादी करते पास आ गई- 'कर्फ़्यू में छूट का समय खत्म हुआ।' आप लोग घरों में जाएँ अन्यथा कानूनी कार्यवाही की जाएगी। सायरन व मुनादी सुनते ही वह संभ्रात महिला घर में घुस गई व दरवाज़ा बंद कर दिया। जग्गो अवाक् हो वही जड़ जैसे खड़ी रह गई। बाकी घरों के दरवाज़े हड़बड़ी में फटाफट बंद हो चुके थे। ड्यूटी पर मौजूद जवान ने जग्गो से कहा- अम्मा जल्दी भाग जा कर्फ़्यू लग गया है।

पंडित जी आरती की तैयारी कर रहे थे। मौलवी जी मस्जिद की नमाज़ के लिए अज़ान दे रहे थे। गुरुद्वारे में प्रकाश कर सुखमणी साहब का पाठ प्रारम्भ हो चुका था। गिरजे में भी घन्टा बजा कर मोमबत्तियाँ लगा दी गई थीं। कर्फ़्यू की छूट में महिलाएँ घर का सामान ले आई थीं। घरों में छोंक-बघार की गंध उठ रही थी। पुलिस वालों की ड्यूटी की बदली कर दी गई थी। फिर से कर्फ़्यू लागू हो चुका था। सड़क पर कुछ कुत्ते के पिल्ले, थोड़े से आवारा साँड, नालियों से निकलकर आते सुअर, इक्के-दुक्के प्रभावशील पासधारी, ड्यूटी पर तैनात पुलिस वाले तथा शहर का जायज़ा ले रहे प्रशासनिक अफसर दिखाई दे रहे थे।

जग्गो, हरिया द्वारा कर्फ़्यू में फेंके गए छींदों पर अपने पैर रख काँधे पर पाँचों झाड़ू लटकाए चुपचाप निढाल सी जा रही थी शायद कर्फ़्यू की बंदिशें उस पर कोई असर नहीं करने वाली। घर पर हरिया टुकुर-टुकुर दरवाज़े को देख रहा था इस आशा के साथ की अम्मा रोटी लेकर आ रही है...।

***

## लघु कथा

# एक छत

गोविन्द भारद्वाज

'पापा.. पापा ... ये डिपार्टमेंटल स्टोर क्या होते हैं?' सात वर्षीय आदित्य ने अपने पापा से पूछा। आदित्य की जिज्ञासा शांत करते हुए पापा ने बताया, 'बेटा डिपार्टमेंटल स्टोर ऐसी विशाल दुकान होती है जिसके अंदर सब कुछ ग्राहकों को एक जगह मिल जाता है।'

'मतलब पापा...? 'आदित्य ने अनभिज्ञता दिखाते हुए पूछा।

'बेटा मतलब ये कि एक ही छत के नीचे सब कुछ सामान मिल जाना। ये पाश्चात्य संस्कृति की तर्ज पर है बेटा.. इसे मॉल भी कहते हैं।' पापा ने खुलकर बताया।

इस पर आदित्य मुस्कुराया तो पापा ने पूछा, 'तुम मुस्कराए क्यों भई?'

आदित्य ने तपाक से कहा, 'पापा एक छत के नीचे सब कुछ मिलने की संस्कृति तो हमने अपना ली, लेकिन एक छत के नीचे रहने की परम्परा भूला दी। अब ऐसे घर कहाँ देखने को मिलते हैं जिसकी छत के नीचे सारा परिवार रहता हो।' आदित्य के पापा उसका जवाब सुन कर अपने घर की छत को ताकने लगे।

***

संपर्क: पितृकृपा, पीलीखान,नईबस्ती, पुलिस लाईन, अजमेर (राजस्थान) 305001
मोबाइल : 9461020491

# मौलाना

शहादत

फ़ज़र की नमाज़ पढ़ने के बाद सकीला ने दरवाज़े से झाँका तो नमाज़ी लोग मस्जिद में नमाज़ के लिए जा रहे थे। उसने सोचा कि चलो अभी तो नमाज़ भी नहीं हुई। जमात होने से पहले ही वह घूम कर आ जाएगी।

उसने सिर पर अच्छे से लिपटे दुपट्टे पर शॉल ओढ़ा और नहर की ओर चल दी। फरवरी खत्म हो चुका था और मार्च भी आधा बीत चुका था। इसके साथ ही दिन-रात की सर्दी तो खत्म हो गई थी लेकिन अभी सुबह और शाम की हल्की ठंड बाकी थी। इसी ठंड से पेड़ों और झाड़ियों पर ओंस की नन्हीं-नन्हीं बूँदें बेशकीमती मोती की तरह चमक रही थी।

नहर की पूर्वी दिशा में बस्ती और पश्चिम दिशा में खेत-खलिहान होने के कारण वहाँ चलने के लिए एक अच्छा और चौड़ा रास्ता बना हुआ था। रास्ते के दोनों ओर आम, नीम, शीशम और जामुन के घने छायादार पेड़ खड़े थे और उनके आस-पास काँटेदार झाड़ियाँ। दूसरी तरफ जंगल और खेत थे। उस रास्ते पर खेतों में काम करने वाले किसान और घास लेने जाने वाली औरतों के अलावा शायद ही कोई चलता था। इसीलिए सुबह नमाज़ के बाद बहुत से लोग नहर पर टहलने आते तो उनमें से अधिकतर टहलने की बजाय फारिग होने आते, जिनमें औरतों और बूढ़ों की तादाद ज़्यादा होती।

सकीला नहर पर पहुँची तो उसे थोड़ी सर्दी के साथ सुबह की ठंडी हवा ने अपने आगोश में दबोच लिया। ताज़ी ठंडी हवा को अपने फेफड़ों में भरते हुए वह खुद में खोई हुई चली जा रही थी। फिर अचानक उसने पलटकर अपने आगे-पीछे देखा तो उसे सिवा अपने वहाँ कोई नज़र नहीं आया। उसने सोचा कि शायद आज बाकी औरतें या तो उससे पहले घूम कर जा चुकी है या उनमें से अभी तक कोई आई नहीं हैं।

वह इसी सोच में गुम थी कि उसने अपने सामने की झाड़ियों में कुछ चलता हुआ देखा। पहले तो वह बिल्कुल खामोशी के साथ एकटक उस ओर देखती रही। फिर जब हलचल का दायरा बढ़ता हुआ अपनी सीमा को लाँघकर उसकी तरफ आने लगा तो वह डर गई। वह झाड़ियों को गौर से देखते हुए, अपनी जगह से चार-पाँच कदम पीछे हट गई।

तभी झाड़ियों में से एक काले-सफेद रंग का चित्तीदार कुत्ता, जो अपने मुँह में एक सफेद कपड़ा दबाए था, निकला और उसके सामने आकर खड़ा हो गया।

अपने सामने इस तरह कुत्ते को देखकर पहले तो वह डर के कारण अपनी जगह से हिली नहीं, फिर जल्दी से झुकी और अपने पैर की चप्पल निकालकर कुत्ते को मारने को लपकी। जैसे ही उसने कुत्ते को चप्पल हाथ में लेकर दुत्कारा, कुत्ता अपने ऊपर होने वाले हमले को भाँप गया और कपड़े को वहीं छोड़ दुम दबाकर भाग गया।

कुत्ते के जाने के बाद उसने अपनी जीत की खुशी में एक लम्बी साँस ली और हाथ की चप्पल को नीचे डाल, अपने दोनों हाथों को आपस में झाड़ते हुए उसे पैर में पहनने लगी।

युवा कहानीकार शहादत की कहानियाँ अहा !ज़िंदगी, कथादेश, नया ज्ञानोदय, कथाक्रम, समालोचन.कॉम, राजस्थान पत्रिका, पाखी, कोलकाता.कॉम, जानकीपुल, हस्ताक्षर, जनकृति, ई-परिवर्तन, लिटरेचर पॉइंट, स्वर्ग विभा और शतदल समय आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित।
संप्रति रेख़्ता (ए उर्दू पोएट्री साइट) में कार्यरत।
संपर्क:
मोबाइल: 7065710789
ईमेल: 786shahadatkhan@gmail.com

चप्पल को अच्छी तरह से पहन और अपनी चादर को ठीक कर सकीला जब आगे की ओर चलने लगी तो उसकी निगाहें बरबस ही उस कपड़े की ओर चली गईं जिसे कुत्ता वहाँ छोड़ कर भागा था। उसने देखा कि कपड़ा अपने-आप ही हिल रहा था। वह कपड़े के पास गई तो, कपड़े से बाहर निकली छोटी-छोटी उँगलियों को देखकर अवाक रह गई।

सकीला ने जल्दी से कपड़ा को उठाकर देखा तो उसमें एक नवजात शिशु लिपटा हुआ था। कपड़े में बच्चें को लिपटा देख सकीला ने लगभग चीखते हुए अपने से ही कहा, ''हाय अल्लाह, बच्चा! और वो भी नवजात। फिर छोड़ गई होगी कोई कल-मुँही। अल्लाह! इन नासगइयों से जब खसमों के बिना रहा नही जाता है तो माँ-बाप से कहकर ब्याह क्यों नही करा लेती हैं। क्यों इस तरह इन मासूमों की ज़िदंगी बर्बाद करती हैं।''

अपनी बात खत्म कर सकीला ने बच्चें को ठीक से कपड़े में लपेटा कि कहीं उसे ठंड न लग जाए, और अपने आप-पास देखा कि कहीं कोई आ तो नहीं रहा है।

मोहल्ला कस्बे के बिल्कुल आख़िर में पश्चिमी दिशा में बसा हुआ था। उसके एक तरफ दिल्ली-सहारनपुर रोड थी जो उसे कस्बे से जोड़ती थी, तो दूसरी तरफ यमुना नहर थी जो कस्बे की सीमा निर्धारित करने का काम करती थी। इसके बाद कोई बस्ती नहीं थी। था तो सिर्फ जंगल और खेत-खलिहान। कस्बे का एकमात्र सरकारी अस्पताल भी दिल्ली रोड पर ही था। इसी से लगते कई और प्राइवेट अस्पताल भी खुल गए थे। इसलिए यहाँ इस तरह के बच्चे मिलने कोई नई बात नहीं थी। इससे पहले भी यहाँ ऐसे कई फेंक दिए गए लावारिस बच्चे मिल चुके थे।

बच्चा, जिसके नन्हें-नन्हें हाथ, पैर और चेहरा ठंडी हवा लगने से लाल हो गए थे, कहीं मर हुआ तो नहीं है यह देखने के लिए सकीला ने उसके सीने पर हाथ रखा तो उसकी धड़कनें चल रही थीं।

उसने एक बार फिर आने जाने वालों को देखा और जल्दी से उसे अपनी चादर में इस तरह छुपाया कि वह किसी को दिखे नहीं। चादर को अच्छी तरह अपने ऊपर लपेट वह घर की ओर चल दी।

सकीला ने घर आकर सबसे पहले बच्चे को उस गंदे कपड़े में से निकालकर जिसमें वह लिपटा था, साफ कपड़े में लपेटा और फिर उसे रात का रखा दूध निवाया कर (हल्का गर्म) रूई के फाए से पिलाकर सुला दिया।

बच्चे को सुलाकर वह इस तरह बेफिक्री से घर के रोज़मर्रा के कामों में लग गई कि जैसे कुछ हुआ ही नहीं।

सकीला पचास-पचपन साल की एक बूढ़ी महिला थी। उसके शौहर का इंतकाल हो चुका था और दोनों बेटियों की शादी हो चुकी थी। बेटे नाम की कोई शै उसके पास नहीं थी इसलिए वह अब अकेले ही रहती थी। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए उसने कुछ बकरियाँ पाल रखी थी जो उसके लिए करने को कोई-न-कोई काम तैयार रखती थी। इससे उसे भी अपने अकेलेपन से कुछ राहत मिलती, और जो समय बचता उसे अपने नमाज़ रोज़े में लगाती।

आँगन में झाड़ू लगाने के बाद उसने बकरियों को छप्पर में से निकालकर बाहर बाँध दिया और उन्हें रात का रखा घास डाल दिया। फिर वह चूल्हें पर अपने लिए चाय बनाने लगी।

जब वह चाय पी रही थी तभी उसे बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई दी। चाय का प्याला रख वह अंदर चली गई और बच्चे को गोद में उठा लिया। लेकिन वह लगातार रोए जा रहा था, किसी तरह भी चुप नहीं हो रहा था। उसी वक्त बाहर गली से गुज़र रही आपा सलीमन, जो इसी साल हज करके आई थी और जिनकी उम्र और दीनदार होने की वज़ह से पूरी बस्ती इज़्ज़त करती थी, बच्चे के रोने की आवाज़ सुनकर रुक गई। उसने सोचा, सकीला तो अकेली रहती है फिर उसके यहाँ यह बच्चे कि आवाज़ कैसी? लगता है उसकी बेटियाँ आई हुई। चलो उनसे ही मिलती चलूँ। कितने दिन हो गए उनसे मिले भी।

यह सोच कर आपा सलीमन ने सकीला के घर का दरवाज़ा खोला और उसे पुकारती हुई अंदर चली गई।

आपा सलीमन की आवाज़ सुनकर सकीला गोद में बच्चे को लिए, उसे चुप कराती हुई बाहर आई और ''आइये आपा जी'', कहते हुए एक प्लास्टिक की कुर्सी बैठने के लिए उनकी तरफ बढ़ा दी।

आपा सलीमन ने कुर्सी पर बैठते हुए कहा, ''कैसी हो सकीला?''

''ठीक हूँ आपा जी। आप कैसी हैं?'' सकीला ने कहा।

''अल्लाह का शुक्र है। मैं भी ठीक हूँ। ये बच्चा किस का उठाए हो? कौन सी बेटी आई हुई है?'' आपा सलीमन पूछा।

''वे कहाँ आपा? उन्हें अपने घर से फुर्सत मिले तब ना... वैसे भी वे अपने बाल-बच्चों में खुश रहे, हमें कौन-सा उनसे यहाँ हल चलवाना है'', सकीला ने जवाब दिया।

''हाँ ये बात तो है। ससुराल में बेटियाँ खुश रहें माँ-बाप के लिए इससे ज़्यादा खुशी की कोई बात नहीं। पर जब कोई बेटी नहीं आई तो फिर ये बच्चा किसका है?''

''बच्चा! ये तो मुझे नहर पर मिला।''

''क्या?'' आपा सलीमन ने चौंकते हुए कहा, ''वहाँ फिर से बच्चा मिला?''

''हाँ'', कहकर सकीला ने आपा के चेहरे की ओर देखा और उन्हें पूरी बात बताने लगी-

''सुबह नमाज़ पढ़कर जब मैं नहर पर घूमने गई तो पता नी कहा से एक कुत्ता अपने मुँह में गंदा कपड़ा दबाए पास की झाड़ियों में छुपा बैठा था। जब मैंने उसे धमकाकर भगाया तो वह उसे वहीं छोड़ कर भाग गया। मुझे थोड़ेई पता था कि उसमें बच्चा है, वो तो मुझे बाद में पता चला जब मैंने उसे उठाकर देखा।''

''और तू उसे घर ले लाई'', आपा सलीमन ने तंज़ करते हुए कहा।

''और क्या करती?''

''क्या करती?'' आपा सलीमन ने डाँटने वाले अंदाज़ में कहा, ''क्या तुझे नगीं पता कि मौलाना ने ऐसे लावारिस बच्चों को उठाकर घर लाने से मना किया है। क्या पता किनकी नाजायज़ औलाद होते हैं? इन्हें घर लाकर कौन अपना ईमान खराब करेगा।''

''क्या? मुझे तो इस बारे में कुछ नहीं पता'', मोलाना की बात पर सकीला ने अपनी अनभिज्ञता ज़ाहिर की।

''तेरा ध्यान दीन (धर्म) की तरफ हो तभी तो पता चले। पता नहीं सारा दिन घर में क्या करती रहती है। ना इज्तमें (औरतों की

दीनी मजलिस) में आती है न ही दीन की बात सुनती है'', आपा सलीमन उसे नसीहत करते हुए अपनी बात खत्म की।

ठीक ही कह रही थी आपा सलीमन भी। बीते दिनों जब इस तरह से फेंके गए एक के बाद एक कई लावारिस बच्चें मिले तो, मौलाना ने इनके संभावित माँ-बाप के धर्म को आधार बनाकर एक रोज़ जुमा के दिन यह ऐलान कर ही दिया कि कोई भी मुसलमान भाई-बहन जिसे इस तरह के बच्चा मिले तो वह उसे उठाकर कतई अपने घर न लाए। वह या तो इसके बारे में पुलिस में इत्तिला करे या उसे वहीं पड़ा रहने दे। क्योंकि पता नहीं ये किन काफ़िरों और बुतपरस्तों की नाजायज़ औलादें होती हैं?

मौलाना की बात पर जब कुछ लोगों ने यह कहते हुए आपत्ति दर्ज कराई कि इसमें उन बच्चों का क्या कसूर है? तो मोलाना ने कुरान की उस आयात की मनघड़ंत व्याख्या सुनाकर, जिसमें लिखा है कि यहूदी और बुतपरस्त कभी भी मुसलमानों के दोस्त नहीं हो सकते, उन लोगों की बोलती बंद कर दी। फिर उन्होंने पूरे एतमाद के साथ दावा करते हुए कहा कि और हो न हो ये लावारिस बच्चे जिन्हें बेदर्दी के साथ फेंक दिया जाता है वे बिला शक बुतपरस्तों की ही नाजायज़ औलादें हैं।

''तो अब मैं क्या करूँ?'' सकीला ने सवाल करते हुए आपा सलीमन से पूछा।

''क्या करूँ?'' आपा सलीमन उसी की बात दोहराते हुए कहा, ''वहीं डाल आ जहाँ से लाई है।''

''नहर पे। और वो भी अकेले।'', सकीला ने दु:खी होते हुए कहा।

''और क्या? वरना अपना ईमान खराब करने के लिए रख इसे अपने घर में। और जब लोगों को इसके बारे में पता चलेगा तो वो क्या-क्या बात करेंगे तुझे पता चल जाएगा? और मौलाना तो तुझे ईमान से ही खारिज़ करने का फतवा दे देंगे।''

''फतवा। नहीं, नही मैं इसके लिए अपने ईमान से खारिज़ नहीं हो सकती। मैं कतई इसे अपने घर में नहीं रखूँगी। मैं अभी इसे वहीं छोड़ आती हूँ, जहाँ से इसे लाई थी'', लगभग एक ही साँस में अपनी बात कहते हुए, सकीला घर के अन्दर अपनी चादर लेने चली गई। जब चादर लेकर आई तो तब तक आपा सलीमन भी जा चुकी थी।

चादर ओढ़कर जब सकीला घर से बाहर निकली तो सूरज पूरे आसमान पर फैल चुका था। दोपहर हो गई थी। सूरज अपनी पूरी ताकत के साथ चमक रहा था। जिससे चेहरे और गर्दन पर पसीने की बूँदें पैदा हो रही थी जो इस बात एहसास दिला रही थी कि अब गर्मी दूर नहीं है।

बच्चे को लेकर सकीला नहर पर वहीं जा पहुँची जहाँ वह उसे कुत्ते के मुँह में दबे कपड़े में लिपटा हुआ मिला था। बच्चे को खुद से अलग करते हुए उसके दिमाग में ख़्याल आया, ''इसमें इस बच्चे का क्या कसूर है? इसे क्या पता कि यह हिन्दू है या मुसलमान? और क्या पता यह किसी मुस्लिम औरत का ही हो?'' यह सोचते हुए उसने बच्चे के ऊपर लिपटे कपड़े को हटाया जिसमें वह आँखें मिंचे कुलमुलाह रहा था। सकीला ने उसके लाल चेहरे, छोटे-छोटे होंठ, छोटी सी नाक और बंद और छोटी-छोटी आँखों को ध्यान से देखा। उसने उसके हाथ की नन्हीं-नन्हीं उँगलियों को छूते हुए कहा, ''ओ! कितना प्यारा है.. बिल्कुल पिद्दक-सा'', और उसे प्यार करते हुए उसकी नाक से अपनी नाक मिला दी।

तभी उसे आपा सलीमन की बातें और मौलाना का बयान याद आया। उसने बच्चे को खुद से दूर करते हुए कहा, ''नहीं-नहीं, मैं इसे प्यार नहीं कर सकती... और न ही इसे अपने पास रख सकती हूँ। मैं इसके लिए अपना ईमान नहीं छोड़ सकती।''

उसने बच्चे को वहीं पास ही पड़े पत्थर के टुकड़े पर लिटा दिया और जल्दी से उसकी ओर से मुँह फेरकर घर की ओर चल दी।

सकीला घर की ओर जाने वाले रास्ते पर चल तो रही थी लेकिन उसका सारा ध्यान बच्चे पर ही था। वह सोच रही थी, ''कितना प्यार बच्चा था बिल्कुल नन्हा-सा। छोटे-छोटे हाथ, छोटी-छोटी आँखें, छोटी सी नाक'', हँसते हुए ''और बिल्कुल छोटी-छोटी उँगलियाँ... और वह उस नन्हीं-सी जान को वहाँ, जंगल में अकेला छोड़ आई। अगर उसकी माँ ने लोक लाज के डर से उसे वहाँ फेंक दिया तो इसमें उसकी क्या खता है? फिर ज़रूरी भी नहीं कि वह किसी हिन्दू औरत का ही हो... हो सकता है कि किसी मुसलमान लड़की ने उसे यहाँ फेंक दिया हो। आजकल तो न जाने कितनी कुँवारी लड़कियाँ अस्पतालों में आती ही इन्हीं कामों के लिए हैं। अब कौन बताए कि उनमें कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान। और फिर बच्चों का क्या धर्म होता है, वे तो उसी धर्म के हो जाते हैं, जिसमें वह पलते-बढ़ते है।''

सकीला अपने मन में ये बातें सोचते हुए जा ही रही थी कि उसे अपने माथे और गर्दन पर गर्मी की वजह से पैदा हो गई पसीने की बूँदों को महसूस किया। उसने उन्हें साफ करने के लिए अपने चेहरे पर से हल्की सी चादर हटाई तो उसे अपने सामने से एक कुत्ता जाता हुआ दिखाई दिया। कुत्ते को देखकर वह चलते-चलते रुक गई।

उसका ध्यान जो इस बीच कुछ पल के लिए बच्चे पर से हट गया था वह कुत्ते को देखते ही फिर उसी पर चला गया।

वह सोचने लगी, ''अगर उसे फिर से कोई कुत्ता उठाकर ले गया तो... तो क्या होगा? क्या करेगा वह उसका? उसे फिर से उठाकर कहीं और ले जाएगा या उसे खा लेगा.....'' ये बातें सोचते-सोचते मानों सकीला के कदम बिल्कुल जम गए, वह जैसे आगे बढ़ने का नाम ही नहीं चाहते थे।

''नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता... उसे कोई नहीं ले जा सकता... वह मेरा बच्चा है... मैं इस तरह उसे अकेला नहीं छोड़ सकती'', यह कहते सकीला जल्दी से मुड़ी और दौड़ने के अंदाज़ में नहर की ओर चल पड़ी।

सकीला नहर पर जब उसी स्थान पहुँची गई, जहाँ वह बच्चे को छोड़ कर गई थी तो वह उसी तरह पत्थर पर लेटा हुआ था जैसा वह छोड़ गई थी। उसने दौड़कर बच्चें को अपनी बाँहों में उठा लिया और अपने सीने से लगाते हुए बोली, ''मेरे बच्चा, इसमें तेरा क्या कसूर है... अगर तेरी बेरहम माँ ने तुझे यहाँ फेंक दिया। पर तू फिक्र न कर, मैं तेरी माँ हूँ... मैं तुझे पालूँगी... चाहे इसके लिए मुझे ईमान से ही खारिज़ क्यों न होना पड़े'', और फिर उसे चूमते हुए कहा, ''और मैं तुझे मौलाना नहीं बल्कि एक बेहतर इंसान बनाऊँगी... ऐसा इंसान जो लोगों से नफ़रत नहीं, मोहब्बत करे।''

***

# नूर बानो

अफ़रोज़ ताज

अफ़रोज़ ताज नॉर्थ कैरोलाइना यूनिवर्सिटी, चैपल हिल के एशियाई स्टडी विभाग में एसोसिएट प्रोफ़ेसर हैं और हिन्दी, उर्दू, ब्रजभाषा, अंग्रेज़ी, पंजाबी, संस्कृत और पर्शियन भाषा के ज्ञाता है। अफ़रोज़ जी की प्रकाशित कृतियाँ हैं-The Court of Indra and the Rebirth of North Indian Drama, Darvazah: (दरवाज़ा) A Door Into Urdu: Web-Mounted Elementary Urdu Language Course, U.S. Department of Education, IEPS. <http://taj.chass.ncsu.edu/urdu>, A Door Into Hindi: Web-Mounted Elementary Hindi Language Course., U.S. Department of Education, IEPS. <http://taj.chass.ncsu.edu>, उर्दू हिन्दी के द्वारा-Urdu Through Hindi: Nastaliq with the Help of Devanagari, Tanhaiyan, Ankahi and Ahsas Companion.
संपर्क:102 Trinity Woods Drive, Raleigh, NC 27607
फ़ोन: 9198511119
ईमेल: taj@unc.edu

''मीते ओए मीते''

एक सुरीली, ममता भरी, प्यारी-प्यारी आवाज़ दूर कहीं वर्जिनिया की वादियों से आती सुनाई दी, ठंडे -ठंडे कोहरे में लिपटी हुई माँ की शीतल आवाज़।

''मीते ओए छड दै सरहाणा,'' फिर वही आवाज़।

और फिर मेरी आँख खुल गई। मैं तो भारत में हूँ, अपने कमरे में जहाँ सारा बचपन गुज़रा और जवानी की शुरूआत हुई। मुझे याद आया, मैं कल ही तो आया हूँ अमरीका से अपनी यूनिवर्सिटी की छुट्टियों में। यह मेरी माँ की प्यारी आवाज़ थी।

मैं उठ बैठा। क्या प्यारी नींद थी खुली फ़िज़ा में। पंजाब का छोटा सा क़सबा और उस में मेरा यह कमरा जहाँ मैं बड़ा हुआ। कमरे की हर खिड़की खुली हुई, हलकी-हलकी हवा खेतों को छूकर आते हुए मेरे कमरे में लटके कपड़ों से छेड़ छाड़ कर रही थी।

मैं खड़ा हो गया। सामने खिड़की से वह गली साफ़ दिख रही थी जहाँ मेरा बचपन मेरी दोनों छोटी बहनों के साथ बीता। दूर गली में जहाँ रेढ़ी में सब्ज़ी बेचने वाला खड़ा है, उसके उस तरफ़ ही मेरी नानी के मकान की छत दिख रही थी जहाँ मैं पतंगें उड़ाया करता था। मेरा मन बेचैन हो उठा उस घर में जाने के लिये। नानी के हाथ की पिन्नियाँ मैं कभी न भूलूँगा दुनिया की सबसे अच्छी मिठाई।

मैं हमेशा अपनी मम्मी से कहता,

''आपने कुछ न सीखा नानी से... न उन जैसा प्यार न पिन्नियाँ।''

मम्मी चिढ़ कर कहती, ''जा भाग अपनी सगी अम्माँ के घर।''

वास्तव में नानी ही थीं मेरी सगी अम्माँ या बड़ी अम्माँ... मैं ही क्या, दोनों बहनें भी नानी की दीवानी थीं। रात को खाना खाया और तीनों सीधे भागे नानी के घर। नानी का घर हमारे घर से ज़्यादा दूर न था। हमारी गली के बराबर वाली गली उनकी थी। बस यूँ कह लीजिए कि दो क़दम की दूरी थी। नानी बिलकुल अकेली रहती थीं, हमें ख़ुश करने में मस्त, अपने छोटे-छोटे कामों में मग्न।

कामों में सबसे बड़ा काम था उनका हमें रात को कहानियाँ सुनाना, कुछ सच्ची कुछ मनघड़न्त। एक सच्ची कहानी मैं कभी नहीं भूल सकता, जो उन्होंने अपने बचपन की हमें सुनाई, अपनी सहेली नूर बानो के बारे में। वे बोलीं-

''मुझे और नूर बानो को खेत की मेंड पर बैठ कर हरे-हरे, कच्चे-कच्चे, मीठे-मीठे मटर खाने में बड़ा मज़ा आता था। हम घण्टों घण्टों गेहूँ के लहलाते खेतों में कबड्डियाँ भरते थे और खेत वाले चाचे की फटकारें सुनते थे। हमें लड़कों के साथ जलती दोपहरियों में गलियों में गिल्ली डण्डा या काँच के कंचे खेलने का बड़ा शौक़ था। हम दोनों के

घरवाले हमें ये सब करने से बहुत रोकते, डाँटते पर भला कौन माननेवाला था। ज़रा आँख बची और हम बाहर। लाख पहरे लगाने के बाद भी मैं और नूर बानो एक दूसरे को सन्देस आसानी से दे देते थे, कैसे? यह बाद में बताऊँगी। हम दोनों में बड़ा याराना जो था। हम दोनों के घरवाले हम दोनों की दोस्ती से बिलकुल नाख़ुश थे। इसलिए नहीं कि मैं सिखों की बेटी हूँ और वह मुसलमानों की। इस तरह की बातें हमारे गाँव में कोई भी नहीं सोचता था। सब एक दूसरे के साथ रह रहे थे सदियों से एक ही तरह मिल जुलकर। साथ-साथ खाते, साथ- साथ खेलते, साथ-साथ रोते, साथ-साथ हँसते। एक दूसरे के लिये प्रेम में कोई कमी न थी।

''हाँ मगर, हमरे प्रेम में कुछ और बात थी। वे सोचते थे हम एक दूसरे को बिगाड़ रहे हैं। मुझे आज भी नूर बानो की चूड़ियों की भोली-भोली खनक याद है।''

यह कहते-कहते नानी रुक गईं, शायद उस खनक को दोबारा सुनने की कोशिश कर रही थीं। कमरे में मद्धम-मद्धम रोशनी थी। नानी का चहरा थोड़ा-थोड़ा दिख रहा था, जैसे अँधेरे में रूई। मगर उनकी आँखों की चमक देखी जा सकती थी। शायद अतीत के सितारे उनकी आँखों में उतर आए थे। नानी के कमरे का वातावरण बड़ा नर्म गर्म हुआ करता था। कमरे में घुसते ही लगता मानों हम माँ की गोद में उतर रहे हों। नानी हमें बिस्तर में लेटे-लेटे ही कहानियँ सुनातीं। हम भी तीनों बहन-भाई एक-एक करके नानी के बिस्तर में घुसते जाते और टप टप एक के बाद एक टपकते जाते नींद की बेला में। और वे हमें और थपक कर हमारी नींद पक्की कर देतीं। जादू की बात यह थी कि सुबह को हम अपने ही घर में पाए जाते। शायद हमारे सोने के बाद हमारे माँ-बाप उड़न खटोले बन कर हमें नानी के घर से उड़ाकर ले जाते होंगे।

मैं सबसे बड़ा था। मेरी आयु शायद बारह तेरह साल की रही होगी। दोनों बहनें मुझ से छोटी थीं, प्रकाश और रंजीत। काश मैं भी उतना छोटा होता जो इस कहानी को भुला सकता। मेरा नाम मेरी नानी ने रखा था। वे कहतीं, ''पुत्तर, तू ही तो है मेरी बात तक पहुँचने वाला, तू ही तो है मेरे मन का सखा, मेरा मन का मीत।''

वे मुझे मनमीत कम और मीते ज़्यादा कहतीं। और जब कभी मैं रोनेवाला होता तो कहतीं, ''रोना नहीं, मेरे मन के मीत।''

हम तीनों बचपन से ही एक साथ खेलते खाते, मिलते लड़ते आए हैं। बड़े शैतान थे हम तीनों। सारा घर हमारे सामने हार मानता था। कभी यह चीज़ तोड़ी, कभी वह तोड़ा, कभी यहाँ कूद, कभी वहाँ कूद।

मगर नानी के घर में घुसते ही सीधे हो जाते। एक जादू सा छा जाता, लोरी सी सूँघ जाती। शैतानियों से थके हुए नानी के कूल्हे से ऐसे लग जाते जैसे दिन भर के थके माँदे परिन्दे अपने घौंसले की आग़ोश में जाने के लिये अपने मज़बूत पेड़ से आ लगे हों। माहौल ही ऐसा था, भीनी-भीनी धूप बत्ती की गंध, जैसे गौमुख के रास्ते में कोई देवी का ख़ामोश मंदिर जिस में यदाकदा ही कोई पुजारी टपक जाता हो।

आँगन में अनार का पेड़, बरामदे के ऊँचे-ऊँचे दरों पर लिपटी हुई महकती ख़ामोश बेलें और कहीं-कहीं जली हुई ईंटों के धुएँ के निशानों को छुपाती हुई फुलवारियाँ, गए वक़्तों की कहानियाँ कह रही थीं। मुझे यहाँ की ईंट-ईंट, चौखट-चौखट एक कहानी कहते दिखती... क्या कहानी, इस को समझने के लिये मेरी उम्र न थी।

मगर हाँ, नानी के कमरे में प्रवेश करते ही सब सन्नाटा हो जाता, समय ठहर जाता, वर्त्तमान काल में। लगता हम तीनों कमरे में नहीं बल्कि ममता की गोद में उतरते जा रहे हैं। माँ की गोद से गर्म और नर्म और कौनसी जगह हो सकती है भला? हम तीनों को देखते ही उनकी बाहें ऐसे फैल जातीं जैसे हम हर शाम नहीं बल्कि बरसों बाद मिले हों। उनके घने सफ़ेद बालों की लहरों में अथाह समुद्र लहरें मारता था। मेरे हाथ उन लहरों को छूने से बाज़ न आते। हम तीनों उनके हिलते होंठों को टिकटिकी बाँधे देखते रहते जिनसे कबूतर के परों से भी नर्म गर्म उनके बचपन की यादें हमारे दिमाग़ों में उतरती जातीं।

वे हम तीनों को अपनी रज़ाई में अच्छी तरह ढकती जातीं और कहती जातीं, ''हाँ, तो मैं कह रही थी कि नूर बानो और मेरी दोस्ती से दोनों ख़ानदान परेशान थे।''

यह कह कर नानी अंदर ही अंदर हँस पड़ीं और बोलीं, ''हमारा गाँव बड़ा खुला-खुला था। खुले-खुले दिमाग़ के लोग, खुले-खुले खेत, घने-घने बाग़ और घने-घने आम के बाग़ों में ऊँची-ऊँची झूलों की पींगें। नूर बानो और हमारे घर के बीच केवल एक दीवार थी। दीवार के बीच में कुआँ आधा इधर आधा उधर। कुएँ के ऊपर की दीवार लोहे की पटरी पर बनी थी। रात-रात भर मैं और वह अपने-अपने कुएँ की मेंड पर बैठ कर गुटर-मुटर न जाने क्या क्या बातें करते रहते थे। वह उधर मैं इधर। जब तक कि हमारी अम्माँ और उसकी मामी की डाँट न पड़ जाये। कुआँ ही हम दोनों के संदेसों का सहारा था। जब भी घूमने को दिल चाहता तो हम में से मैं या वह डोल खड़का देते फिर क्या था, यह गए.... वह गए। फिर किसके हाथ आते? वैसे तो हमारे घर और उसके घर में एक खिड़की भी थी मगर वह सिर्फ़ खानों, पानों, या नानों के आदान-प्रदान में खुलती थी, या मेरी अम्माँ या उसकी मामी की बातचीत के लिये खुलती थी। दोनों को घण्टों-घण्टों बातें करते सुना। एक दिन हम ने सुना वे कह रही थीं, 'अब कुछ साल में हमारी बच्चियों की शादी की फ़िक्र शुरू हो जाएगी।' अम्माँ बोलीं।

'नूर बानो तो बचपन से ही मेरे रिश्तेदारों में मंगी हुई है।' उसकी मामी ने कहा।

'हमारी उम्र वैसे तो ऐसी न थी कि शादी की बात हो। अभी मुशकिल से दस दस साल की उम्रें होंगी शायद।'

नानी ने एक लंबी साँस भरके कहा, 'इसी उम्र में हम दोनों बिछड़े थे।'

'नानी क्या?' मेरे मुँह से निकला।

'हाँ, फिर उसके बाद नूर बानो मुझे कभी न मिली मगर हाँ एक दिन उसका संदेस आया कि वह जहाँ भी है, बहुत ख़ुश है, मैं यह सुन कर बहुत ख़ुश हुई, मैं उसकी ख़ुशी में ख़ुश थी।'

मैंने देखा कि नानी की आँखों में आँसू तैर रहे थे, शायद ख़ुशी के, जैसे माज़ी की शमा पिघल पड़ी हो, मैंने अँधेरे में दो चमकते मोती सुर्मई आँखों की कोरों से कानों की तरफ़ ढलकते देखे।

वह एक गहरी साँस भरके बोलीं, ''वह रात मेरे दिमाग़ से कभी भुलाई नहीं जा

सकती, जब रात के लगभग एक दो बजे थे, बारिश रिमझिम-रिमझिम बरस रही थी। किसी ने दरवाज़े की कुण्डी खटखटाई। सबसे पहले मैं उठ पड़ी। कोई मेरे पिताजी को पुकार रहा था। पिता जी घबराकर उठ बैठे।

'कौन है? रात गए आया है।'

'दरवाज़ा खोला गया, हमारे पड़ोसी थे। अमरजीत, मदनलाल, चौधरी राम किशन, और उनके साथ कुछ और लोग। बहुत देर तक पिता जी से बातें करते रहे। मैंने पूरी कोशिश की पर बात समझ नहीं आई। किसी बात पर बहस हो रही थी। पिता जी कह रहे थे, 'यह सब बकवास है, मैं नहीं मानता, कहीं ऐसा भी हुआ है, पुरखों से बने रश्तों की भी तो कोई मर्यादा होती है।'

'पर सरदार जी, हम तो आपको बताने आए हैं।'

'अच्छा हुआ बता दिया... जाओ, सो जाओ, और हमें भी सोने दो... मैं इन बातों पर यक़ीन नहीं करता।'

'यक़ीन न करने से क्या बात नहीं होती, सरदार जी। जो बात होनी है, वह होके रहती है। हम आपका सम्मान करते हैं। बहस नहीं करना चाहते... मगर इतना अवश्य कहेंगे कि अगर कुछ अनर्थ हो गया तो इस के ज़िम्मेवार आप होंगे।'

'बाहर न जाने क्या बातें होती रहीं, कुछ सुनाई दिया, कुछ नहीं सुनाई दिया। मैं अंदर से कान लगाए बात के मुद्दे को समझने की कोशिश करती रही। एक बार नूर बानो का नाम भी आया, तो कभी उसके मामा मोहसिन अली का नाम आया। तो कभी उनके मकान का ज़िक्र हुआ। मैं टूटे ताने-बाने जोड़ने की कोशिश करती रही। कुछ कहानी बन नहीं पा रही थी और लगता था कि इस रात गए काफ़ी लोग हमारे मकान के आगे जमा थे। बातें चल रही थीं और मैं उलझन में पड़ी समझने की कोशिश करती रही। दिल ने चाहा बाहर दरवाज़ा खोलकर चीख़कर कह दूँ कि मुझे भी तो बताओ कि माजरा क्या है। पर मुझ बच्ची की कौन सुनता। मेरी आवाज़ अंदर घुटकर रह गई। बहसें ख़त्म हो के न देती थीं। अचानक मेरे पिता जी ज़ोर से चीख़े, उनका एक एक शब्द मेरी समझ में आ रहा था, 'अच्छा, ठीक है, जो चाहो कर लो, मैं यह नहीं कर सकता। तुम लोगों की बातें मेरी समझ में बिलकुल नहीं आतीं।'

'किसी ने मेरे पिता जी को समझाने की कोशिश की इस पर पिता जी ने बुलंद आवाज़ में कहा, 'आप लोग जाइए, अब काफ़ी रात हो चुकी है। नूर बानो के पुरखों से हमारे पुरखों का सदियों से नाता है। पिछली कई पीढ़ियों से घरों के बीच खिड़की लगी है। एक तंदूर है, एक ही कुआँ आधा-आधा। उन पर आँच आएगी तो हम खड़े हैं। कैसे कह दें कि वे अपने पुरखों का मकान छोड़कर किसी अंजान जगह भाग जाएँ। क्या तुम्हें पता है यह मकान नूर बानो के पिता मरने से पहले बिन माँ की बच्ची नूर बानो के नाम कर गए थे और मुझ से कह गए थे कि यही मेरी बेटी है और यही बेटा, सरदार जी मेरी बेटी को शादी के बाद भी इसी घर में बसाना। इसके ईंट गारे में मेरे पूर्वजों का पसीना है, और मैंने उसके पिता से हाँ कर दी। कैसे कह दूँ नूर बानो के मामा मामी से कि तुम तीनों घर छोड़कर भाग जाओ।'

किसी ने कहा, 'वे फिर वापस आ सकते हैं, ज़रा आग ठंडी हो ले, फिर सब ठीक हो जाएगा। अभी लोगों पर ख़ून सवार है। उनको मालूम है कि केवल यही मकान रह गया है, बाक़ी सब ख़ाली हो गए। वे लोग इन लोगों के ख़िलाफ़ मिस्कौट बना रहे हैं।'

पिता जी भड़क उठे।

'कौन है वे लोग? उनको मेरे सामने करो। क्या वे इनसान नहीं?'

'वे इनसान तो हैं सरदार जी मगर वे उस तरफ़ से जो ज़ख़्म लेकर आए हैं, उन्होंने उन्हें हैवान बना रखा है। वे हमारी नहीं सुनते।'

फिर इसके जवाब में पिता जी की कोई आवाज़ न सुनाई दी। मैंने एक हलकी सी आहट पर पीछे मुड़कर कुएँ की तरफ़ देखा, कुएँ की दीवार के उस तरफ़ तीन साये नज़र आए, नूर बानो और उसकी मामा-मामी के। शायद वे अपने आँगन से यह सब सुन रहे थे। पिता जी घर में लौटकर आए और उन्होंने इन तीन सायों से कहा, 'यह घर तुम्हारा है भाई साहब, खिड़की से अंदर आ जाओ। आज से तुम लोग यहीं रहोगे। यहीं सोओगे और यहीं खाओगे। नूर बानो हमारी बेटी है। मुल्क के टूटने से रिश्ते नहीं टूटते, कुएँ नहीं सूखते, तंदूर नहीं बुझते।'

'माता जी ने मामी जी का हाथ पकड़ लिया और अंदर उतार लाईं। आँसू पोंछकर बोलीं, 'नींद नहीं आ रही? चलो साथ साथ सोते हैं।'

गले लगाकर बोलीं, 'हाय, तेरा दिल कितना धड़क रहा है।'

नूर बानो मुस्कराकर मेरी ओर सिमट कर आ गई।

'हाय....काश! यह रात कभी न गुज़रती, इतनी ख़ुश थी नूर बानो मेरे साथ। पूरी रात हम चुपके-चुपके खुसर-पुसर लूडो खेलते रहे, सुबह के होने का बेचैनी से इन्तज़ार करते रहे, सूरज की रोशनी में एक दूसरे का हाथ पकड़ कर खेतों में चौकड़ियाँ भरने को बेचैन होते रहे।

मगर क्या पता था कि सूरज काला मुँह लेकर निकलेगा। पिता जी ने न जाने सुबह-सुबह क्या ख़बर सुनी कि मामा-मामी और नूर बानो को अपने अंदर वाले तहख़ाने में जा छुपाया, और कहा, 'हमने सफ़ाई करवा दी है, कुछ रोज़ यहीं रहना होगा। जब वातावरण ठंडा हो जाएगा, तो सब ठीक हो जाएगा, मगर मौसम तो पल-पल गर्मी पकड़ने लगा।

पिता जी के दादा ने यह तहख़ाना अपने बड़े कमरे के बीच में खुदवाकर बनवाया था ताकि इस में क़ीमती सामान चोरों की निगाह से बचाकर रखा जा सके। मैं और नूर बानो इस को बिच्छू घर कहते थे। सुना करते थे कि कभी इस में साँप बिच्छू भी निकल आते थे। हम दोनों आँख मिचौली खेलते में कभी इस में छुपना चाहते तो कीड़ों मकोड़ों और अम्माँ की लताड़ के डर से इस से दूर ही रहते थे। हमने घर के लोगों को बाँस की नसैनी से इसमें उतरते चढ़ते देखा था। आज नूर बानो को इस तहख़ाने से डरने का भी समय न था। वह बेझिझक अपने मामा-मामी के साथ जल्दी-जल्दी तहख़ाने में उतर गई। लालटैन की रोशनी में मैंने उसका चहरा देखा। उसने मेरे पिता जी की ओर ऐसे देखा जैसे ढोर क़साई के हाथ में जाने से पहले अपनी मासूम आँखों से अपने मालिक को देखता है। मेरी उसकी आँखों से आँखें मिलना मैं कभी न भूलूँगी।

दूसरी रात लगभग एक दो बजे दरवाज़े पर धड़धड़ दस्तक हुई बहुत ज़ोर-ज़ोर से।

'दरवाज़ा खोल सरदार, तूने क़ातिलों को घर में छुपा रखा है। बाहर निकाल उन्हें! तुझे पता नहीं इनके लोगों ने हमारी माँ-बहनों के साथ क्या-क्या सुलूक किये हैं।'

माता जी उस समय पूजा कर रही थीं। पिताजी सो रहे होंगे। माता जी पूजा वहीं अधूरी छोड़कर और दिया वहीं पटख़कर तहख़ाने की तरफ़ भागीं और तहख़ाने का दरवाज़ा भड़ से बंद कर दिया। लगता था बाहर काफ़ी आदमी थे। मैं काँप रही थी। फिर आवाज़ आई,

'अगर दरवाज़ा नहीं खोला सरदार तो हम तोड़ देंगे।'

पिताजी क्या करते, नींद से भर्राई आवाज़ में बोल पड़े, 'इनके लोगों ने किया है, इन्होंने तो नहीं। हम सुबह निकाल देंगे उन्हें, रात में नहीं। वे हमारे महमान हैं, सो रहे हैं।'

इस पर बाहर वालों की हिम्मत बढ़ गई, क्योंकि पिता जी ने महमानों की हामी भर ली थी।

'अगर महमान हमारे हवाले नहीं किए तो हम तुम्हारे घर में आग लगा देंगे, सरदार। फिर न कहना क्या हुआ।'

बाहर की रोशनियों से ज़ाहिर था कि उनके हाथों में आग की मशालें थीं। लोग ज़ोर- ज़ोर से हमारे दरवाज़े पर वार करने लगे और फिर दरवाज़े के जलने की गँध आने लगी।

इतना कहकर नानी अपनी सिसकियों को रोकने लगीं। मैंने पूछा, 'फिर क्या हुआ नानी जी।'

नानी अपने को सँभालकर बोलीं, 'एक दम मेरी माता जी ने नूर बानो को तहख़ाने से घसीटकर अनाज की नान्द में कुदवा दिया, और सीधी दरवाज़ा की ओर एक डण्डा उठाकर भागती हुई गईं। बोलीं, 'ख़बरदार जो तुमने हमारी औरतों को हाथ लगाया। मैं सिखणी हूँ। मुझे ग़ुस्सा न दिलाना।'

बस इतने में कुछ मर्द माता जी को रास्ते से धक्का दे कर हटाने लगे, पर उन्होंने आसानी से हार न मानी।

'फिर???'' एक दम हम सब के मुँह से निकला।

'मैं नहीं जानती, चारों ओर धुआँ ही धुआँ था..... बाक़ी कल सुनाऊँगी।''

एक दम नानी फूट कर रो पड़ीं।

दूसरे दिन का मौसम अजीब सा था। बारिश की बौछार, और उस पर सर्दी। मुहावटें पड़ रही थीं, शायद। मैं सारा दिन सोचता रहा, क्या हुआ होगा? क्या लोग घर के अंदर घुस आए ? नूर बानो और उसके मामा-मामी का क्या हुआ? क्या उन्होंने उन्हें तलाश कर लिया या पिता जी ने उनको उनके हवाले कर दिया? मैं सारे दिन इसी सोच में रहा। रात हो जाने का इन्तज़ार करता रहा ताकि नानी छोड़ी हुई कहानी पूरी करें। सर्दी की वजह से नानी की तबियत ठीक न थी। साँस बार-बार उखड़ रही थी। वे हमारे घर आ गई थीं। मम्मी उनकी देख-रेख कर रही थीं।

मम्मी ने मुझसे नानी के घर से उनकी दवाओं की पिटारी लाने को कहा।

सुना है मुर्ग़ी के चूज़े दिन में भी बिना मुर्ग़ी के दरबे में घुसने से डरते हैं। वैसा ही मेरा हाल हुआ। मैंने अपनी दोनों छोटी बहनों को भी साथ ले लिया। हम तीनों भागते फुदकते हाथ में चाबी लिये अपनी नानी के घर जा पहुँचे, जो हमारी गली की दूसरी ओर था। आँगन पार करते हुए उनके कमरे में जा पहुँचे। वही नानी की महक।

कितनी ममता से भरपूर कमरा। ज्यों के त्यों सजा संवरा। हर चीज़ बाहें फैलाए हमें अपनी ओर खींच रही थी। वही बिस्तर साफ़ सुथरा, हमारे इन्तज़ार में गर्म-गर्म..... मगर नानी तो यहाँ नहीं। हमें अपनी नानी की क्षण भर को याद सताने लगी। मैंने उनकी दवा का डिब्बा उठाया। छोटी बहन ने लोटा और दूसरी बहन दीवार पर लगी नानी की तस्वीर को निहारने लगी। कितनी सुन्दर लग रही थीं इस तस्वीर में नानी। उनकी जवानी की अल्लहड़ तस्वीर। दुपट्टे का आँचल माथे पर, जिस पर गोटा चमकता हुआ, नाक में मोतियों की नथ, होंठों पर दिल में उतरने वाली मुसकुराहट। मटमैले फ्रेम के किनारों पर समय की धूल ने जगह ले ली थी। तस्वीर थोड़ी ऊँची लगी थी तो कहीं-कहीं मकड़ी के जाले के तार भी हिलते नज़र आ रहे थे। पहले मैंने कई बार चाहा था कि मेज़ के ऊपर चढ़कर तस्वीर उतारकर ठीक से सफ़ाई कर दूँ तो तस्वीर और भी दिलकश हो जाएगी पर नानी कभी यह न करने देतीं और सख़्ती से इसे छूने को मना कर देतीं और फ़ौरन ख़बरदार कर देतीं कि तुमको इसे उतारने की बिलकुल इजाज़त नहीं है।

मैंने आँख चुराकर कई मरतबा देखा था कि नानी इस तस्वीर को टिकटिकी बाँधे अकसर देखती रहती थीं। मैं पूछता, 'नानी, आपकी शक्ल बिलकुल नहीं बदली, अब भी आप वैसी ही दिखती हैं जैसी इस तस्वीर में।'

नानी चौंक पड़तीं और मुसकुराकर कहतीं, 'तस्वीर को इस कील से कभी न उतारना .... साफ़ करने के लिये भी नहीं।''

आज तो नानी हमारे घर हैं और हम उनके कमरे में। सब चीज़ें साफ़ हैं, चमकती हुई। केवल यह तस्वीर दीवार पर धूल में अटी हुई है।

हम तीनों ने एक दूसरे की ओर देखा।

बिन कुछ कहे चल दिये इस तस्वीर को उतारकर साफ़ करने। नानी बड़ी ख़ुश होंगी जब आकर देखेंगी।

तीनों ने भारी मेज़ घसीटी। छोटी बहन स्टूल उठा लाई, मेज़ पे रखा, मैं झट से चढ़ गया स्टूल पर। तस्वीर तक हाथ आसानी से पहुँच चुका था।

काश! मेरा हाथ वहाँ तक न पहुँचता। सारी ज़िन्दगी मुझे इसका पछतावा रहेगा, और यह पछतावा भी न भुलाया जाने वाला पछतावा। काश, मैं नानी की बात मान लेता और इस तस्वीर को न छूता। काश....।

मेरी क़लम काँप रही है आपको यह बताते हुए कि हमने क्या देखा तस्वीर के पीछे।

कभी-कभी हमारे बुज़ुर्ग बस यूँ ही हमें कुछ करने से रोकते हैं और हम उनको अनसुनी कर देते हैं, या उनसे न करने का तर्क पूछते हैं। वे शायद नहीं बता पाते कि वे क्यों मना कर रहे हैं। केवल वे इतना जानते हैं कि इसमें हमारी बेहतरी है। परंतु हम उनकी न मानकर अपनी जिज्ञासा पूरी करते हैं। ख़ुद पछताते हैं और उनका भी दिल तोड़ते हैं, एक तस्वीर के शीशे की तरह।

बहुत बड़ी छनाके की आवाज़ आई। तस्वीर का फ्रेम हाथ से उछलकर फ़र्श पर रेज़ा रेज़ा हो गया। और तस्वीर के पीछे वाली दीवार पर..... उफ़.....काश.....काश आसान होता यह समझाना..... तस्वीर के पीछे एक छोटा सा सूराख़ बड़ा होता चला गया, फैलता चला

गया और एक बहुत बड़ी खिड़की बन गया। हम तीनों बिना कुछ सोचे खिड़की की सीढ़ियों से उस तरफ़ नीचे उतरते चले गए। पता है हमारी आँखों ने क्या देखा?

वही देखा जिसका देखना हम सहन नहीं कर पा रहे थे। वही सुना जिसको हम नहीं सुन पा रहे थे। वही काली आँधी जिसका ज़िक्र पहले नानी कर चुकी थीं, चारों ओर चल रही थी वह काली आँधी। लोग इधर-उधर भाग रहे थे, भाई अपनी बहन को छोड़कर, पति अपनी पत्नी को छोड़कर, माँ अपने बच्चों को बिलखता छोड़कर, लेखक अपने पन्नों को जलता छोड़कर। औरतों के हाथ अनचाहे मर्दों के हाथों में थे, महलों और झोंपड़ियों से एक ही नर्क की आग भभक-भभककर बाहर निकल रही थी, नेता लोग अपनी मचानों से खड़े इस सारे तमाशे का नज़ारा कर रहे थे। धूल का यह हाल कि साँस न ली जाती थी, धूल में जले हुए माँस की चिराँद थी। चीख़ों की आवाज़ें कान के परदे फाड़े दे रही थीं।

मैंने देखा... मैंने देखा... बल्कि हम तीनों ने देखा, बल्कि मेरी सबसे छोटी बहन ने सबसे पहले देखा, छोटी सी सुन्दर सी गुड़िया की जैसी हमारी नानी किसी दूसरी लड़की यानी नूर बानो का हाथ पकड़े भागी जा रही थी और उनके पीछे थे दो बुज़ुर्ग शायद यही थे नानी के पिता जी और माता जी जो नूर बानो को बचाने की कोशिश में अपनी जान भी आग के दाव पे लगा रहे थे। फिर हमने देखा नूर बानो को पिता जी ने गोद में उठा लिया और गले से लिपटाकर भागने लगे, पीछे-पीछे माता जी थीं, लेकिन उफ़ किसी ने उन्हें धुएँ में लपेट लिया और पिता जी पीछे पलट पड़े। काले सूरज की कालिक में मैं यह न देख सका कि आगे क्या हुआ।

हमसे अब यह सब कुछ न झेला जा रहा था। किसी ने न हमें देखा न ध्यान दिया। हमने पूछा, 'क्या हो रहा है, क्यों हो रहा है, कौन कर रहा है???'

शायद किसी के पास इसका जवाब न था और किसीको इसकी परवाह न थी।

हाँ, एक और अजीब मंज़र था कि लोग बड़े-बड़े पुराने पेड़ों को जड़ों से उखाड़ रहे थे और उनकी चड़चड़ाहट चीख़ों की तरह भयभीत कर रही थी। और न जाने क्यों रेल गाड़ियाँ इधर से उधर, उधर से इधर दौड़ रही थीं, पटरियाँ लहू से लतपत शायद ख़ुद रेल गाड़ियाँ अपने अंदर के यात्रियों को मार काट रही थीं। मंदिर, मस्जिद, गुरद्वारे रेलों की धड़धड़ाहट से हिल जाते थे और उनपर लगे ताले डरे हुए दाँतों की तरह खट खट कर रहे थे जैसे कह रहे हों कि अब बंदगी बंद की है।

काली आँधी की काली धूल इससे पहले हमारी आँखों और फेफड़ों में भर जाए, हम खिड़की की तरफ़ भाग छूटे। भागते समय कोई महिला हमारे साथ भागने लगी। वह हर आयु और हर धर्म की लग रही थी, कभी नानी, कभी नानी की माता जी, तो कभी नूर बानो। हम पहचान न सके क्योंकि उसका शरीर, उसके कपड़े धूएँ में रचे हुए थे। वह कह रही थी, 'तुम जा तो रहे हो पर बताना अपने बच्चों को कि यह किया है तुम्हारे पूर्वजों ने।'

तीनों हाथ पकड़कर ज़ोर से खिड़की के इस तरफ़ कूदे और हमने अपने को नानी के कमरे में वापस पाया। पीछे मुड़कर देखा खिड़की स्वयं ही ज़ोर की चड़चड़ाहट की आवाज़ के साथ बंद हो गई। मैंने मन में शुकर मनाया। खिड़की खुली रह जाती तो क्या होता। अभी तक हमारे दिल धड़क रहे थे। मैंने पूछा बहनों से, 'तुम्हारे चोट तो न आई?'

'नहीं, सब ठीक है।' दोनों ने एक साथ कहा।

उन्होंने पूछा, 'और तुम्हारे तो चोट नहीं आई?'

मैंने मन ही मन अपने अंदर कहा, 'हाँ, थोड़ी कुछ दिमाग़ पर, ... और दिल यह न पूछो.....।'

बहन ने फिर लोटा उठाया, मैंने दवाओं का डिब्बा... पीछे मुड़कर देखा शीशा शीशा चारों ओर बिखरा हुआ था, मेरे दिल की तरह।

हम बाहर निकले, मैं मन में सोच रहा था, शायद छोटी बहनें तो समय के साथ सब भूल जाएँ परन्तु मैं उम्र में बड़ा होने की सज़ा भोगूँगा। बाहर बहुत सर्दी थी, कंपकंपाते पैरों से, धड़कते दिलों से, थरथराती साँसों के साथ घर में दाख़िल हुए... अरे, यह क्या?

जो दृश्य देखा उसने मेरी आत्मा तक को हिला दिया। मेरे हाथ की दवाओं की शीशियाँ छूटकर चूरचूर हो गईं और मैं ख़ुद भी।

मैंने देखा मम्मी नानी के पैरों से लिपटी रो रही थीं। और नानी एक फ़रिश्ते की तरह हवा में उड़ती सी दिख रही थीं। आँखें बन्द, चहरे पर सुकून, वही नर्मी, वही गर्मी, वही रंग जैसे रूई का गाला। पिता जी सरहाने बैठे, हलके-हलके सुरों में ग्रंथ साहब का पाठ जप रहे थे। ग्रंथ साहब का एक एक शब्द मेरे कानों में नानी की आवाज़ बन कर प्रवेश कर रहा था।

'रोना नहीं, मेरे मन के मीत।'

मैं यकायक चौंक पड़ा... मेरा दिल धड़कने लगा। मेरे सामने मम्मी खड़ी मुस्कराकर डाँट रही थीं, 'कितनी आवाज़ें लगाईं, तू सुन नहीं रहा, मुझे ऊपर आना पड़ा तुझे बुलाने.... ओए मुण्डे कहाँ खो गया? चाय ठण्डी हो रही है थल्ले।'

मैं जल्दी से माँ के साथ नीचे दौड़ लिया। खाने की मेज़ पर मेरी देख-रेख ऐसे हो रही थी जैसे मैं इस घर का बेटा ना होकर मेहमान हूँ। मैं अंदर ही अंदर हँसा, अपने ही घर में मेहमान, कैसी रीत है समय की। मम्मी बोलीं, 'प्रकाश और रंजीत कल शाम तक यहाँ पहुँच रहे हैं।'

इससे पहले मैं कुछ कहता, पापा अंदर से एक बड़ी तस्वीर हाथ में लिये हुए आए और बोले, 'मनमीत, बेटा, तुम्हारी नानी की यह तस्वीर न जाने कब से बिना शीशे के यहाँ रखी है। इसे फ्रेम करवा लो जब समय मिले, ख़राब हो जाएगी।'

मैंने तस्वीर पापा के हाथ से ले ली। वही ज़िन्दा तस्वीर, नानी मेरी आँखों में आँखें मिलाए बैठी थीं जैसे कह रही हों, 'रोना नहीं, मेरे मन के मीत।'

कितनी पुरानी तस्वीर, लेकिन बिलकुल ताज़ा।

तस्वीर को पलट कर देखा शायद नानी का पूरा नाम लिखा था उर्दू में। मैंने यूनिवर्सिटी में उर्दू अभी सीखनी शुरू की थी।

तस्वीर के पीछे पढ़ा...

आँखों के सामने अँधेरा सा छा गया।

जिसकी तस्वीर थी, उसका नाम उर्दू में लिखा था: 'नूर बानो'।

***

भाषांतर

रीतू कलसी पंजाबी कहानीकार और पत्रकार। भिन्न स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। एक पुस्तक प्रकाशनाधीन। पिछले सोलह साल से विभिन्न समाचार पत्रों में भिन्न पदों पर कार्यरत रहीं। वर्तमान में फ़िल्मी पत्रिका 'सिने दुनिया' में मैनेजिंग एडिटर हैं।
संपर्क: ओ-2002, सुपरटेक ईकोसिटी, सेक्टर 137, एक्सप्रेस वे, नोएडा-201301, गौतम बुद्ध नगर (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल:9569570059, 9915884681
ईमेल: reetukalsi@gmail.com

राजस्थान पत्रिका के डिप्टी एडिटर, हिन्दी के पत्रकार, कवि एवं अनुवादक एन नवराही की दर्शन, मनोविज्ञान और इतिहास में विशेष रुचि है। पंजाबी और हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविताओं तथा कला, सामाजिक, राजनीतिक व ज्वलंत मुद्दों पर आलेखों का प्रकाशन। पाकिस्तानी पंजाबी की तीन सौ से ज़्यादा कहानियों का हिन्दी, पंजाबी और उर्दू में परस्पर अनुवाद। तीन उर्दू नॉवेलों का हिंदी में अनुवाद। अनुवाद की दो पुस्तकें प्रकाशित। छह पुस्तकें प्रकाशनाधीन।
संपर्क: मोबाइल: 9815070059
ईमेल : navrahi@gmail.com, navrahi@yahoo.com

# दाढ़ी वाला बाबा

**पंजाबी कहानी : रीतू कलसी**

**अनुवाद- एन नवराही**

आज कितना काम किया। थक गई हूँ। थोड़ी देर रिलेक्स कर लिया जाए। चाय बनाकर पी लेती हूँ। थोड़ी भूख भी महसूस हो रही है। चाय के साथ कुछ खा भी लूँगी। मैंने लैप-टॉप को भी पाँच दस मिनट के लिए रेस्ट दिलाने को बंद किया और खुद किचन में चली गई। चाय के लिए पानी गैस पर रखकर उसमें पत्ती और चीनी डालकर फ्रिज खोलकर देखने लगी हूँ।शायद खाने को कुछ न कुछ मिल जाए। बस ब्रैड ही पड़ी हुई है। ब्रैड के दो पीस निकाल लिए हैं और चाय में डालने के लिए दूध भी। वैसे इस समय मैं दूध वाली चाय नहीं पीती। पर ब्रैड के साथ दूध वाली चाय ही ठीक लगती है। मैंने चाय के खौलते पानी में दूध डाला और ब्रैड गर्म करके उस पर मक्खन लगा लिया। सब कुछ लेकर मैं कमरे में आ गई। टीवी ऑन किया और म्यूज़िक चैनल लगा लिया ...मस्ती चैनल है, अच्छे गानी आते हैं। पुराने, मेरी पसंद के। आप भी सुनो- 'तस्वीर तेरी दिल में जिस दिन से...'

ब्रैड पूरी खाकर मैंने टीवी की आवाज़ थोड़ी कम की और दोबारा लैपटॉप ऑन कर लिया। फेसबुक ओपन की। कई फ्रेंड रिक्वेस्ट्स आई हुई हैं। पहले तो बिना देखे ही सारी एक्सेप्ट कर लेती थी। पर अब देखकर ही एक्सेप्ट करती हूँ। कइयों को तो अनफ्रेंड भी कर रही हूँ। ख्वामख्वाह फ्रेंड लिस्ट बढ़ाने का क्या फायदा...

वाह क्या तस्वीर है। मैंने तो हमेशा बंधी हुई दाढ़ी में ही देखा है। अब शायद दाढ़ी थोड़ी छोटी करवाकर रखी हुई है। ये तस्वीर कुछ पुरानी लग रही है। कमाल...। मैंने तस्वीर शेयर कर ली। ...बड़ी दाढ़ी से मेरी कई यादें जुड़ी हुई हैं। वैसे आय हेट दाढ़ी...

इस बड़ी खुली दाढ़ी को देखकर यादें उमड़ने लगीं।

***

बचपन में हम सभी बहन-भाई रिक्शा में स्कूल जाते थे। रिक्शा वाला बुज़ुर्ग था। उसकी दाढ़ी बहुत बड़ी थी। उस समय की काफी बातें भले ही भूल गई हैं, पर कुछ बातें अभी तक हू-ब-हू यादों में उकरी हुई हैं।

मुझे याद आ रहा है, उस कॉलोनी में तीन-चार घरों के बच्चे उसके रिक्शा में जाया करते थे। उस बुज़ुर्ग की खास बात यह याद है कि वो किसी को भी रोज़ एक ही जगह पर नहीं बैठने देता था। जगह बदलने के कारण एक बच्चे को रिक्शा के अगले डंडे पर भी बैठना पड़ता था। जब मोहित की बारी होती तो वो सारे रास्ते में बाबा की दाढ़ी खींचता रहता, उसके साथ खेलता रहता था। बाबा कभी-कभी डाँटता, पर प्यार से ही...।

जिस दिन आगे बैठने की बारी मेरी होती, उस दिन पूरा वक्त मैं खीझी रहती। डंडे पर बैठना मुझे बिलकुल भी अच्छा न लगता। रिक्शा चलाते हुए जब बाबा की दाढ़ी सिर या मुँह पर लगती तो मैं और खीझ जाती।

कई बार मैं आगे बैठने से इनकार कर देती। पर मम्मी जी की डाँट से डरते हुए बैठना पड़ता।

जिस दिन मुझे ऐसा करना पड़ता, उस दिन ऐसा लगता जैसे स्कूल दूर हो गया हो। सोचकर मुझे कई बार हँसी भी आ जाती है। बच्चे का मन भी कैसे सोचता है...।

बाबा सारे रास्ते शब्द गाते हुए जाता– लख खुशियाँ पातशाहियाँ... फिर सारे बच्चे भी उसके पीछे–पीछे गाते। एक जगह चढ़ाई सी आती, वहाँ हम सारे बच्चे रिक्शा से उतर जाते। बाबा हमें आवाज़ें लगा–लगाकर बैठने को कहता पर हम आगे–आगे दौड़ने लगते...। बस सरिता नहीं उतरती थी। वो थोड़ी मोटी थी। शायद उसे बार–बार चढ़ना और उतरना मुश्किल लगता था। अगर उतर भी जाती तो दोबारा चढ़ना उसके लिए मुश्किल हो जाता। रोहित उसका मज़ाक उड़ाया करता था।

बाबा एक जगह रोज़ पानी पीने के लिए भी रुका करता था। हम सभी भी उतरकर वहाँ से पानी पीने लगते। टोंटी एक दुकान के बाहर की तरफ लगी हुई थी। वहाँ से हम जेब खर्च के लिए मिले पैसों से टॉफियाँ और बिस्किट लिया करते थे। उन बिस्किटों का स्वाद आज भी मुँह में घुलने लगता है। कभी–कभी एक आध बिस्किट बचाकर घर भी ले जाते थे। बाबा ने कभी छुट्टी नहीं की थी। बहुत बार सोचते थे कि काश! बाबा आज न आए और स्कूल से हमारी भी छुट्टी हो जाए। पर जिस दिन सोचते थे उस दिन बाबा समय से पहले ही आ जाता। जब घर पर खाने में कोई खास चीज़ बनती तो वो बाबा के लिए भी रखी जाती।

जब कभी पापा हमारे बाज़ार जाने के लिए जीप नहीं भेज पाते थे, तब भी बाबा को ही बुलाया जाता था। फिर रिक्शा पर ही बाज़ार जाते थे। जब बाज़ार से लौटते हुए देर हो जाती तो बाबा खाना भी खाकर ही जाता था। उसके घर में पता नहीं कौन–कौन था। कई बार मम्मी से बात करते हुए सुना था कि बहू–बेटा हैं पर हमने कभी उन्हें देखा नहीं था। देर होने पर भी उसके घर से कोई पूछने नहीं आया था...।

***

जिस दूसरे व्यक्ति की बड़ी दाढ़ी मैंने देखी थी वो हरकेश था। नाना जी की दाढ़ी ज़रूर इतनी बड़ी थी। पर वो तो मैंने केवल तस्वीर में ही देखी थी।...उन्हें देखकर कभी डर नहीं लगा था। हाँ, तो मैं हरकेश की बात कर रही थी, वो भी दाढ़ी बाँधकर नहीं रखता था। हाइट भी उसकी कोई छह फुट के करीब थी। स्मार्ट था, अच्छा लगता था शायद, पर दाढ़ी...।

पता नहीं दाढ़ी का डर मेरे मन के किस कोने में बैठा हुआ था। बड़ी हो जाने के बाद आज भी यह डर मेरे अंग–संग ही रहता है...। कहते हैं बचपन में अगर डर मन में बैठ जाए, तो वो सारी उम्र नहीं जाता। पर यह डर तो बड़ों के मनों से भी नहीं निकला... मैं तो तब केवल छह साल की ही थी।

आज भी मार–धाड़ वाली फ़िल्में देखने की मेरी हिम्मत नहीं होती। उन दिनों टीवी, रेडियो और ईवन घर पर भी एक ही टॉपिक होता था– टैरोरिज़्म...। इतनी छोटी उम्र और इतनी बड़ी छाप...।

मुझे आज तक अस्पताल का दृश्य नहीं भूला। कभी टीवी पर कोई लड़ाई का सीन चल रहा हो तो वही दृश्य आँखों के आगे आ जाता है। पापा तब अस्पताल में दाखिल थे। यह तो याद नहीं कि क्या हुआ था, पर इतना याद है कि वो अस्पताल में थे। मैं और मम्मी रूम के बाहर खड़े थे। यह भी याद नहीं कि कमरे के बाहर क्यों खड़े थे। यह फिरोजपुर शहर की बात है। एकदम पूरे अस्पताल में शोर मच गया। एक नर्स जल्दी से मम्मी को यह कहती हुई गई कि बच्ची को फटाफट रूम में ले जाओ। आज फिर आतंकियों ने गाड़ी पर हमला कर दिया है। जख्मी यहीं लाए जा रहे हैं।

मम्मी जल्दी से मुझे कमरे में ले गए। बाहर से आ रही आवाज़ें मेरे कानों से टकराती रहीं।

पापा ने पूछा था कि क्या हुआ। मम्मी ने बताया तो पापा बुदबुदाने लगे थे– 'क्या फायदा इस सब का। इस तरह भला क्या हो जाएगा... पर समझाए कौन इन्हें?'

मैं बैड पर बैठी हुई ने खिड़की से पर्दा हटाकर बाहर देखा। ...बरामदे में बाहर स्टेचरों पर ही कुछ लोगों को रखा हुआ था। सब खून से लथपथ। खौफनाक दृश्य था। मैं रोने लगी। पापा उठकर मेरे पास आ गए। पर्दा ठीक किया और मुझे चुप कराने लगे। मैंने रोते हुए ही पूछा था– 'पापा क्या हुआ है इन्हें...?'

उन्होंने समझाते हुए कहा था, 'कुछ नहीं बेटा, एक्सीडेंट हुआ होगा। अब ठीक हो जाएँगे सब...।'

पर मैं बहुत डर गई थी तब। पापा ने मुझे घर भेजने को कह दिया।

मम्मी ने मुझे गोपी अंकल के साथ घर जाने को कहा। गोपी अंकल घर के काम करते थे। रोटी गोपी अंकल ही बनाते थे। उनका बनाया खाना बहुत स्वाद होता था। मम्मी ने उन्हें कहा था– 'बरामदे में से ध्यान से लेकर जाना।' मैं जाना नहीं चाहती थी। बहुत डरी हुई थी। मैंने पापा से कहा। लेकिन वही तो मुझे घर भेजने को कह रहे थे।

गोपी अंकल ने उठाकर मुझे कंधे से लगाया और आँखें बंद करने को कहा। मम्मी ने कई बार देखा कि मैंने आँखें अच्छी तरह बंद कर ली हैं या नहीं। बाहर बरामदे में आकर मैंने थोड़ी–सी आँखें खोलने की कोशिश की, लेकिन डर से फिर बंद कर लीं।

घर आकर गोपी अंकल ने टीवी लगा लिया। खबरें आ रहीं थीं। खबरों में बड़ी–बड़ी दाढ़ी वालों की तस्वीरें दिखाई जा रही थीं। बताया जा रहा था कि गाड़ी पर हमला करके इन लोगों ने कई लोगों को मार दिया है। अस्पताल के बरामदे में पड़े लोग मरे हुए थे, ये सोचकर मैं और डर गई...। डर से मैं गोपी अंकल के साथ चिपक गई।

वो कहने लगे– 'बेटा आप बैठो, मैं खाना बनाकर लाता हूँ।'

मैं भी गोपी अंकल के पीछे–पीछे रसोई में चली गई। मैंने रसोई में गोपी अंकल से पूछा, 'अंकल, जो टीवी में बता रहे थे, वो अस्पताल के बारे में था...।' गोपी अंकल ने प्यार से मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए कहा– 'नहीं बेटा...।'

खाना खाकर मैं सो गई। सुबह पता चला कि स्कूल कुछ दिनों के लिए बंद हो गए हैं। कर्फ़्यू लग गया था। मैंने गोपी अंकल से पूछा, 'ये कर्फ़्यू क्या होता है?'

उन्होंने बताया, 'सभी अपने घरों में ही रहेंगे। अब कोई बाहर नहीं जा सकता।'

घर पर रहो, आराम से उठो, खेलो और सो जाओ। स्कूल से भी छुट्टी। घर के लिए काम भी नहीं मिलेगा। ये सुनकर मैं फिर खेलने में मस्त हो गई।

***

कुछ दिनों बाद पापा का ट्रांसफर दूसरे शहर में हो गया। यह नया शहर था, नया स्कूल और नया रिक्शे वाला। यही बड़ी दाढ़ी वाला, जिसके बारे में आपको बता रही

हूँ। शायद मन में दाढ़ी का कोई डर था, जिस कारण मैं इस बाबा से भी बस उसकी बड़ी दाढ़ी के कारण खीझी रहती थी।

पर..., पर हरकेश को मिलने के समय तो मैं बच्ची नहीं थी। कॉलेज की स्टूडेंट थी। और टैरोरिज़्म के बारे में भी पूरी तरह जान चुकी थी, फिर भी...।

मेरे मन में दाढ़ी वालों के प्रति इतना डर था कि मैं गुरुद्वारे में जाती हुई भी डरती थी। बड़ी दाढ़ी के बारे में मेरे मन में ये डर घर कर गया हुआ था कि ये लोगों को मार देते हैं...।

तभी तो बाकी बच्चे बाबा की लंबी दाढ़ी के साथ खेलने लगते थे, पर मुझे डर लगने लगता था...। जैसे-जैसे मैं बड़ी होती गई, ये डर कम होने के बजाय बढ़ता ही था। शायद इसी कारण मैं हरकेश के नज़दीक भी नहीं हो पाई...। अगर बड़ी दाढ़ी वालों से इतना ही डर था, तो फिर वो मुझे अच्छा क्यों लगने लगा था! ...अजीब था यह भी। कोई अच्छा भी लगे और उससे डर भी लगे...।

कभी-कभी लगता, शायद हरकेश के बाद यह डर मेरे मन से निकल गया हो, पर अगर निकला होता, तो ये दोबारा न लगता...।

कुछ दिनों से आ रही खबरों से मेरा यह डर और बढ़ गया है। कुछ देर पहले जब मैंने पंद्रह-सोलह साल के लड़कों को सड़क पर नंगी तलवारें लेकर बाइकों पर घूमते देखा, तो वही डर मेरे मन में मंडराने लगा जैसे...!!!

लो, बात क्या हो रही थी, कहाँ से शुरू हुई और कहाँ पहुँच गई...। वैसे सोचने वाली बात यह है कि मुझे बड़ी दाढ़ी से डर लगता था या है तो मैं तस्वीर देखकर क्यों न डरी...। क्या बेहुदा बात है। इन्हें तो मैं अच्छी तरह जानती हूँ, ही इज ए नाइस पर्सन। बल्कि तस्वीर मुझे तो पसंद ही बहुत आई। बस यह तस्वीर पुरानी यादों में ले गई, जो शायद यूँ ही फालतू सी हैं। चलो जो भी हो, मैं फ़ोन करती हूँ दाढ़ी वाले बाबे को। कहते हैं- छा गए हो फेसबुम पर, हा हा हा...। लो। इन सोचों में मेरी चाय भी ठंडी हो गई है।

फ़ोन करने के बाद चाय भी बनाती हूँ।

***

**लघु कथा**

# शांत मौत

डॉ. संगीता गाँधी

'ये पाँच नम्बर वाले बेड के बाबा बहुत परेशान करते हैं।' ड्यूटी पर आई नई नर्स ने हेड नर्स से कहा।

'वो बिल्कुल अकेले हैं। कैंसर की आख़िरी स्टेज है। पता नहीं कब ....! उनके पास कभी किसी को नहीं देखा। परिवार के लोग यहाँ सरकारी अस्पताल में फेंक कर चले गए। रजिस्टर में पता भी ग़लत दर्ज कराया। बाबा से शायद छुटकारा पाना चाहते थे। पिछले दो महीने से बाबा यहीं हैं। बचने की कोई उम्मीद नहीं। बस दिन -रात यही पूछते हैं -मुझे कोई मिलने नहीं आया !' हेड नर्स ने गहरी साँस लेकर बाबा का दर्द बयान किया।

'दीदी आप जब बाबा को एक खत पढ़ कर सुना रहीं थीं!' नई नर्स ने ख़त की बातें दोहराईं -'पिताजी, आप कैसे हैं ? हम सब ठीक हैं।काम में बहुत व्यस्त हैं।जल्दी ही आपसे फिर मिलने आएँगे।आप जल्दी ठीक हो जाएँगे। हम सब आपको बहुत याद करते हैं।' 'लो बाबा, आपके बच्चे जल्दी आएँगे। अब दवा खा लो।' वो कागज़ खाली था न ! नई नर्स ने हेड नर्स से कहा।

'मरते हुए इंसान को कुछ पल सुकून दे पाऊँ इसलिए झूठ बोला। कोई ख़त नहीं था। ऐसे ही कई बहानों से बाबा को बहला कर दवा खिलाती हूँ।' हेड नर्स ने गहरी साँस लेते हुए कहा। आगे फिर अपनी संवेदना को शब्द देते हुए कहा-

'अपनों की बेरुखी व्यक्ति को जीते जी मार देती है। मौत से पहले ये बेरुखी की मौत अगर एक झूठ से टल जाए तो क्या बुरा है।'

'चलो बाकी मरीज़ देख लें।' सिस्टर, पाँच नंबर वाले बाबा..... वार्ड बॉय ने आकर वाक्य पूरा भी न किया था कि नर्स दौड़ कर वार्ड में गई।

'बेटी,कोई नहीं आया ? ' बाबा की साँसे तेज़ चल रहीं थीं। आँखें पथराई सी दरवाज़े पर लगीं थीं।

'बाबा,आपको बताना भूल गई, आपके घर से फ़ोन आया था।वो जल्दी ही आपसे मिलने आएँगे।'

'नहीं,कोई नहीं आता ! 'बाबा की साँस उखड़ रही। वेंटिलेटर पर डालने की तैयारी होने लगी। बाबा चिल्ला रहे थे --'कोई नहीं आता।'

नर्स ने वार्ड बॉय के कान में कुछ कहा !

'बाबा,देखो आपका फ़ोन ! लो बात करो।'

नर्स ने अपना फ़ोन बाबा के कान पर लगा दिया।

'पिताजी,आप कैसे हो ? मैं आपसे मिलने आ रहा हूँ।'

बाबा के चेहरे पर सन्तोष था। आँखें बंद हो रहीं थीं। एक शांत मुस्कान होंठों पर ठहर गई थी।

वार्ड बॉय ने फ़ोन बंद कर दिया। बाबा के जाने का दुख सबकी आँखों के कोनों से झलक रहा था। पर उनके चेहरे का सन्तोष व शांत ठहरी मुस्कान वातावरण को स्निग्ध कर रही थी।

***

संपर्क: W Z 76, Lane 4, First Floor, Shiv Nagar, New Delhi 58.

ईमेल: rozybeta@gmail.com

# हम आपके थे कब

संपत सरल

एक धाँसू फ़िल्मी कहानी का सारांश प्रस्तुत है। कहानी का एण्ड इतना ज़बरदस्त है कि मेरा दावा है फ़िल्म शुरू होते ही दर्शक पूछने लगेंगे की इसका एण्ड कब होगा?

हिन्दी सिनेमा की उज्ज्वल लीक को पीटते हुए, कहानी 'नारी बचाओ' से प्रारम्भ होकर 'नारी से बचाओ' पर ख़त्म होती है। अर्थात् प्यार से प्रारंभ होती है और शादी होते ही ख़त्म।

जहाँ तक हिन्दी फ़िल्म और कहानी का संबंध है, तो बॉक्स ऑफिस सुपर हिट हिन्दी फ़िल्म बिना कहानी के ही बन जाती है। हिन्दी फ़िल्मों में कहानी होती भी है, तो उतनी सी ही, जितनी सी राजनीति में शर्म। कहानी को लेकर हिन्दी फ़िल्मों की स्थिति सरकारी नल वाली होती है कि ढाई-तीन घंटे तक पानी की एक बूँद नहीं टपकती और हवा की सूँ-सूँ से मीटर सत्त घूमता रहता है।

चटखारेदार भोजन में इस्तेमाल किए जाने वाले मसालों की भाँति मेरी कहानी में भी प्यार-धोखा, उछल-कूद, गाना-नाचना सब है। एक्शन और कॉमेडी तो इस सीमा तक है कि नायक-नायिका एक्शन करेंगे, तो दर्शक छाती पीटेंगे और कॉमेडी करेंगे तो माथा।

कथा सार है कि प्रेम कहानी में एक लड़का होता है, एक लड़की होती है। कभी दोनों हँसते हैं, कभी दोनों रोते हैं। अर्थात् शादी से पहले जहाँ दोनों हँसते हैं, वहीं शादी के बाद दोनों रोते हैं। दोनों एक-दूसरे को इस कदर प्यार करते हैं कि अड़ंगा डालने पर न सिर्फ बाहर वालों से पिट सकते है, बल्कि घरवालों को पीट भी सकते हैं।

गाँव की राजकीय माध्यमिक पाठशाला। पाठशाला धर्मशाला में चलती है और धर्मशाला ही की तरह चलती है। को-एजुकेशन की वजह से ओवरएज लड़के तक नियमित पाठशाला जाते हैं। अध्यापकगण पाठशाला में उतने ही पहुँचते हैं जितनी केन्द्र से चली हुई विकास राशि ग्राम पंचायत तक पहुँचती है। कुल मिलाकर पाठशाला का वातावरण इल्म के नाम पर फ़िल्म वाला होता है।

सुदर्शन और माया भी उसी पाठशाला की तीसरी कक्षा के विद्यार्थी हैं। सुदर्शन माया से

संपर्क: 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ.प्र.) 246701
मोबाइल: 07838090732
ईमेल: giriraj3100@gmail.com

तीन साल बड़ा है। इसका कारण सुदर्शन का फेल-वेल होना नहीं था, बल्कि पाठशाला में प्रवेश ही तीन साल बाद लेना था। दरअसल सुदर्शन के पिता को निर्णय लेने में तीन साल लग गए कि एक तो सुदर्शन राजा बेटा है और ऊपर से सुदर्शन भी है, अत: पढ़ाया-लिखाया जाए या नहीं। इक दिवस टीवी पर कोई हिन्दी फ़िल्म देख लेने से उसे बोध हुआ कि पैसा और प्रसिद्धि अपढ़ के बजाए कुपढ़ को अधिक मिलते हैं और अधिक फलते हैं, उसने सुदर्शन को पाठशाला में डाला। उधर माया का पिता 'बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ' वाले सरकारी विज्ञापन से भाँप गया था कि निकट भविष्य में ही धरती सुदर्शनों के भार से डोलेगी, अत: माया को पढ़ाया जाना आवश्यक है।

एक दोपहर अघट घड़ी। पाठशाला में मध्यान्तर हुआ। प्रार्थना स्थल पर बने चबूतरे पर बैठकर ज्यों ही माया अपना टिफिन खोलने लगी, उसे एक आवारा कुत्ते ने घेर लिया। चूँकि सुदर्शन रोज़ अपना लंच चलती कक्षा में ही निपटा लिया करता था, अत: वह चबूतरे को पीठ दे, ज़रा दूर कंचे खेल रहा था। वह कुत्ते की कूँ-कूँ से ही तुरन्त समझ गया कि माया संकट में फँसी है। उसने पीठ दिए-दिए ही अपने दाँएँ पाँव से निकालकर कुत्ते के मुँह पर शब्दबेधी जूता दे मारा। कुत्ता बिलबिलाते हुए चल हो गया और माया खिलखिलाते हुए अचल। सुदर्शन के सामयिक और अवर्णनीय लक्ष्य संधान और अदा पर माया ऐसी रीझी कि उसने अपने पराठे सुदर्शन को खिला दिए और स्वयं भूखी रही। यह सोचकर कि पराठे कुत्ता भी तो खाता। यों दो थर्ड क्लास में पढ़ने वाले होनहारों ने फर्स्ट क्लास लव स्टोरी को जन्म दिया।

उक्त होनी-अनहोनी के पश्चात् भी मध्यान्तर समाप्त होने में पाँच मिनट का समय शेष था। जिसे दोनों ने एक समूह गान गाकर किल किया। गाने में सुदर्शन ने प्रतिज्ञा की कि मैं तेरे लिए कुत्तों से आजीवन भिड़ता रहूँगा और उसी सुर में माया ने संकल्प लिया कि मैं तेरे लिए आमरण अनशन करती रहूँगी।

दोनों के परिजन टीवी चैनलों और अखबारों में विज्ञापन देख-पढ़कर ठान चुके थे कि बच्चों को स्मार्ट बनाने के लिए अविलम्ब स्मार्टफ़ोन दिलाना ज़रूरी है। वे चाहते थे कि दुनिया हमारे बच्चों की मुट्ठी में हो और वे इस हद तक इंटरनेटी हो जाएँ कि कोई बाप का नाम भी पूछ ले, तो झट गूगल पर सर्च करने लगें।

स्मार्टफ़ोनों से लैस सुदर्शन और माया का प्रेम पाँचवी कक्षा तक आते-आते 'आग के पोखर में डूब के रहना है' तक आ गया। सुदर्शन तो दो ही साल में इस सीमा तक सुध-बुध खो बैठा कि हिन्दी अध्यापक द्वारा लिखाए गए छुट्टी के प्रार्थना पत्र में माया की कॉपी से नकल मारते हुए न सिर्फ उसकी हैंड राइटिंग की प्रारंभ से नकल की, बल्कि प्रार्थना पत्र के अंत में 'आपकी आज्ञाकारी शिष्या, माया' तक लिख बैठा।

नवीं कक्षा तक किसी भी विद्यार्थी को फेल न किए जाने के सरकारी नियम का लाभ उठाते हुए दोनों ने पाँचवीं कक्षा पास कर ली। पाँचवीं कक्षा पास कर लेने और छठी कक्षा में प्रवेश लेने के मध्य डेढ़ माह का ग्रीष्मावकाश पड़ा। दोनों ने एक डुएट गाया। जो था तो दस मिनट का, पर डेढ़ माह चला। गीत किसी नामी गीतकार द्वारा रचित छुट्टी का प्रार्थना पत्र था जिसे किसी गिरामी संगीतकार जोड़ी ने संगीतबद्ध किया था। गाना गाते हुए सुदर्शन और माया सरकार से प्रार्थना करते हैं कि वह डेढ़ माह लम्बी गर्मी की छुट्टियाँ सर्दी के मौसम में भी किया करे।

(गर्मी की डेढ़ माह लम्बी छुट्टियाँ सर्दी के मौसम में भी किए जाने से सर्दी में भी गर्मी पड़ेगी, जिससे डिओडरेंट, परफ्यूम, टेलकम पाउडर आदि का प्रचार और बिक्री बढ़ेगी। फलत: फ़िल्म निर्माता और राष्ट्र निर्माता दोनों का कल्याण होगा।)

सुदर्शन को माया से ही सच्चा प्यार होने का एक अतिरिक्त कारण यह भी था कि वह जहाँ निम्न-मध्यमवर्गीय परिवार से था, वहीं माया उस समय खाते-पीते घर की थी। खाते-पीते घर की इस मायने में कि माया के पिता ने अपनी पैतृक कृषि भूमि हाल ही में बेची थी। परिणामस्वरूप उसका परिवार न सिर्फ अच्छा खा रहा था, बल्कि उसका पिता दिन-रात पी भी रहा था।

माया के पिता से कृषि भूमि खरीदने वाला एक विदेशी कारोबारी था। जिसका दावा था कि उसके पुरखों की नाल उसी गाँव में गड़ी है। त्रेता युग में उसके पुरखे माता सीता का पता लगाने इसी गाँव से लंका गए थे, लेकिन वहाँ सोने की चमक देखी, तो मजबूरी में वहीं की नागरिकता लेनी पड़ी। समस्त गाँव वासी उसे आदर और अहसान से प्रवासी बन्धु पुकारते थे।

वन्देमातरम् कहें कि धंधेमातरम्, उस प्रवासी बन्धु के मन में एक दिन अचानक अपने मूल गाँव को तमस से ज्योतिर्मय करने का विचार आया। सरकार की मदद से उसने दो काम किए। पहला, विभिन्न वित्तीय तिकड़में अपनाते हुए गाँव वालों को ऋण दे-देकर स्वयं को मातृभूमि के ऋण से उऋण करना शुरू किया। दूसरा, गाँव वालों को मीठी धमकी से चेताया कि हिन्दी तो भविष्य के मज़दूरों और मजबूरों की भाषा है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए मुख में अंग्रेज़ी और मस्तिष्क में अंग्रेज़ीयत कम्पलसरी है।

उसने माया के पिता से खरीदी खेती ज़मीन पर भव्य इंग्लिश मीडियम का सीनियर सेकण्डरी स्कूल तान दिया। सपनों और भय से ग्रस्त सब परिजनों ने अपने-अपने बच्चे सरकारी पाठशाला से निकालकर इंग्लिश मीडियम के उस प्राइवेट स्कूल में भर्ती करा दिए।

मज़े की बात रही कि सरकारी पाठशाला के अध्यापकों ने ही आधे वेतन पर ठेके पर उस इंग्लिश मीडियम के प्राइवेट स्कूल में उन्हीं विद्यार्थियों को पढ़ाना शुरू कर दिया। इससे तिहरा लाभ हुआ। बच्चों को अंग्रेज़ी शिक्षा मिलने लगी, स्कूल मालिक को आधे खर्च में अध्यापक मिल गए और अध्यापकों की कमाई ड्योढ़ी हो गई। धरा पर पसरती लता को बल्ली का सहारा मिला, तो वह आकाश छूने लगी। वे ही विद्यार्थी और वे ही अध्यापक। बस, परिवेश और मानसिकता बदलते ही ऐसा जादू हुआ कि चन्दन लेपते रहने से भी जो गधे अब तक घोड़े नहीं हो पाए थे, वे टाई बाँधते ही हो गए।

सरकारी पाठशाला बंद हो चुकने के बावजूद कागज़ों में खुली रही, ताकि अध्यापकों-कर्मचारियों के वेतन-भत्ते भी सुचारू रहें और सरकार के माथे पर यह कलंक भी नहीं लगे कि उसकी लापरवाही से सरकारी प्रतिष्ठान बंद होते जा रहे हैं।

सुदर्शन और माया के परिजनों ने दोनों को

अंग्रेज़ी माध्यम वाले निजी स्कूल में छठी कक्षा में प्रवेश दिला ही दिया था। दोनों का प्यार और पढ़ाई संग-संग चलते रहे। दोनों के पास स्मार्ट फ़ोन थे ही। जिस प्रकार रीतिकालीन नायक-नायिकाएँ भरे मौन में नैनन ही सों बातें कर लिया करते थे, उसी तजे पर सुदर्शन और माया परस्पर मिस कॉल मार-मार कर खचाखच भरी कक्षा में बातें करते रहते थे। इससे दोनों में वार्तालाप भी चलता रहा और दोनों को बिल की समस्या भी नहीं आई। विरहावस्था में दोनों के अपने-अपने स्मार्ट फ़ोन में डली हुई इंटरनेटयुक्त सिम ने खुल जा सिम-सिम कर ही रखी थी।

एक रात दोनों अपने-अपने घर में गहरी नींद में सोए थे। दोनों को एक साथ स्वप्न आया। स्वप्न में माया ने सुदर्शन के सामने प्रस्ताव रखा कि मिस कॉल, चैटिंग और गानों के थ्री व्हीलर के सहारे प्यार को कितनी दूर तक ढोएँगे। हमें डांस भी करना चाहिए। डांस करने से न सिर्फ अपन मुफ्त में असंख्य पर्यटन स्थल घूम-फिर सकेंगे, बल्कि भाँति-भाँति के फैशन डिज़ायन वाले कपड़े भी अदल-बदलकर पहन सकेंगे।

स्कीम अच्छी थी, किन्तु दोनों ही के पास असीमित कपड़े नहीं थे। दोनों नज़दीकी शहर जाकर धोबियों और दर्ज़ियों की दुकानों में चोरी करने की सोचते हैं। इससे अपनी ज़रूरत भी पूरी हो जाएगी और धोबियों-दर्जियों का भी एक पाई का नुकसान नहीं होगा। कहावत है ना-'धोबी-दर्जी के घुस गए चोर/लुट गए भाई और ही और'। लेकिन दोनों ने ही यह सोचकर आइडिया ड्राप कर लिया कि यथार्थ हो अथवा फ़िल्म, पुलिस भले ही देर से आती है, किन्तु आती है।

सुदर्शन और माया स्कूल से घरों को लौटते, तो दोनों की अंग्रेज़ी धज देखकर उनके माँ-बाप बड़े पुलकित होते। वे आश्वस्त होते कि अंग्रेज़ी पढ़-बोलकर हमारे होनेहार एक दिन बड़े ओहदेदार बनेंगे। साम, दण्ड, भेद से इतने दाम कूटेंगे कि हमारी सात पीढ़ियाँ मेहनत के नाम पर योगा किया करेंगी और टाइमपास के लिए शॉपिंग।

प्रेम कहानी अचानक झटका खा गई जब दसवीं कक्षा में बोर्ड एग्जाम होने से सुदर्शन और माया समान अंकों से फेल हो गए। स्कूल प्रबंधन देवदूत बनकर आया। उसने सुदर्शन और माया के परमार्थिक पक्ष के बहाने अपना आर्थिक पक्ष साधते हुए दोनों के परिजनों को ढाढस बँधाया कि होनी को कौन टाल सका है। सबर से काम लें और दोनों को पुनः अवसर दें। खुशी-खुशी स्कूल जाकर दोनों ने एक साल बाद पुनः दसवीं की परीक्षा दी और दोनों पुनः समान अंकों से फेल हुए।

माया की माता ने पति से यह रहस्य बाँटकर माया की पढ़ाई दी कि कन्या के लिए योग्य वर शास्त्र सीखने से नहीं, अर्थशास्त्र सीखने से मिलता है। माया ने तो दसवीं की किताबें दो बार पढ़ी हैं, जबकि अँगूठा छाप कन्या का बाप भी गाँधी छाप फेंके, तो योग्य वर फेरे खाने घोड़ी पर चढ़कर नहीं, स्वयं घोड़ी बनकर आता है।

माया के स्कूल छोड़ देने से सुदर्शन के सामने बोर्ड एग्ज़ाम से भी कड़ी परीक्षा आ खड़ी हुई कि अब वह किस के लिए स्कूल जाएगा?

स्थिति बड़ी पेचीदा हो गई। यों तो हर क्षण दोनों फेसबुक पर ऑनलाइन रहते थे, किन्तु कमबख्त फेस की भरपाई फेसबुक थोड़े ही कर सकती थी। दोनों मिलें, तो मिलें कहाँ? घरों में नल लगने से पनघट नष्ट हो चुके थे। गाँव में मेला सिर्फ साल में एक बार लगता था। अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ने से खेत-खलिहान बोर करते थे। गाँव में पाँच-सात पेड़ ज़रूर थे, पर उनके तने पतले थे। न तो तब कोई नदी थी और न भविष्य में नई नदी बनने की संभावना थी। 'मैं तुझसे मिलने आई मंदिर जाने के बहाने' गाती हुई माया मंदिर भी नहीं जा सकती थी, क्योंकि गाँव के एकमात्र मंदिर का पुजारी सुदर्शन का पिता ही था और सुदर्शन ने जूता प्रक्षेपण कला अपने पिता ही से सीखी थी।

चैटिंग से निर्णय किया कि दोनों जब-तब सरकारी पाठशाला के भूतहा हो चुके भवन में मिल लिया करेंगे। दसवीं कक्षा में दूसरी बार फेल होने के समय माया की उम्र सतरह वर्ष थी और सुदर्शन की बीस वर्ष। दोनों शादी भी नहीं कर सकते थे, क्योंकि शादी की वैधानिक उम्र के लिए दोनों को ही अभी एक साल का समुद्र लाँघना था। तय रहा कि सुदर्शन फेल होने के लिए एक साल और मनोयोग से पढ़ेगा तथा माया घर रहकर उसके लिए व्रत-उपवास रखेगी, ताकि वह अच्छे से अच्छे अंकों से फेल हो सके।

प्यार में ज़िम्मेदारी और पढ़ाई में ग़ैर ज़िम्मेदारी से दोनों को न शर्म का अभ्यास था और न श्रम का। माया ने तो जैसे-तैसे माँ के दबाव में या कहें 'अगले घर जाना है' की सीख के दबाव में खुद को घरेलू कामों में खपा लिया, पर सुदर्शन को फेल होने के लक्ष्य से नियमित स्कूल जाना भारी लगने लगा। सुदर्शन की हालत उस घोड़े जैसी हो गई जिसे सवारियाँ लदे ताँगे में उल्टा जोत दिया गया हो।

आख़िर विरह काल को स्मार्ट फ़ोनों की कटारों से भी कोई कब तक काटे? सुदर्शन ने पिता से कहा ही डाला कि माया से मेरा विवाह नहीं हुआ, तो मैं आत्महत्या कर लूँगा। पिता ने पुत्र को निश्चिंत किया कि तेरा विवाह माया से ही से कराऊँगा, ताकि तुझे अलग से आत्महत्या न करनी पड़े।

पिता के मनोनुकूल वचन सुनकर सुदर्शन ने फेल होने के प्रयासों में जी-जान लगा दी। जल्दी सोना और देर से उठना। कक्षा और घर में दिखावे के लिए पाठ्य पुस्तकों में हरदम आँखें गड़ाए रखना। नियमित स्कूल जाना ताकि माया को यों न लगे कि वह फेल होने से जी चुरा रहा है।

अंतिम प्रश्न पत्र की परीक्षा समाप्त होते ही सुदर्शन और माया सरकारी पाठशाला के भूतहा भवन में मिले। सरकारी पाठशाला में पनपे प्यार और गुज़ारे गए समय को याद कर, दोनों फ्लैश बैक में चले गए।

दोनों ने याद किया कि कैसे उनके पिता उनका एडमिशन कराने स्कूल आए थे। उस घटना के याद आने पर दोनों के पिता आज भी भावुक हो उठते हैं, क्योंकि वे सिर्फ उसी बहाने स्कूल आए थे।

दोनों का मानना था कि हमारे गुरुजनों की वजह से ही ब्रह्माण्ड में गुरुत्वाकर्षण था। गुरु मोमबत्ती की तरह जलते थे और शिष्य अगरबत्ती की तरह। दोनों जब-जब भी पास हुए घरवालों ने खुशी के बजाए आश्चर्य से मिठाई बाँटी थी।

हमारे गुरुजन तब अद्भुत अध्ययनशील थे। सबका दृढ़ मत था कि अध्यापक को स्वयं पढ़े बिना हर्गिज विद्यार्थियों को नहीं पढ़ाना चाहिए। लिहाजा, पहले दिन सब

बच्चे मिलकर उन्हें पढ़ाते थे, तब जाकर दूसरे दिन वे बच्चों को पढ़ाते थे।

सादगी इस कदर रहती थी कि शिक्षक पढ़े-लिखे तो हाते थे, पर लगते नहीं थे।

बोर्ड एग्ज़ाम नहीं होने से हमें न कभी पास की चिन्ता रहती थी और प्यार हो जाने से न कभी टाइमपास की।

अंग्रेज़ी वाले मास्टर जी नित्य नियम से लेट आते थे तथा आते ही लेट आने वाले बच्चों को पीट-पाटकर लेट जाते थे। सब उन्हें बाहर से प्रणाम करते थे तथा भीतर से अंतिम प्रणाम।

एक मास्टर जी ऐसे भी थे, जिन्होंने पहले तो अपने गुरुजनों पर जुल्म ढाए। फिर विद्यार्थियों पर ढाने लगे, क्योंकि यहीं पढ़े थे और यहीं पढ़ाने लगे।

गणित वाले मास्टर साहब तो सरेआम बीड़ी पीते थे, किन्तु उन बच्चों को कभी बीड़ी लाने नहीं भजते थे जो कि खुद बीड़ी पीते थे।

अतीत की स्मृतियों को और घना करने के उद्देश्य से सुदर्शन ने जेब से बंडल-माचिस निकालकर बीड़ी सुलगा ली। माया दीवार पर नुकीले पत्थर से दोनों के अंग्रेज़ी में नाम और फ़ोन नम्बर गोदने में लग गई।

अन्ततः दुःख की रजनी बीती और सुख का नवल प्रभात हुआ। माया की प्रार्थना और सुदर्शन का प्रयत्न फले तथा वह घड़ी आई जिसकी दोनों को एक सदी बराबर एक साल से प्रतीक्षा थी। सुदर्शन शानदार अंकों से फेल होने में सफल रहा। मनौती पूरी होते ही सुदर्शन और माया चौरासी कोस की बस यात्रा कर शहर के सिनेमाघर पहुँचे। माया के दुपट्टे से दोनों ने अपने कुर्तों का गठजोड़ किया। सिनेमाघर की एक सौ आठ परिक्रमाएँ लगाईं। डूबकर फ़िल्म देखी और देर रात घर लौटकर देर सुबह तक पिटे।

शुभ मुहूर्त देखकर सुदर्शन के पिता ने बेटे की तीनों सालों की अंकतालिकाएँ लीं और माया के पिता के पास सुदर्शन के लिए माया का हाथ माँगने गया।

माया की माँ ने सकारात्मकता दिखाते हुए पति से आग्रह किया कि हमें माया का विवाह हर हाल में सुदर्शन के संग ही करना चाहिए, ताकि दो की जगह एक ही घर डूबे। माया का पिता जीवन में शिक्षा का महत्त्व जानता था। उसने साफ मना कर दिया कि मैं अपनी लाडली का विवाह उससे कम पढ़े-लिखे लड़के से नहीं करूँगा।

सुदर्शन के पिता ने सुदर्शन के तीनों सालों के प्राप्तांकों के योग और माया के दो सालों के प्राप्तांकों के योग के अन्तर से माया के पिता को समझाने का प्रयास किया कि सुदर्शन-माया से अधिक पढ़ा-लिखा है। लेकिन माया के पिता ने यह तर्क देकर रिश्ता ठुकरा दिया कि माया ही सुदर्शन से अधिक मेधावी है, क्योंकि सुदर्शन जहाँ दसवीं में तीन बार फेल हो चुका है, वहाँ माया सिर्फ दो ही बार फेल हुई है।

एक-दूसरे के लिए मरता क्या न करता। सुदर्शन और माया ने भागकर मुम्बई जाने और परिणय सूत्र में बँधने की ठानी। दोनों ने अपने-अपने पिता के नाम खुले पत्र लिखे की आगामी वेलेन्टाइन डे को प्रातः सवा सात बजे हम भागकर मुम्बई जाएँगे तथा शादी करेंगे। और आपको बताएँगे भी नहीं कि हम भागकर कब और कहाँ जाएँगे?

दोनों को भागकर मुम्बई जाने और शादी करने से किसी ने नहीं रोका। यह सोचकर कि जिसकी अंतिम घड़ी आ जाती है, उसे कौन रोक पाया है।

सुदर्शन और माया अपने बर्थ के सर्टिफिकेट और अर्थ की पेटी लेकर घर से भागे और नज़दीकी स्टेशन से ट्रेन में बैठकर मुम्बई जा पहुँचे। गोधुलि वेला हो चुकी थी। प्लेटफार्म पर उतरते ही माया ने अपने पर्स से निकाल कर सोने की अँगूठी सुदर्शन को पहनाई। सुदर्शन ने जेब से डिबिया निकाल कर माया की माँग में सिन्दूर भरा। हालाँकि पाँच-सात मिनट इस सोच-विचार में भी खर्च हुए कि माया सोने की अँगूठी पहनाए, तब सुदर्शन उसकी माँग में सिन्दूर भरे या सुदर्शन माँग में सिन्दूर भरे, तब माया उसे सोने की अँगूठी पहनाए। अन्ततः सुदर्शन हँसा और माया को झुकना पड़ा। अर्थ की पेटी हाथ में हो, तो मुम्बई में मकान मिलने में कभी समस्या नहीं आती। चट शादी करके दोनों ने पट मकान किराए पर लिया।

पति बनते ही अगली सुबह सुदर्शन ने माया को आदेश दिया कि चूँकि विवाहित स्त्री को घर की देहरी नहीं लाँघनी चाहिए, अतः तुम घर में चूल्हा-चौका सँभालो और मैं फ़िल्मों में हीरो का रोल करूँगा।

सुदर्शन को फ़िल्मों में हीरो का रोल तो नहीं मिला, किन्तु विभिन्न धारावाहिकों में पिता की भूमिकाएँ निभाते हुए वह नौ माह बाद दो जुड़वाँ बेटों का पिता बन गया। शादी से पहले की और शादी के बाद की दशा को रेखांकित करते हुए बेटों के नाम क्रमशः सक्षम और अक्षम रखे गए।

गृहस्थी की कुनैन ने असर किया, तो प्यार का मलेरिया उतर गया। खाने वाले मुख चार और कमाने वाले हाथ दो। धारावाहिकों में पिता की भूमिकाएँ करना और घर में पिता की भूमिकाएँ निभाना, दो अलग बातें होती हैं। गृहस्थी की गाड़ी को अर्थ के अभाव में प्यार का ईंधन नहीं मिला, तो इंजन ने एयर ले ली।

घर से भागने का अनुभव सुदर्शन को फिर काम आया। एक दिन वह पत्नी और दोनों बेटों को काम पर जाने का कहकर घर से गया और लौटकर घर नहीं आया। पूँजी के नाम पर उसके पास मात्र कलाई घड़ी शेष थी। उसने कलाई घड़ी बेचकर गेरूआ लूँगी-कुर्ता, नकली रुद्राक्ष की माला, खड़ाऊ और कमण्डल खरीदे। उसने थर्ड क्लास कलाई घड़ी इन्वेस्ट की और फर्स्ट क्लास साधु की गणवेश जुगाड़ ली। ऐहतियात बरतते हुए सारा साजो-सामान उसने सेकण्ड हैंड ही खरीदा, ताकि किसी को संदेह न हो कि वह कोई ताजा नौसिखिया साधु है।

उसने सुदर्शन में से 'सु' उपसर्ग हटाकर 'गिरी' प्रत्यय जोड़ा और अपना नाम दर्शनगिरी रख लिया।

चूँकि साधु बन जाने के बाद सारी ज़िम्मेदारियाँ समाज की हो जाती हैं, अतः वह मुफ्त आहार-विहार करते हुए हरिद्वार पहुँच गया।

दर्शनगिरी को पुत्रद्वय सक्षम और अक्षम तथा पत्नी माया की याद आती या ना आती, वह प्रवचनों से लोगों को आगाह करने में जुट गया कि आदमी सक्षम हो अथवा अक्षम, कदापि माया के चक्करों में नहीं फँसना चाहिए।

विशेष : उपर्युक्त कहानी को यदि लाखों लोगों के करोड़ों रुपये और प्रत्येक के ढाई-तीन घंटे एक मुश्त बर्बाद कर सकने की इच्छा और सामर्थ्य रखने वाला कोई निर्माता-निर्देशक फ़िल्माना चाहे तो स्वागत है।

***

# विलायती राम पांडेय और नोज़ पिन

लालित्य ललित

संपर्क: नेशनल बुक ट्रस्ट,इंडिया, नेहरू भवन, 5, इंस्टिट्यूशनल एरिया, फेज-2,वसन्त कुंज, नई दिल्ली-110070
मोबाइल:9873525397
ईमेल: lalitmandora@gmail.com

चुनांचे पांडेय जी की दाड़ में दर्द था। दर्द इतना कि कुछ न खाते बनता, बस निगलते बनता था। बनारस भी गए तो सोचा दबा के खाएँगे और छक कर छप्पन भोग का आनंद लेंगे पर अक्ल दाड़ का इतना पंगा हुआ कि मत पूछिए।

पूछना भी गुनाह हुआ। शाम को जब महाराजा थाली आती जिसमें बेहतरीन स्वादिष्ट व्यंजन होते पर माँ कसम दर्द इतना होता कि टुकर-टुकर महाराजा थाली को देखते रहते, खा न पाते, केवल वेटर को इतना बोल पाते कि दर्द बहुत है भाई। सूप ले आओ और मशरूम वाला लाना। बाऊजी आठ दिन कैसे बिताए,यह पांडेय जी जानते थे।

कहते है प्रधानमंत्री जी का क्षेत्र है। ज़बरदस्त विकास हो रहा है। लोकल जनता कहती-जब कह रहे है और टेलीविजन कह रहा है तो समझते काहे नहीं। समय लगता है विकास में, यह कोई गुब्बारा नहीं कि गैस भरी और गुब्बारा हवा में छोड़ दिया।

सड़क पर धूल, धूल में सड़क, गोलगप्पों में आदमी, आदमियों की चटोरी जुबान और काशी बाबा की जय के जयकारे!

ग़जब का प्रदेश। सोचा कि बाबा की नगरी में दर्द कुछ कम होगा। पर किसी सयाने ने कहा है कि बाऊजी यह पिछले जन्म का पाप और पुण्य है जो केरी फारवर्ड चलता है। बात

तो सोलह आने सच्ची थी।

दर्द न हुआ मुआ जी एस टी हो गया। न किसी की समझ में आ रहा और न ही कोई जानकार बता पा रहा। पर हल्ला जमाने में कि इससे ये होगा और नहीं तो जे हो जाएगा। बात पांडेय जी की समझ में भी कुछ-कुछ आ रही थी।

पांडेय जी ने मूड बना लिया था कि दर्द को किनारे से निकाल फैंकेंगे। कसम अल्ला की बहुत हुआ। किसी कारण से इलाके के मंदिर में गए, वहाँ पंडित किरपा शंकर ने सलाम बजा दिया। बस और क्या चाहिए दफ्तर के बड़े बाबू को। सलाम का शौक पुस्तैनी रहा है। वहाँ मंदिर में एक साइन बोर्ड लगा देख लिया कि धर्मार्थ क्लीनिक!

बस फिर क्या था-लगे हाथ पहुँच गए, अपनी श्रीमती को लेकर। मात्र बीस रुपये की पर्ची बनी और लगे डॉक्टरनी जी का वेट करने। मोहतरमा आई और अपने औज़ारों से मुआयना किया। पता कर बताया कि सर! तकलीफ गहरी है, दाँतों में कीड़ा लगा है। इसका इलाज जल्द करवा लें, अन्यथा साथ के दाँत को भी कीड़ा नुकसान पहुँचा सकता है। हम्म!

पांडेय जी कहने लगे कि मैंने कीड़े को कब नुकसान पहुँचाया है जो यह मेरी वाट लगाने को तैयार बैठा है। एक्सरे करवा कर पांडेय जी फिर डॉक्टर मेघा मित्तल की शरण में थे। पहले फीस सुन कर ही पांडेय जी दाँत निकलवाने को तैयार हुए। डॉक्टर साहिबा ने आधे घण्टे की मशक्कत की और हार मान ली। यह पांडेय जी का मसूड़ा था और दाँतों की पकड़ सॉलिड। कैसे निकल जाता। आख़िर में पांडेय जी के मुँह का बाजा बजा दिया और कहने लगीं-सॉरी सर!

इसकी सर्जरी होगी। मुझ से नहीं हो पा रहा। ख़ैर पांडेय जी क्या कहते!

अपना सा मुँह ले कर घर आ गए। तीन चार दिन में मुँह वापिस अपनी मुस्कान पर आया। गुस्से में आ कर उस डॉक्टर के खिलाफ फेसबुक पर एक पोस्ट भी लगा दी। लगे हाथ लोग अपनी सलाह देने लगे- ऐसे में पैसे का मुँह नहीं देखा जाता, निकलवा लीजिये। कई मोहतरमा तो मैसेंजर में इनबॉक्स में आकर कहने लगीं-मत निकलवाईये, लॉन्ग तेल का इलाज कीजिए, फलानी मलहम लगाए, ठीक हो जाएगा। पांडेय जी सोचने लगे-दाँत का मामला बेहद संगीन और रोचक हो चला था कि बड़े लेखक का फोन घनघना गया- कैसे हो! पता लगा कि तकलीफ ज़्यादा है, बालाजी में निकलवा लो,वहाँ का दन्त चिकित्सक मेरा पड़ोसी है, अरे! वही पुनीत आहूजा। अस्पताल में सब सुविधाएँ होती है और खतरे की भी कोई बात नहीं। हाँ, डॉक्टर को कहना कि दाड़ निकाल दें, पर अक्ल नहीं। जितने लोग, उतनी बातें। कुछ कहने लगे कि और खाओ बाहर के चटपटे व्यंजन!

कुछ दिन तो आराम मिलेगा। किसी और से भी सलाह ली, ढाई हजार से पाँच हज़ार का खर्च!

सुनकर पांडेय जी हैरान परेशान। सोचने लगे कि कुछ भी हो जाए, इस बार तो दाड़ दर्द से मुक्ति पानी ही हैं। पत्नी की सलाह मानी। दर्द मुक्ति निवारण के संदर्भ में बड़े अस्पताल की शरण ली। सी जी एच एस का मामला था। दफ्तरी कार्ड साथ लिया। एक्सरे भी अंटी किया। डॉक्टर ने दाँत का मुआयना किया और एक हफ्ते की दर्द निवारक दवाई लिख दीं। दवाई इतनी कारगर कि दर्द गायब जैसे मतदाता को सब्जबाग दिखाते स्थानीय उम्मीदवार। बहरहाल दर्द गायब हुआ जैसे विकास के नाम पर पार्टियों का एजेंडा।

हफ्ते के बाद पांडेय जी के दाँत का मुआयना फिर से सीनियर डॉक्टर ने किया। क्या सब ठीक हैं!

पांडेय जी ने डरते हुए पूछा। चिंता की कोई बात नहीं, अभी आपरेट कर देंगे। कुछ देर बैठना होगा। मिसेज पांडेय पूरी तैयारी से आई थी। बेग में मेथी के पराँठे थे, गप्प से खा लिए। पांडेय जी का भी मन था,पर मन मसोस कर रह गए। कुछ देर बाद डॉक्टर पांडेय जी को अंदर के कमरे में ले गई। कुर्सी पर बिठाया, मुँह खुलवाया और झट से सुन्न करने वाला इंजेक्शन लगा दिया। बीस मिनट बाद भीतर से दर्द वाले हिस्से में लगने लगा कि कुछ सुन्न सा हो रहा है कि डॉक्टर ने फिर से बुलाया और लगभग 10 मिनट के भीतर अपने कई औज़ारों के साथ तकलीफ से पांडेय जी को मुक्त कर दिया। पांडेय जी ने भी पूरी हिम्मत दिखाई थी कि निकल जाना, ज़्यादा पंगे मत करना। जब डॉक्टर ने दाँत दिखाया तो दोनों हाथों से प्रणाम कर निकल लिए। इधर पत्नी जी बेहद खुश कि बचा दिए न पूरे पाँच हज़ार। ये मेरे हुए। चुपचाप कर घर को चल दिये और पत्नी जी साइन बोर्ड पर देख रही थीं किसी मॉडल को नोज़ पिन पहने हुए। कहने लगी कि मेरा नोज़ पिन कहीं गिर गया, इस बार नोज़ पिन ही लेना है, आपसे ही। पता नहीं किस क्षण में हामी भर ली थी, भाई ने। सन्डे को लेकर ही मानी। पांडेय जी भी खुश थे,चल यार!

दर्द का मसला खत्म हुआ और आगे नोज़ पिन क्या बड़ी रकम हैं घर की खुशियों के आगे, वह कुछ भी कर सकते थे, और यह तो आख़िर नोज़ पिन है। कितने मुश्किल से बचा कर रखे थे पाँच सौ के दस नोट। ऐसे निकल गए जैसे समंदर किनारे की रेत!

बाई गॉड की कसम, नोज़ पिन में ग़जब लग रही हो। जानू!

अगले सन्डे लाजपत नगर चले, आपका घूमना हो जाएगा और मैं दो चार सूट ले लूँगी, सच्ची वहाँ रेंज कमाल की है। आप को भी खिला दूँगी,राम लड्डू!

सोचने लगे पांडेय जी राम लड्डू की प्लेट तीस रुपये की, नोज़ पिन पाँच हजार की और सूट भी कम से कम इतने में ही पड़ेंगे। कहने लगे कि मुझे टूर पर जाना हैं। फिर कभी देखते हैं। पत्नी भी समझदार थीं,आख़िर मिसेज पांडेय थीं। कहने लगीं,इतनी जल्दी नहीं है, आपके साथ ही जाऊँगी, कहते है न! साथ जाने से प्यार बढ़ता है। हम्म! बढ़ गया न प्यार!

कुछ ज़रूरत से ज़्यादा ही। आप न दुनिया के बहुत अच्छे पति हो। आज बड़ा प्यार आया है। पर अगला महीना अभी दूर है। अजी!आप भी न समझते नहीं, माहौल बनाना पड़ता है,आई बात समझ में!!

आ गई, भाग्यवान्। विलायती राम पांडेय ने गहरी साँस लेते हुए कहा। कहने लगे-ठीक है,अदरक वाली चाय ही पिला दो, पिलाती हूँ जी, अदरक वाली चाय के साथ नमकपारे भी देती हूँ। पर याद रखना, सर्दी, लाजपत नगर, मेरे सूट। सोते-सोते भी पांडेय जी बड़बड़ाने लगे,अभी महीना दूर है मैडम।

***

# छपास पीड़ा

समीर लाल 'समीर'

यूँ तो बड़े समय से लिखते-लिखाते आए हैं। ब्लॉग से लिखा। फेसबुक से लिखा। इन्टरनेट में जहाँ भी गुंजाईश दिखी, वहाँ से लिखा। पाठक संख्या भी अच्छी खासी ही रही है। वक्त जीना सिखाता है कि तर्ज पर जब डायरी से प्रमोट होकर इन्टरनेट पर पदार्पण किया तो इन्टरनेट ने ही पाठक कबाड़ने के गुर सिखाए। फिर जैसा की हमेशा होता आया कि गुरु गुड़ रह गए और चेला शक्कर। वो दिन भी आया जब हम इन्टरनेट पर पाठक जुगाड़ने के गुर सिखाने लगे। गुर सिखाने के पीछे भी मंशा वही कि इसी बहाने जिस मछली को सिखाने की बंसी में फसाएँगे वो भी तो अपनी लेखनी का पाठक ही बनेगा। बिना फायदे के तो नॉट फार प्रॉफिट एनजीओ भी काम नहीं करती, तो हम तो जीते जागते इन्सान हैं आम जगत् के वासी। आज का तो सन्यासी भी मोक्ष के गुण बताते-बताते कम से कम आपको आपकी माया से तो मोक्ष दिला कर उसे अपनी तिजोरी में भर लेता है।

डायरी के समय में अपनी रचना सुनाने और पाठक जुटाने के लिए आमतौर पर चाय और खाने का प्रलोभन देकर रचनाएँ झिलवाई जाती थीं। अब कोई बंदा आपकी चाय पिये या खाना खाए तो तारीफ तो मजबूरी वश करेगा ही। ऐसे वक्त में अपनी आने वाली नॉवेल को सुना डालने के लिए ऊँचे लेखकों ने कॉकटेल पार्टी का इन्तजाम करना भी सीख लिया था। सब वक्त और जरूरत अपने अनुरुप सिखा देती है। बहुतेरे लेखक जिनकी ऊँची पहुँच थी, वो तो पाठक मात्र इसलिए भी पा जाते थे कि वो पाठक भी लिखता है एवं महत्त्वाकांक्षी है और आपको सीढ़ी की तरह देख रहा है।

इन्टरनेट का ज़माना जबसे आया तब से डायरी में बंद रचना का डायरी में बंद पड़े-पड़े दम तोड़ देने जैसा टंटा समाप्त हुआ। अब न तो अपना लिखा सुनाने के लिए आपको लोगों को खाने या चाय पर बुला कर घेरना होता है और न ही पान की दुकान पर आपको देखते ही लोगों के खिसक लेने की जलालत झेलनी होती है। दूसरा ये कि डायरी के ज़माने में बहुतेरे लेखक और कवि तो ये जान ही नहीं पाते थे कि जो वो लिख रहे हैं..... वो पत्र-पत्रिकाओं छप रही रचनाओं से बहुत बेहतर है और उन्हें अखबारों और पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर आमजन तक पहुँचना चाहिए। अक्सर संपादकों द्वारा एक बार रिजेक्ट होने पर एक शर्म और खुद को कमतर आँकने का आम भाव न जाने कितने बेहतरीन रचनाकारों को महज डायरी तक सीमित रख वक्त की धूल तले दबा गया..... कौन जाने! अधिकतर डायरीबाजों की बेहतरीन रचनाएँ जो उनकी डायरी तक सीमित थीं, वो उनके गुज़रते ही उनके बेटे के द्वारा मकान कब्जियानें और बेचने के दौरान कबाड़ी के हाथों बेच दी गई.... जो अंतत: किसी मूँगफली का पूड़ा बनी किसी कचरे के डिब्बे में वीर गति को प्राप्त हुईं। आज इन्टरनेट के ज़माने में एक लेखक के लिए संपादक की अस्वीकृति का रोड़ा खत्म हुआ सा

संपर्क: टोरंटो, कनाडा
ब्लॉग: उड़न तस्तरी
ईमेल: sameer.lal@gmail.com

लगता है। जो लिख रहा है वो अपने ब्लॉग से, फेस बुक से, इन्टरनेट पर अन्य जगह खुद ही छाप भी रहा है। रोड़ा खत्म होना अच्छा है कि बुरा..कौन जाने मगर जहाँ अच्छा लिखा हुआ सामने आने लगा है ..वहीं वाहियात लिखा भी छपता चला जा रहा है। अक्सर तो पूरा पढ़ जाने के बाद जब अंतिम पंक्ति के रूप में पढ़ते हैं कि अगर मेरी कविता पसंद आई हो तो कृपया लाईक करें और टिप्पणी करके उत्साह बढ़ाएँ, तब जाकर समझ आता है कि जो पढ़ा वो कविता थी। लोग लिखने में इतना व्यस्त हुए जा रहे हैं कि दूसरों का तो छोड़ो, खुद का लिखा भी लिख देने के बाद पढ़ने की फुरसत नहीं निकाल पा रहे हैं और फट से छाप दे रहे हैं। वो छपास पीड़ा से इतने अधिक ग्रसित हैं कि जब तक दिन भर में दो तीन कविता न छाप लें, कब्जियत का अहसास जाता ही नहीं।

अच्छाई के साथ पैकेज डील में बुराई तो आती ही है। अगर सब अच्छा ही अच्छा हो तो अच्छे की कीमत कौड़ी की न बचे। अच्छे की कीमत होती ही इसलिए है कि खराब आस पास बिखरा है। खराब अच्छे को कीमती बनाता है। सुगन्ध फैल रही है तो बदबू भी झौंकी जा रही है। संपादक के कंधे का बोझ.... वेताल की तरह उतर कर पाठक रुपी विक्रमादित्य के कँधे पर आ लदा है। छाँटना बीनना पाठक को है अब...संपादक की भूमिका तो रही नहीं इन्टरनेट पर छापने के लिए...आज जब लेखक ही प्रकाशक है तब पाठक की ज़िम्मेदारी एकाएक कई गुणित बढ़ गई है।

आज का ज़माना है मार्केटिंग का.... अच्छा बुरा लिखना अपनी जगह..... .मार्केटिंग अपनी जगह। मार्केटिंग के चलते आज मिट्टी सोने के भाव बेच दी जा रही है सुन्दर सलौनी पैकेजिंग में। मुलतानी मिट्टी फेस वाश के नाम पर एक नई ऊँचाई नाप रही है। ऐसे वक्त में आज का सच यह हो गया है कि आप अपना नाम बड़ा कर लिजिए.....आपका लिखा तो बड़ा हो ही जाएगा..... नाम बड़ा करने के भी अनेकों गुर हैं.....वो आप पर है कि इस हेतु आप कौन सा राजमार्ग लेते हैं? अनेकों राजमार्ग हैं..... किसको कौन सा सूट करे वो वास्तु पर आधारित है कि आप किस समय कहाँ पर किसके साथ हैं....आज आप अपने आस-पास देखेंगे तो पाएँगे कि कितने ही बड़े नाम साहित्य में ऐसे हैं जिन्होंने एक ज़माने से कुछ लिखा ही नहीं....बस। मठ सजाया है। अपना गुट बनाया है और मजबूरीवश अगर लिखा भी तो ऐसा..कि पढ़ कर लगता ही नहीं कि किसी स्थापित हस्ताक्षर की लेखनी है। कुछ अपने पद का लाभ ले रहे हैं..... वरना लेखन तो उनका..... प्रभु भी पढ़ें तो सटक लें..... मगर अब तक 28 व्यंग्य संग्रह.....20 कविता संग्रह छप चुके हैं.....पद प्रतिष्ठा कि इससे बेहतर मिसाल न मिलेगी कभी।

इतना कुछ हासिल..... इतना कुछ ज़ाहिर..... इन्टरनेट का परचम.... मगर उन सब के बावजूद..... आज भी जब इन्टरनेटीय रचनाकार किसी भी अखबार या पत्रिका में छप जाता है तो जिस खुशी का अनुभव करता है सके तो क्या कहने!!

अखबार या पत्रिका में छपते ही रचनाकार अपने ब्लॉग, फेसबुक, ईमेल सब तरफ से सबको सूचित करता है कि फलाँ अखबार ने मुझे छापा है.....फलाँ पत्रिका नें मुझे छापा है.....ये देखो कटिंग और यह रहा लिंक.....माने कि जिस बंधन को तोड़ने निकले थे, उसी में बंध कर गौरवांवित हो लिये..... मानो कोई नेता भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज़ उठा कर जीता हो और आज उसी भ्रष्टाचार में लिप्त हो गदगद हुआ जाता हो कि मेरा कोई क्या बिगाड़ लेगा...

हम तो खुद भी इस आलेख के छपते ही इसके अपने की खबर छापेंगे इन्टरनेट पर, अपने ब्लॉग पर, अपने फेसबुक। जैसा जमाना, उस तरह का हो जाना, इसमें कैसा शरमाना । बात महज़ इतनी सी है कि किस पाले में जाकर आपको फायदा मिलता है वरना तो सब पाले बेकार हैं.....

आज इन्टरनेट पर आने से अखबार ने पहचान लिया और आप छपने लगे अखबार में...तो पुनः आपका अखबारी लाल कहलाना ही फायदेमंद कहलाया वरना तो इन्टरनेट पर तो कोई भी छप लेता है..

डिसक्लेमर: वाकई अच्छा लिखने वाले इस लेखन के दायरे बाहर हैं। वो तो अच्छा लिख ही रहे हैं।

***

## लघु कथा

# प्रेरणा

**सदाशिव कौतुक**

कुछ चींटियों ने पर्वत पर पहुँचने का मन बनाया और कुछ चींटियों ने विरोध किया ''हम सबसे ऊँचे पर्वत पर पहुँच भी गए तो हमें कौन याद करेगा। हम भोजन लेकर नहीं चल सकतीं, साथ में दवाई लेकर भी नहीं चल सकती, मौसम की मार झेलने के लिए कपड़े हमारे पास नहीं है, नंगे पाँव हमें चढ़ना पड़ेगा। अस्वस्थ हो गई तो मोबाइल करके डॉक्टर नहीं बुला सकती, बीमार हो गई और लौटना पड़ा तो हेलीकॉप्टर लेने नहीं आ सकता, फिर यह दुस्साहस हम क्यों करें?''

चीटियों का प्रतिनिधित्व करने वाली चींटी ने कहा- ''बहन तुमने ठीक कहा। ये सब साधन हमारे पास नहीं है तभी तो हम यह प्रेरणादाई कार्य करना चाहती हैं ताकि साधन सम्पन्न लोग कोई ऐसा लक्ष्य बनाएँ और कीर्तिमान हासिल कर सकें। यदि हम लोगों को प्रेरणा देने में सफल हो गए तो लोग समझें न समझें हमारा जीवन जीने का उद्देश्य तो पूरा हो ही जाएगा। हम डरी नहीं तो अद्भुत कार्य कर गुज़रेंगी डर गई तो उसी क्षण शक्तिहीन हो जाएगी। क्योंकि खुद को कमज़ोर समझना पाप है।''

प्रेरक विचार सुनकर सभी चींटियों ने सहमत होकर पर्वत की चढ़ाई प्रारम्भ कर दी।

***

संपर्क: श्रमफल, 1520, सुदामा नगर, इन्दौर,
मो. 09893034149, 7240933632

व्यंग्य

# बाबाओं के देश में

कैलाश मण्डलेकर

संपर्क: 38 जसवाड़ी रोड, बैंक ऑफ़ इंडिया के पीछे, खंडवा, म. प्र
मोबाइल: 9425085085
ईमेल: kailash.mandlekar@gmail.com

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि बाबाओं से, शुरू से ही पाला पड़ता रहा। बड़े घरानों का तो नहीं मालूम पर हम जैसे निम्न मध्यमवर्गीय परिवारों का बचपन तो इस शाश्वत धमकी को बालघुट्टी में पीते हुए ही गुज़रा है कि ज़्यादा शैतानी की तो बाबा पकड़ ले जाएँगे, जबकि उन दिनों अभाव इतने थे कि शैतानी भी बहुत दयनीय हुआ करती थी। इस देश की नौजवान पीढ़ी अपनी पैदाइश से ही बाबाओं से डरी हुई है। अतीत के बाल मनोविज्ञान में बाबा की उपस्थिति या तो भयभीत करने वाली रही है या बंधी हुई मुट्ठी से रुपया गायब करने वाली। आज भी बाबा का नाम सुनकर स्मृति में एक ऐसी आकृति उभरती है जो भय और भीख के बीच झोली फैलाए, आँखें तरेरती हुई खड़ी है, जब तक झोली में कुछ डालोगे नहीं तब तक सामने वाला ऐसे ही घूरता रहेगा। कहते हैं पौराणिक काल में ऐसी रक्ताभ आँखें अपने तप के बल पर सैकड़ों मासूमों को भून चुकी हैं। मुझे याद नहीं पड़ता, किसी बाबा को देख कर कभी साष्टांग दंडवत करने का मन हुआ हो या जीने का उत्साह अथवा उमंग पैदा हुई हो। प्राचीन कवि केशवदास तो बाबा संबोधन से चिढ़ने लगे थे। उनके बाल क्या सफ़ेद हुए सुघड़ नायिकाएँ उनको बाबा कहने लगीं। ''चन्द्र बदन मृग लोचनी बाबा कहि कहि जाय'' जबकि देखा जाए तो कवि के सौन्दर्य बोध को वार्धक्य ने छुआ भी नहीं था। संभव है दैहिक तौर पर भी पर्याप्त समर्थ रहे हों। कवि लोग वैसे भी कहाँ बूढ़े होते हैं। बाज दफे, बालों की सफेदी आदमी को व्यर्थ बाबा बना देती है। परसाई जी ने सर पर पहला सफ़ेद बाल देखा तो बहुत अनमने ढंग से कूच की तैयारी करते हुए अपनी विरासत को किसी भले आदमी को सौंपने की दुविधा में घिर गए, जबकि संघर्ष चेतना उनमें आख़िरी तक जस की तस बनी रही। यों आजकल बाबा लोग बालों को डाई करके काला कर लेते हैं। यह बाबावाद पर बाज़ार का असर है। बाबागिरी और लुच्चई का यह दुर्लभ गठ्जोड़ इन दिनों कई डेरों को आबाद किये हुए है; जिनके गुप्त एजेंडे में सैकड़ों मध्यम वर्गीय परिवारों की आकांक्षाओं को ध्वस्त करने के आयुध मौजूद हैं। बाबा का घरेलू संस्करण बब्बा कहलाता है जो बड़ा प्रेमल और आदरयुक्त संबोधन है । व्यंग्यकार ज्ञान चतुर्वेदी ने ''हम न मरब'' नामक उपन्यास में इस बब्बा को लगभग अमर कर दिया जबकि पूरी कहानी में ये बब्बा, मृत्यु की त्रासद यातना झेलते हुए आख़िरी तक लड़ते रहे। इन दिनों इसी बब्बा को समर्पित एक बुन्देली लोकगीत ''कहन लगे मोसे बब्बा, कहाँ गवो चिलम तमाखू को डब्बा'' पर शहरी बाराती इतने ठुमके लगाते हैं कि ट्रेफिक जाम हो जाता है पर बब्बा का तमाखू का डब्बा फिर भी बरामद नही होता।

भारतीय समाज के इस बाबा प्रेम को समझना मुश्किल है। यहाँ सन्यासी के प्रति श्रद्धा के संस्कार इतने गहरे हैं कि वह लूट खसोट भी कर ले तो चुपचाप बर्दाश्त कर लेंगे। कोई बाबा एक बार कह भर दे कि इस नश्वर संसार को छोड़कर मेरी शरण में आ जाओ, लोग चरणों की धूल लेने को उतावले हो जाते हैं। अबाल, वृद्ध, नारी-पुरुष सब दौड़ पड़ते हैं। बाबा के आसपास मिनटों में मेला लग जाता है। इहलोक और परलोक सुधारने की जितनी व्याकुलता इस देश में है उतनी दुनिया में कहीं नहीं दिखाई देती। परमात्मा से मिलने की ऐसी विकट प्यास सिर्फ हिन्दुस्तान में ही देखने को मिलती है । श्रद्धालुओं की मजबूरी है कि उन्होंने परमात्मा को सिर्फ कैलैंडर में देखा है लेकिन वे उसे साक्षात् देखना चाहते हैं। बाबाओं ने परमात्मा की छवि ही ऐसी बना दी है मानो वह सत्तारूढ़ पार्टी का सांसद हो, कि मिल जाए तो दर्शन वगैरह कर लें, नहीं कुछ तो भगवान् से कॉलोनी की सड़क बनवाने का ही वरदान माँग लेंगे। इस दौर के बाबा लोग भगवान् की दलाली करने में पारंगत हो चुके हैं। वे लोगों के दुखों और विवशताओं की बेहतर ब्लेकमेलिंग कर लेते हैं।सामाजिक हताशा, पारिवारिक विखंडन तथा राजनीतिक छल और सतत विश्वासहीनता ने आदमी को चमत्कारों की तरफ मोड़ दिया। वह घर के बुज़ुर्गों को हड़काने लगा, और बाहर वाले बाबाओं के सजदे करने लगा। ऐसे बाबा जिनके पास रुपये और रूपसियों का ग्लेमर है और, जो अपने हर आशीर्वाद की कीमत वसूलना जानते हैं। यह निर्बाध मूल्यहीनता और प्रवंचना के प्रति थोथी आस्थाओं का दौर है। आर्थिक जानकार जिसे उदारीकरण कहते हैं उन्हें सामाजिक सच्चाइयों की कितनी जानकारी है मुझे नहीं मालूम,लेकिन इन दिनों जिस त्वरा से बाज़ार और वस्तुओं की प्रतिष्ठा बढ़ती जा रही है उससे ज़्यादा तेज़ी से आदमी बेचैन और खाली होता जा रहा है। महँगी कारें, सेलफोन, भव्य बंगले और हवाई यात्राएँ उसे रोज़- रोज़ मारती हैं। वह अपने घर को बाज़ार की तरह सजाना चाहता है जो ईमानदारी की कमाई में संभव नहीं हो पा रहा है । बाज़ार के छद्म और प्राणघाती यथार्थ ने उसे एषणाओं के तपते रेगिस्तान में लाकर छोड़ दिया है। उसे अपने कुदरती सामर्थ्य का पता नहीं है, वह आत्मनिर्भरता की असीम संभावनाओं की तरफ पीठ करके कागज़ की कश्तियों से भवसागर पार करना चाहता है। उसे किसी न किसी बाबा का प्रसाद चाहिए फिर वह पाखंडी या बलात्कारी ही क्यों न हो। विचारणीय है कि आश्रम और अड्डे में कितना बारीक फर्क रह गया है इन दिनों।

***

व्यंग्य

संपर्क: दूरभाष:+1 860-816-2770
(वर्तमान नं. अमेरिका)
ईमेल: arunarna2@gmail.com

# हैस टेग और मैं

अरुण अर्णव खरे

बड़े ही नामुराद क़िस्म के बंदे होते हैं वे जो हैस टेग का बुरा मानते हैं। इनमें से कई तो और भी गिरे हुए होते हैं जो टुच्चेपन पर उतर कर ब्लॉक कर देने की घिनौनी धमकी देने लगते हैं। मुझे ऐसे लोगों पर तरस आता है। कितनी ही महत्त्वपूर्ण सूचनाओं और दुनियादारी के ज्ञान से बिचारे महरूम हो जाते हैं। यदि आप फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम या व्हाट्सएप पर आए हो तो हैश टेग से डरना क्या..... उदारवादी बनो..... टेग करो और टेग होते रहो..... नहीं तो कहीं अज्ञातवास में चले जाओ। मैं अपने उदारवादी रवैये के कारण ही सबका चहेता हूँ। इसी कारण लगभग दो हज़ार चहेते लोग मुझे प्रतिदिन बिना नागा हैस टेग करते हैं। इसी हैस टेग के बलबूते पर मेरे बंद ज्ञान-चक्षु कमल की पंखुड़ियों से खुल गए हैं। मेरा सामाजिक दायरा बढ़ गया है और तो और मुझमें अपार विनम्रता आ गई है।

सबसे पहले ज्ञान-चक्षु खुलने की बात बताते हैं। जो कविता बच्चन जी ने या जो शेर ग़ालिब ने अपने जीवनकाल में कभी नहीं लिखे थे, मुझे उनकी जानकारी भी इस अभूतपूर्व माध्यम से मिली। उनकी कितनी ही अलिखी रचनाएँ फेसबुक, व्हाट्सएप से होते हुए अन्तर्जाल में उड़नतश्तरियों की तरह घूम रहीं हैं। इस हिंसक होते समय में इन सृजनकर्मी लोगों की यह उदारता मुझे बहुत अपील करती है। स्वंय लिखकर बच्चनजी या ग़ालिब जी के नाम से कट-पेस्ट करने वाले ये साधक सच्ची श्रद्धा के अधिकारी हैं।

इसी हैस टेग की कृपा से ही बापू की हत्या करने वाले गोडसे का अंतिम वक्तव्य सुनने का सुख भी मेरे कानों ने प्राप्त किया। आज से पूर्व शायद ही किसी को पता था कि मक्का में शिवलिंग की पूजा होती है। हमने तो पूजा का वीडियो भी इसी हैस टेग की कृपा से देखा । सच-झूठ के सारे खटक्रमों से ये मंच बहुत ऊपर है..... लोग देखते हैं..... और उसे आगे सरका देते है..... कुछ समय इधर-उधर भटकने के बाद वह वायरल शब्द के साथ बूमरेंग होने लगता है। व्यक्तिगत रूप से भी टेग होने का मुझे बहुत लाभ मिला है। डायरी में बंद अपनी तथाकथित कविताओं को जब मैंने दूसरों को टेग कर-करके ज़बरन ही सही, पढ़ने को विवश किया तो मुझे महाकवि वाली फीलिंग आने लगी। जिनकी कविताओं को मैं पसंद करता था बदले में उनकी पसंदगी का बटन मेरी कविताओं पर भी चमकता था। कुछ ज़्यादा ही उदार किस्म के लोग लाल रंग के दिल को कविता के नीचे चिपका देते थे - मुझे लगता वे दिल खोलकर प्रशंसा करना चाह रहे थे पर अपने सामने ना पाकर अपना दिल ही निकाल कर रख गए हैं।

एक उदाहरण से ही मेरे बढ़े हुए सामाजिक दायरे का अहसास आपको हो जाएगा। मैंने अपने बेटे के मुण्डन का इन्वीटेशन कुछ ख़ास मित्रों को टेग कर भेजा था..... पर भाई लोगों ने उसे अपने मित्रों को टेग करके आगे बड़ा दिया। चालीस-पचास लोगों के निहायत ही पारिवारिक और ख़ास मित्रों के कार्यक्रम में साढ़े चार सौ लोग तशरीफ़ ले आए। हालाँकि पुत्र के साथ ही मेरा भी मुण्डन होने की स्थिति निर्मित हो गई थी, लेकिन दिल गद् गद् गद् हुआ जा रहा था। उस दिन से पहले फ़ोन पर फ़ोन लगाने और घर-घर जाकर बोलने के बाद भी बीस लोग इकट्ठे नहीं होते थे पर हैस टेग की महिमा देखो - चहेतों का हुजूम ही उमड़ आया। सारे परिचित मेरी लोकप्रियता का लोहा मान गए और कुछ तो ईर्ष्या से जलते हुए जल्दी ही निकल लिए।

अब विनम्रता की बात भी लगे हाथ बता ही देता हूँ। टेग होने के पहले मैं भी दूसरों की तरह उजड्ड और लम्पट था। जब मेरी कविताएँ प्रशंसा पाने लगीं तो मैंने भी कवियों के कुछ ग्रुप ज्वाइन कर लिए। वहाँ पता चला कि देश की कवि जमात तो बहुत ही विनम्र है। यहाँ सब एक दूसरे को आदरणीय, परम श्रद्धेय और गुरुदेव जैसे शब्दों से ही संबोधित करते हैं और हर रचना को अद्वितीय और अनूठा सृजन बताते हैं। कुछ तो चुम्मा-चुम्मा दे दे या लोटन कबूतर छाप गीत लिखने वाले गीतकारों की लेखनी को भी नमन करते हुए दण्डवत् हो जाते हैं। इस सबका मुझ पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा और मुझमें भी विनम्रता की कई प्रजातियों के कीड़े प्रवेश कर गए। अब आलम यह है कि मुझे पहचानने वाले आँखें फाड़-फाड़ करके मुझे देखते हैं और कुछ तो ख़ुद को चिकौटी काटकर स्वंय के होश में रहने का ख़ुद को ही सबूत देते पाए जाते हैं।

***

# रेतीले अंधड़ों से हरी-भरी तलहटी तक

डॉ.सुमित्रा महरोल

संपर्क: डी-160, जीएफ, रामप्रस्थ,
गाज़ियाबाद 201011
मोबाइल: 9650466938
ईमेल: drsumitra21@gmail.com

हाशिए पर रहने की पीड़ा और त्रास को एक से अधिक स्तरों पर मैंने झेला है। एक से अधिक कारण मौजूद थे मुझे उपेक्षित, अपमानित करने को, मेरे आत्मविश्वास को रौंद, दीन -हीन स्थितियों में पड़े रहकर, विवश भाव से दूसरों की दया पर ज़िन्दगी बसर करने को..... मगर मुझे यह ज़िन्दगी स्वीकार न थी। स्थितियों से समझौता करने की बजाए, मैंने संघर्ष का, कर्मठता का, लगन का, ज़िन्दादिली का रास्ता चुना, चाहे उसमें कितनी ही बाधाएँ क्यों न थीं।

स्त्री, दलित व शारीरिक विकलांग, इन तीनों पीड़ाओं को मैंने एक साथ झेला। दलित और स्त्री होने के कारण विषमता मूलक स्थिति में पड़े रहने के कारणों का विश्लेषण कर समाज की व्यवस्था को उत्तरदाई ठहराया जा सकता है, पर विकलांगता के लिए किसे कटघरे में खड़ा किया जाए..... नियति को, प्रकृति को या हालत को।बहुत मुश्किल होता है अपनी अपूर्णता के साथ जीना।अपनी जिजीविषा से आप विकलांगता पर विजय पा भी लें, पर समाज कभी आपको समानता का दर्जा प्रदान नहीं करेगा। कदम-कदम पर आईना दिखा कर कहता रहेगा की आप अपूर्ण हैं.... उनके सामान नहीं।

अतीत में जाकर आत्मकथांश लिखना इतना आसान नहीं; क्योंकि उन त्रासपूर्ण पीड़ादाई स्थितियों को दोबारा जीना पड़ता है। अतीत में घटी वे दुखद घटनाएँ आज भी उतनी ही पीड़ादाई हैं। कुछ प्रसंगों को लिखते हुए आज भी मेरी आँखें तभी की भाँति निरंतर बहने लगतीं हैं। सुखद यह है कि अँधड़ों से भरे तपते रेगिस्तान के सामान उस समय को पार कर आज मैं हरी-भरी तलहटी में हूँ।

समाज में सबसे हीन समझी जाने वाली जाति में मेरा जन्म हुआ था। दिल्ली के फ़िरोज़शाह रोड स्थित एक कमरा-रसोई का साधारण घर जहाँ मैं अपने माता-पिता और दो बड़े भाइयों के साथ रहती थी। एक भाई मुझसे दो साल व दूसरा पाँच साल बड़ा था। मेरी अवस्था आठ-नौ माह की रही होगी। मेरे पिता डेसू में क्लर्क थे।

अपनी माँ से मैंने कई बार सुना कि उस उम्र में मैं बड़ी स्वस्थ व चपल थी। माँ घरेलू कार्यों में व्यस्त रहती। भाई हम उम्र के साथ खेलते रहते। मैं घुटनों के बल रेंगती अपनी तर्जनी उँगली व अँगूठे से कभी फर्श पर चलती चींटी को पकड़ने की चेष्टा करती, कभी फर्श पर बिखरी चीज़ों को खिलौना बना घंटों उनमें उलझी रहती, कभी कमरे में मौजूद मेज़, चारपाई इत्यादि को पकड़ खड़ी हो उनके चारों तरफ परिक्रमा लगाने लगती।मेरी अपनी अलग ही दुनिया थी, जिसमें लीन रहती।

एक दोपहर भाइयों के साथ माँ ने मुझे भी दाल और रोटी परोस दी। आज के सामान कहानी सुना-सुना कर बहला-बहला कर बच्चों को खिलाने का उस समय माताओं को अवकाश न था। कुछ देर तो मैं दाल में रोटी डुबा-डुबा कर खाती रही तभी अचनाक न जाने मुझे क्या सूझा की दाल की कटोरी उठा दाल को भी पानी के सामान पीने का यत्न करने लगी। कुछ ही दाल मेरे मुँह में जा पा, बाकी सारी दाल मेरी गर्दन, छाती, पेट को भिगोती हुई मुझ पर आ गिरी। गनीमत यह थी कि दाल गर्म नहीं थी। माँ मुझे उठा बाहर मोरी पर ले गईं। वहाँ उन्होंने मुझे नहलाया। कपड़े इत्यादि पहनाकर गोद में ले लिया। मुझे गोद में लिए-लिए ही माँ भोजन करने लगी। माँ की गोद में ही मुझे नींद आ गई व सोते-सोते ही मुझे वह बैरी जानलेवा बुखार चढ़ा, जिसने मेरी आगामी ज़िन्दगी की रूपरेखा ही बदल दी।

तेज़ बुखार में बेसुध मैं बहुत देर तक सोती रही। मेरे बहुत देर तक न कुनमुनाने पर माँ को कुछ शक हुआ। उन्होंने मुझे छूकर देखा। तेज़ बुखार ने उनके माथे पर भी बल डाल दिए। देर शाम मुझे कंधे से लगा वो बगल के एक झोलाछाप डॉक्टर के पास ले गई। डॉक्टर ने बुखार उतरने की दवा माँ को दी। कई दिनों के बाद बुखार उतरा। बुखार के पूरी तरह उतरते-उतरते मेरे दोनों पैर बेदम होकर झूलने लगे। अब माता-पिता का माथा ठनका। आस-पास के लोगों ने कहा छोरी के पैरों को हवा मार गई है।

अब सरकारी अस्पतालों में मुझे लेकर दौड़ने का सिलसिला शुरू हुआ। माँ जल्दी उठ भोजन बनाती। दोनों भाइयों को पड़ोस में छोड़ती। पिता जी को दफ्तर से छुट्टी लेनी पड़ती। मुझे लेकर दोनों कई-कई बसें बदल कर अस्पताल पहुँचते। अस्पताल में भारी भीड़ उनका स्वागत करती। मुझे गोद में लेकर माँ वहीं कहीं बैठ जाती व पिता पर्ची वाली लाइन में लगते। बहुत देर बाद वे डॉक्टरों तक पहुँच पाते। जूनियर डॉक्टर सीनियर डॉक्टर को रेफर करता। सीनियर डॉक्टर स्पेशलिस्ट को। इसी तरह दोपहर ढलने को आती। कभी ये टेस्ट, कभी वे टेस्ट।

कोई परिचित सलाह देता अमुक अस्पताल अच्छा है, वहाँ दिखाओ। चल रहे इलाज को छोड़कर दूसरा अस्पताल आजमाया जाता। किसी एक अनुभवी स्पेशलिस्ट डॉक्टर पर भरोसा कर धैर्य से इलाज कराने का विवेक किसी के पास नहीं था। उन्हें जादू की छड़ी चाहिए थी जिसे घुमाते ही मैं एकदम भली चंगी हो जाती।

जल्दी ही पिता रोज़-रोज़ दफ्तर से छुट्टी ले लम्बी लाइनों की कवायद से तंग आ गए। अस्पताली माहौल से उन्हें बेहद चिढ़ थी। वो तो मजबूरी में मेरे कारण इतना समय उन्होंने अस्पतालों को दिया या खुद को समझने के लिए कि हमने बेटी का इलाज कराया अब भगवान् की मर्ज़ी न हो तो कोई क्या करे!

कुछ समय के बाद उन्होंने इलाज बंद कर मुझे मेरे हाल पर छोड़ दिया। काश! उन तात्कालिक परेशानियों को नज़रअंदाज़ कर किसी ढंग के डॉक्टर से लगकर मेरा इलाज कराया होता तो आगामी ज़िन्दगी में मुझे इतने खून के आँसू न रोने पड़ते।

पोलियो होने के तत्काल बाद यदि उचित चिकित्सा पीड़ित को मिल जाए तो पूरी तरह तो नहीं पर काफी हद तक रिकवरी संभव है। देर होने पर रिकवरी के चांसेज़ बहुत कम हो जाते हैं। मेरे मामले में बहुत सा समय तो झोला छाप डॉक्टर ने खा लिया था। माता-पिता अस्पताल ले तो गए पर धैर्य से, योग्य डॉक्टर से इलाज करवाने का टाइम उनके पास नहीं था। बच्ची के भविष्य की ख़ातिर हर हाल में उसे ठीक करने का, उचित इलाज के लिए अपना सब कुछ दाँव पर लगाने का जज़्बा व जुनून उनके पास नहीं था। उन्हें अपनी कुछ महीनों की तात्कालिक परेशानियाँ नज़र आईं। अक्षमता के कारण बेटी के अंधकार मय दसियों वर्ष नज़र नहीं आए।

कहाँ तो पोलियो से पहले मेज़ पलंग का सहारा ले मैं खुद ठुमक-ठुमक कर चलती थी पर अब बैठकर घिसटा भी नहीं जाता था। ऐसे में माँ को गोद ही मेरा एकमात्र सहारा थी। गोद से उतरते ही मैं चीखने-चिल्लाने लगती पर तीन बच्चों की माँ, मेरी माँ को मेरे अलावा भी अनेक कार्य होते थे। कुछ समय बाद माँ की भी तबियत ख़राब रहने लगी। वह पुनः गर्भवती हो गई थी। अब माँ की जान अजब सांसत में रहने लगी। छोटे-छोटे बच्चों के साथ सारे घरेलु कार्य; चौबीसों घंटे रोती-बिसूरती बच्ची व खराब तबीयत।

पास ही में टोली जमा कर बैठे रहने वाले बुज़ुर्गों की मंडली मेरे बिसुरने से बड़ी तंग थी। कभी-कभी वो मुझ रोती को ज़ोर से धमकाते-''ठहर जा चुप नहीं हुई भला'' उनकी तीव्र गर्जना से सहम मेरी ऊपर की साँस ऊपर व नीचे की नीचे रह जाती पर बेआवाज़ आँसू व सिसकना जारी रहता॥

समय आने पर मेरी माँ ने एक और बेटे को जन्म दिया। अब माँ अति व्यस्त हो गई। मेरी रही-सही गोद भी छिन गई। हर वक़्त रिरियाती रोती झींकती मैं माँ के पीछे लगी रहती। कभी-कभी झुँझलाकर माँ मुझे खूब मारती।

***

# थाईलैंड के विश्वास या अंध- विश्वास
# अमेरिका का हालोईन का त्योहार

संपर्क: aryansv@hotmail.com

संपर्क: lavnis@gmail.com

*थाईलैंड के अनिल शर्मा ने थाईलैंड और अमेरिका की लावण्य शाह ने अमेरिका के बारे में कुछ ऐसी जानकारी दी है, जो इस आधुनिक युग में अजीबोगरीब भी है और रोचक भी। जिसका एक अंश 'विश्वास' दोनों देशों में तक़रीबन एक सा है। हालाँकि यह जानकारी अपने-अपने देश के लोगों के रहन-सहन और रूह तक पहुँचाकर उनसे पहचान करवाती है।*

## थाईलैंड के विश्वास या अंध- विश्वास

**अनिल शर्मा**

अगर पुरानी सभ्यताओं के बारे में जाने तो पता चलता है कि मानव सदा ही उन चीज़ों की पूजा करता रहा है, जिनसे वह डरता था और या फिर जिनके बारे में उसे उसके पूर्वजों ने बताया था जैसे कि आग, पानी, सूर्य, चन्द्रमा आदि की पूजा की जानी चाहिए: क्योंकि यदि ये देवता नाराज़ हो जाएँगे तो भारी विनाश होगा।

समय के साथ-साथ लोग सभ्य होते गए और धार्मिक क्रिया-कलापों को पूरा करने वाले लोगों ने नए-नए तरह के डर लोगों के दिलों में बसाने शुरू कर दिए, जैसे भूत-प्रेत, बुरी आत्माएँ आदि!

विज्ञान के इस युग में कई तरह की भ्रांतियाँ तो लोगों के दिलो-दिमाग से दूर हो गईं। और अब हर उस चीज़ को विज्ञान से तोलने लगे, जिनसे कल तक लोग डरते थे। 21वीं सदी में प्रौद्योगिकी से संपन्न औद्योगिकी समाज में जीते हुए भी आज थाईलैंड एक ऐसा देश है, जहाँ पर लोग भूत-प्रेतों में बहुत विश्वास करते हैं। लोग मानते हैं कि थाईलैंड में भूत-प्रेतों का एक बहुत बड़ा संसार है। भूत-प्रेत भी हमारी तरह रहते हैं, खाते-पीते हैं और उन्हें रहने के लिए घर चाहिए। खाने के साथ-साथ उन्हें भी प्यास लगती है, जिसके लिए उन्हें

प्रतिदिन पानी चढ़ाया जाता है।

हर प्रकार का नया फल, अनाज और सब्ज़ी जैसे हम लोग खाते हैं, वैसे ही भूत-प्रेत भी खाते हैं, ऐसा थाई लोगों का विश्वास है।

थाईलैंड में अधिकतर लोग बौद्ध मत में विश्वास रखते हैं, पर थाई संस्कृति पर चीनी संस्कृति का भी बहुत प्रभाव है।

यहाँ हर थाई घर में खुले में एक छोटा सा घर बनाया होता है, जिसे प्रेत-आत्मा का घर या जिस ज़मीन पर घर बनाया गया है, वहाँ के पूर्वजों की आत्मा का घर कहते हैं। इसे थाई भाषा में ''बान चाऊ थी''भी कहा जाता है।

ऐसा लोगों का विश्वास है कि यदि घर के आँगन में 'चाउ थी'(Chau Thi) प्रेत आत्मा के लिए घर बनाया जाए तो वह घर कई तरह की विपदाओं जैसे आग, चोरी, तूफ़ान आदि से उस घर में रहने वालों की रक्षा करते हैं।

घर से बाहर आने और जाने के समय घर का हर सदस्य इस मंदिर (Chau Thi) पर नतमस्तक हो कर ही जाता है। घर में रहने वाले लोग हर सुबह यहाँ पर धूप, अगरबत्ती और फल-फूल चढ़ाने के बाद ही कहीं जाते हैं।

अब इसे विश्वास कहें या अंध विश्वास, पर थाई लोगों की इन चीज़ों में अटूट श्रद्धा है।

***

# अमेरिका का हालोईन का त्योहार

लावण्य शाह

31 अक्तूबर, अँतिम रात्रि को आइरीश मूल के लोग, 1 नवम्बर से पहले अपने मृतक पूर्वजों के लिये मोमबत्तियाँ जला कर, प्रार्थना किया करते थे। जिसकी नींव रखी गई थी, 2000 साल से पहले ! समहेन केल्टीक याने आयरलैण्ड के लोगों के यम देवता हैं और उनकी मान्यता थी कि मृतक आत्माएँ 1 नवम्बर के अगली रात्रि को धरती पर लौटती हैं। सो, तैयार हुई फसल की कटाई के बाद, विविध प्रकार के परिधानों में सज कर, बड़े कद्दुओं को काट कर, उस के भीतर जगह करने के बाद, जली हुई मोमबतीयाँ रखी जातीं थीं कि जिससे प्रेतात्मा की बाधा ना हो और दूसरे दिवस की सुबह, हर आत्मा की भलाई के लिये पूजा करके बिताई जाती थी।

7वीं शताब्दी के बाद आयरलैन्ड से चल कर समूचे यूरोप में ये प्रथा, प्रचलित हुई और जब वहीं से प्रवासी, अमरीका भूखँड बसाने आए तो अपने रीति-रिवाज, रस्मों को, त्योहारों को भी ससंग लेते आए।

बाज़ारवाद का इस पर बेहद प्रभाव पड़ गया। धीरे-धीरे इसका प्रारूप बदल गया।

आज अमरीका में हालोईन के त्यौहार में लोग अजीब-अजीब पोशाक पहनते हैं। कुछ बीभत्स सी, कुछ भयानक सी, अलग-अलग पात्रों की वेशभूषा, पहन कर लोग एक दूसरे को डराते हैं। बच्चों को कार्टून पात्रों की पोशाकों में सजाया जाता है।

कई सारे लोग मनोविनोद के लिये, तस्कर, खलासी, नाविक, नर्स, राजकुमारी, कटे सर से झूठ-मूठ का रक्त बहता हो ऐसे या डरावने मुखौटे लगा कर, सफ़ेद, लाल, नीले पीले, हरे ऐसे नकली बाल भी लगा लेते है और विविध रूप धर लेते हैं और अँधेरी रात में खुद डर कर मज़ा लेते हैं या औरों को डराने के प्रयास में तरकीब करते हैं।

छोटे बच्चों के साथ उनके माता-पिता भी रहते हैं,जो हर घर पर दस्तक देकर पूछते हैं, ट्रीक ओर ट्रीट ? मतलब, कोई करतब देखोगे या हमें खुश करोगे ? तो घर से लोग बाहर निकल कर, चोकलेट, गोली, बिस्कुट इत्यादी उनकी झोली मे डाल देते हैं। हालोईन की शाम को घर, घर घूमते हुए खूब सारी केन्डी मिल जाती है बच्चों को !

यह त्योहार उसी समय मनाया जाता है जब उत्तर अमेरिका में पतझड़ ऋतु होती है। सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर पतझड़ ऋतु कहलाती है यहाँ। भारतीयों के तो नवरात्र, दशहरा और दीवाली त्योहार भी तभी होते हैं।

भारतीय लोग नवरात्र के साथ-साथ हालोईन भी मना ही लेते हैं और द्वार पर आए बच्चों का मन तोड़ते नहीं।

***

# एक अंतहीन प्रेम कथा

शशि पाधा

''मेरा हिन्दुस्तानी होना सिर्फ एक अहसास ही नहीं मेरी पहचान है और मेरा भारतीय सैनिक होना सिर्फ एक काम ही नहीं मेरा धर्म है, मेरा मान है।''

यह उद्गार है, परमवीर योद्धा लांसनायक मोहन गोस्वामी के। ये भारतीय सेना की महत्त्वपूर्ण यूनिट '9 पैरा स्पेशल फोर्सेस' के अविस्मरणीय योद्धा थे। इन्हें 26 जनवरी 2016 के स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर उनकी वीरता तथा महाबलिदान के लिए सर्वोच्च सम्मान 'अशोक चक्र' से विभूषित किया था।

उद्घोषक, लांसनायक मोहन गोस्वामी के अदम्य साहस और शौर्य का वर्णन करते हुए बोल रहे थे, ''इस शूरवीर सैनिक ने केवल 10 दिनों में 11 आतंकवादियों को मौत के घाट उतार दिया। 2 और 3 सितंबर 2015 की रात को लांसनायक मोहन नाथ गोस्वामी जम्मू-कश्मीर के कुपवाड़ा जिले के हफरूदा जंगल में घात लगाने वाले दस्ते में शामिल थे। रात आठ बजकर 15 मिनट पर चार आतंकवादियों के साथ उनकी भीषण मुठभेड़ हुई। इसमें उनके दो साथी घायल होकर गिर पड़े। लांसनायक मोहन दो साथियों के साथ अपने सहयोगियों को बचाने के लिए आगे बढ़े। जबकि उन्हें अच्छी तरह ज्ञात था कि आगे बढ़ने में उनके जीवन को खतरा है। लांसनायक मोहन ने पहले एक आतंकवादी को मार गिराने में मदद की। उसके बाद अपने तीन घायल साथियों की ज़िन्दगी पर आसन्न खतरे को भाँपते हुए, अपनी निजी सुरक्षा की परवाह न कर के बचे हुए आतंकवादियों पर टूट पड़े। दोनों ओर से भयंकर फायरिंग हुई। आतंकवादियों की गोली उनकी जाँघ में लगी लेकिन उसे नज़र अंदाज़ करते हुए उन्होंने एक आतंकवादी को मार गिराया और दूसरे को घायल कर दिया। अचानक उनके पेट में एक गोली लगी। अपने गंभीर घावों के बावजूद मोहन नाथ ने बचे हुए अंतिम आतंकवादी को दबोच लिया और उसे मार गिराया। इस अभियान में लांसनायक मोहन नाथ ने न केवल दो आतंकवादियों को मार गिराया, बल्कि अन्य दो को निष्क्रिय करने में भी सहायक हुए और अपने तीन घायल साथियों की जान बचाई। अंत में अपने लक्ष्य की पूर्ति के बाद यह योद्धा सदा के लिए माँ भारती की गोद में सो गया। लांसनायक मोहन नाथ गोस्वामी ने व्यक्तिगत रूप से आतंकवादियों को मार गिराने और अपने घायल साथियों का बचाव करने में सहायता प्रदान करते हुए भारतीय सेना की सर्वोच्च परंपराओं के अनुरूप अपना सर्वोच्च बलिदान दे कर विशिष्ट वीरता का प्रदर्शन किया। आज कृतज्ञ राष्ट्र इन्हें इनकी अप्रतिम वीरता के लिए सर्वोच्च पदक से विभूषित करते हुए गौरवान्वित है।''

उद्घोषक के ओजपूर्ण स्वर में इस शौर्य गाथा को सुनते ही सारा आकाश करतल ध्वनि से गूँज उठा। इस पदक को उनकी पत्नी भावना गोस्वामी ने करतल ध्वनि की गूँज के मध्य नतमस्तक होकर ग्रहण किया।

मैं, समारोह का यह विवरण हज़ारों मील दूर बैठी अमेरिका में अपने टीवी स्क्रीन पर देख रही थी। भावविह्वल होकर मैंने कहा था, ''धीरज रखना बहन, मैं शीघ्र ही तुमसे मिलने आऊँगी।''

मेरा ममता से भरा हृदय उस समय उस दुबली-पतली लड़की को गले लगाने के लिए

संपर्क:10804, Sunset Hills Rd, Reston VA, 20190, USA.
मोबाइल:2035896668
ईमेल : shashipadha@gmail.com

आतुर था। मुझे इस बात का अहसास था कि भारत के एक पहाड़ी नगर नैनीताल के पास बसे एक छोटे से गाँव 'लालकुआँ' में बैठी भावना मेरे अश्रुपूर्ण शब्द नहीं सुन रही है, किन्तु मुझे स्वयं से यह वायदा करके आन्तरिक सांत्वना मिली थी।

कुछ ही महीनों बाद जुलाई में '9 पैरा स्पेशल फोर्सेस' के 50वें स्थापना दिवस के उत्सव में आई भावना से मिल कर खुद से किया यह वायदा पूरा हुआ, इसकी मुझे प्रसन्नता हुई। उसे गले लगाते ही मैंने उसके सामने मन में उठते प्रश्नों की गठरी खोल दी थी।

मैंने कहा, ''भावना, मैं आपको तब से जानती हूँ जब मैंने टीवी स्क्रीन पर आपको राष्ट्रपति से अशोक चक्र एवं प्रशस्ति पत्र ग्रहण करते हुए देखा था। तब से मैं यही सोचती हूँ कि इतनी छोटी आयु, आगे की इतनी लम्बी जीवन डगर, कैसे, और किसके सहारे..!''

''मैम, मैं आठ जन्म, आठ युग, आठ लोक, कहीं पर भी जन्म लूँ, मुझे उनके जैसा और कोई मिल नहीं सकता। मेरे हर एकाकी पल में वो मेरे साथ हैं। वही मेरा अतीत थे; वही मेरा वर्तमान हैं, और उनकी मधुर स्मृतियाँ ही मेरा भविष्य हैं। उनके सहारे ही जी रही हूँ।''

मैंने अभी सवाल पूरा भी नहीं किया था कि उसने बिना रुके, बिना साँस लिए मुझे उत्तर देना आरम्भ कर दिया था। यह संकल्प और निष्ठा से भरे हुए शब्द थे लांसनायक मोहन गोस्वामी की युवा पत्नी भावना गोस्वामी के। मोहन गोस्वामी को वीरगति प्राप्त हुए कुछ महीने ही हुए थे, शायद आठ महीने। मैं उससे कभी नहीं मिली थी, लेकिन यह जानती थी कि मोहन मेरे पति की पलटन '9 पैरा स्पेशल फोर्सेस' का एक शूरवीर सैनिक था। आज मैं और भावना दोनों आमने-सामने बैठे एक दूसरे को सांत्वना दे रहे थे।

उसका त्वरित उत्तर सुनकर मैंने बड़े प्यार से पूछा, ''भावना, यह आठ का आँकड़ा क्यूँ?''

अब उसके होठों पर हल्की सी मुस्कराहट थी और उसकी बड़ी-बड़ी उदास आँखें अतीत की खोह में कुछ ढूँढ़ रही थी।

एक गहन उच्छ्वास लेते हुए वो बोली, ''मैंने मोहना के साथ आठ वर्ष का सुखद वैवाहिक जीवन बिताया है।। इन आठ वर्षों में मैंने जो भोगा-पाया, वो सुख मेरे लिए आठ जनमों की धरोहर है। वही जन्मों-जन्मों तक मेरा सम्बल है।''

मेरे सामने दुबली-पतली सी लड़की बैठी थी किन्तु उसके स्वर में वही ओज झलक रहा था जो आज की वीर नारी का सब से दृढ़ रक्षा कवच है। मुझे उसके स्वर में कहीं कोई कँपकपी, कोई घबराहट नहीं दिखी। मुझे लगा कि यही तो एक मुख्य लक्षण है जो वीर नारी को एक अलग पहचान देता है।

मैं श्रद्धा से उसे देख रही थी और वो अपने छोटे से वैवाहिक जीवन की प्रेम भरी गाथा सुना रही थी।

''मैम, बहुत शरारती थे मोहना। मुझे बिना बताए ही वो छुट्टी आते और घर के दरवाज़े पर खड़े हो कर मुझे हैरान कर देते थे। आनन-फानन में छत पर खड़े होकर गाँव वालों को आवाज़ें लगा कर कहते थे - 'चाची मैं आ गया, बुआ शाम का खाना आपके साथ!' आस-पास के बच्चों के लिए भी उपहार लाते थे। सारे गाँव का 'लाड़ला बेटा' थे वे। इतनी मौज मस्ती करते थे कि गाँव वाले स्नेह से इन्हें 'रौनकी' नाम से बुलाते थे।''

भावना अपने बीते जीवन की मीठी यादों में खो गई थी और मैं उसके हाव-भाव, उसके शब्दों की मिठास में डूब रही थी। मोहन ने उसे किसी शादी में देखा था और उससे शादी का प्रस्ताव कर बैठा था, और उस दिन भी तारीख़ थी - आठ।

मैंने मोहन और भावना की एक सुंदर सी तस्वीर में भावना के गले में प्यारा सा मंगल सूत्र देखा था। मैंने पूछ लिया, ''तो वो मंगल सूत्र भी आठ धागों से पिरोया होगा?''

हँस कर कहने लगी, ''नहीं मेम साब, वो तो इन्होंने मुझे शादी की दूसरी सालगिरह पर पहनाया था। मैंने बहुत कहा था कि पहले घर बनवा लेते हैं फिर दूसरे खर्चे। पर कहाँ माने थे वो। लाकर पहना दिया था।''

आज वो मंगल सूत्र तो नहीं देखा किन्तु उसके स्थान पर पतले से काले धागे में पिरोई काले मनकों की माला थी। पहाड़ में मैंने बहुत सी लड़कियों को ऐसी माला पहने देखा है। अच्छा लगा कि उसका गला और कलाई सूनी नहीं थी।

मैंने सुना था कि मोहन अच्छा शायर भी था। उसकी इस खूबसूरत कला के विषय में मैंने भावना से पूछा, ''बहुत से गीत गाए होंगे उसने तुम्हारे लिए। गीतों में तुम्हें बहुत कुछ कह जाता होगा। अच्छा तो तुम्हारी किस चीज़ की वह सबसे अधिक प्रशंसा करता था?''

पहली बार मुझे आभास हुआ कि वो थोड़ा झिझकी थी। कुछ पल चुप रही फिर हँस कर बोली, ''मेरी आँखें। कहते थे तेरी आँखों में कोई समन्दर है। तुम काजल मत लगाया करो।'' मैंने उसकी आँखों में उमड़े पीड़ा के तूफ़ान को देख लिया था। इससे पहले कि वो किनारे तोड़ जाए मैंने जल्दी से पूछा, ''और तुम्हें?''

बड़े कोमल भाव से उसने कहा, ''मुझे तो वो पूरे के पूरे ही अच्छे लगते थे। किस-किस की तारीफ़ करूँ? वो हैं ही इतने अच्छे, थे।'' वो अपने अतीत में खो गई थी और मैं उसे बाहर नहीं लाना चाहती थी। सुना था मीठी यादें ही दारुण पीड़ा की औषधि होती हैं। हम दोनों ही कमरे में चुप-चाप बैठे, मौन में उस पीड़ा की मरहम ढूँढ़ रहे थे।

अभियान से एक दिन पहले उसने अपनी डायरी में एक छोटी सी कविता लिखी थी -

''पत्नी के निस्वार्थ प्रेम की खुशबू को
महकता छोड़ के आया हूँ
मैं नन्हीं सी चिड़िया बेटी को चहकता
छोड़ के आया हूँ
मुझे सीने से अपने तू लगा ले ऐ भारत
माँ
मैं अपनी जन्मदायिनी माँ को तरसता
छोड़ के आया हूँ''

मैंने कई बार इन पँक्तियों को पढ़ा था। इन्हें भीतर तक महसूस करते हुए मैं यही सोचती थी कि 10 दिन में 11 खूँख्वार आतंकवादियों को मौत के घाट उतारने वाले इस शूरवीर योद्धा के हृदय में और कितनी जगह होगी जहाँ शौर्य और पराक्रम की उदात्त भावना के साथ पति, पिता और सुपुत्र के मनोभावों की अविरल नदियाँ बहती

रहती हो। मैं सदैव इस बात को मानती हूँ और अपने पाठकों को बताना चाहती हूँ कि सैनिक केवल 'घातक' नहीं होता। वह पति, पुत्र, मित्र, पिता, शायर, गायक, सेवक और अभिनेता भी होता है। वह 'अर्जुन' तब होता है जब उसे धर्म की रक्षा करनी होती है। वह धर्म चाहे राष्ट्र रक्षा हो, चाहे मानव रक्षा। उस समय वह रक्षक का चोला पहन कर अपना कर्त्तव्य निभाने चल पड़ता है।

''शायरी के साथ-साथ और भी शौक होंगे मोहन को?'' मेरे पूछने पर बहुत संजीदगी से बताने लगी, ''डांस का बहुत शौक था। स्कूल में उनके अध्यापक बताते हैं कि हर कार्यक्रम में उनके डांस की एक आइटम अवश्य होती थी।''

अब तक भावना थोड़ी सहज हो गई थी। पास में बैठी थी उसकी छोटी सी बिटिया। मैंने उससे पूछा, ''बहुत सुंदर नाम है आपका 'भूमिका'। किसने नाम रखा था आपका?''

भूमिका ने बाल सुलभ भोलेपन से कहा, ''मेरे पापा ने। पर वो मुझे कभी गुड़िया और कभी चिड़िया ही बुलाते थे।''

हँसते हुए भावना बोली, ''बहुत सोच-विचार के बाद ही यह नाम चुना था मोहना ने। मेरे नाम का 'भ' और अपने नाम का 'म' जोड़ कर ही वो अपनी पहली सन्तान का नाम रखना चाहते थे।''

मैंने भी उत्सुकता वश पूछ लिया, ''और अगर लड़का होता तो?''

बिना समय गँवाए उत्तर था, ''भौम या भीम।''

अब हम दोनों ही सहज होकर हँस रहे थे। स्वयं एक सैनिक पत्नी होने के नाते मैं वियोग की वेदना भोग चुकी थी। उस लम्बी और अनिश्चित अवधि में पत्र ही हमारा सहारा होते थे। अपने बीते कल को याद करते हुए मैंने भावना से पूछा, ''जब से देश की उत्तरी सीमाओं को आतंकवाद ने घेर रखा है, हमारी पलटन के सैनिक अधिकतर सीमाओं पर ही तैनात रहते हैं। ऐसे में बहुत कम समय के लिए ही तुम उनके साथ रह पाती होगी। केवल लम्बे-लम्बे पत्र ही तुम्हारा सम्पर्क सूत्र होंगे?''

उसने बड़ी हैरानी से मेरी ओर देखा कि मैं कैसा सवाल कर रही हूँ, और फिर कहने लगी, ''मैम, पत्र कहाँ, आज कल तो व्हाट्सऐप मैसेंजर पर ही सारा पत्र व्यवहार होता है। कोई भी दिन खाली नहीं था जब 'वे' फेसटाइम पर या व्हाट्सऐप पर बात नहीं करते थे।''

मैं भी कितनी नादान थी। इस बात का ध्यान ही नहीं रहा कि मैं अपनी अगली पीढ़ी से बात कर रही थी। मैंने कुछ झिझकते हुए कहा, 'ओह! मैं तो भूल ही गई थी कि अब डाक से पत्र तो कोई भेजता ही नहीं है।''

इससे पहले कि मैं कुछ और पूछती वो बोली, ''उनके फ़ोन की एक अलग से रिंगटोन मैंने सहेज रखी थी। आधी रात को भी फ़ोन आता तो मैं उठा लेती थी।''

थोड़ी देर के लिए भावना चुप रही और फिर अपने पर्स से एक मोबाइल निकाला।

मोहना के फ़ोन की रिंगटोन लगाई और बहुत अस्फुट स्वर में बोली, ''अब मैं खुद ही फ़ोन करती हूँ और खुद ही सुनती हूँ।''

मैं थोड़ा काँप गई थी। इतनी बहादुर लड़की और भीतर से इतनी भावुक, इतनी कोमल। कैसे होंगे वो अंतहीन प्रतीक्षा के पल जब भावना केवल मोहन के फोन की घंटी ही सुनना चाहती होगी और फिर अपने को ही सुना कर मौन सांत्वना देती होगी!!

कुछ घंटे पहले यूनिट के वेलफेयर सेंटर के समारोह में भावना को सम्मानित करते हुए सूबेदार साहब की पत्नी ने कहा था, ''भावना बहुत बहादुर है। वह अपनी बच्ची को पढ़ा भी रही है और साइकॉलोजी में एम ए भी कर रही है। साथ ही अपना घर भी बनवा रही है। ऐसी धैर्यवान और कर्मठ वीर नारी हम सब के लिए एक उदाहरण है।''

भावना ने मुझे यह भी बताया था कि मोहन उसे आगे पढ़ने के लिए बहुत उत्साहित करते रहते थे। स्वयं उन्होंने 12वीं कक्षा तक पढ़ाई की थी, लेकिन उन्हें बहुत गर्व था कि भावना ग्रेजुएट थी।

मैं अब तक मोहन और भावना के छोटे से प्यार भरे जीवन के विषय में बहुत कुछ जान गई थी, किन्तु अनुभव यही कहता था कि कोई तो पल होगा जब भावना को मोहन की जीवन रक्षा के विषय में डर लगता होगा या आशंका होती होगी। सुदूर पहाड़ों में रहने वाली लड़की को कितना पता था कि जिस पलटन में मोहन सेवारत था उस पलटन को सदैव शत्रु के साथ आमने-सामने युद्ध करना पड़ता है। स्पेशल फोर्सेस में होने के कारण उनका हर अभियान, हर युद्ध ख़तरों से भरा होता है।

मैंने यही प्रश्न उससे पूछा, ''वे कभी आपसे अपने इस चुनौती पूर्ण व्यवसाय की बात करते थे। कभी बताते थे कि अभियान पर जाते हुए कितने खतरों का सामना करते हैं?''

उसने बिना संकोच के कहा, ''वे हमें अपने काम के विषय में जितना आवश्यक था, उतना ही बताते थे। पता नहीं क्यूँ पर वो मुझे भविष्य के लिए सदैव तैयार करते रहते थे। अगर कभी मैं डरती थी तो कहते थे - मैं कमांडो हूँ, पूरे दस को लेकर जाऊँगा। अब सोचती हूँ कि क्या सभी सैनिक अपने परिवार को यूँ ही सचेत करते रहते हैं या इन्हें मेरी बहुत चिंता थी। पता नहीं, वही जानें।''

मोहन के सैनिक होने का गर्व जितना मोहन को था उतना ही भावना को भी। बताने लगी, ''मोहन कहते थे, बचपन से ही उन्हें कमांडो बनने का शौक था। उनके पिता भी भूतपूर्व सैनिक थे। इसीलिए सैनिक धर्म तो उन्हें जन्म घुट्टी में ही पिला दिया गया था। किन्तु कमांडो ही बनना है, यह जुनून तो विद्यार्थी जीवन में ही उनके मन-मस्तिष्क में छा गया था। सेना में भर्ती होने से पहले निर्भीक कमांडो बनने के लिए उन्होंने पूरी तैयारी कर ली थी।''

अचानक बात करते-करते उसने मुझसे पूछा, ''मेम साब जी, क्या आप मोहना को जानती थीं, कभी उससे मिली थी?''

मैंने बड़े स्नेह से उससे कहा, ''कभी नहीं मिली। पर एक बात कहूँ, पति के सेवानिवृत्त होने के बाद भी हमें अपनी पलटन से उतना ही प्यार, लगाव रहता है जितना नौकरी के समय था। हम हर पल उनसे सम्पर्क बनाए रखते हैं और जब भी समय मिलता है पलटन के सदस्यों से मिलने भी आते हैं। फिर दूरी कैसी? इस नाते मैं मोहन को जानती थी। जिस दिन मोहन ने वीरगति प्राप्त की थी उस दिन मैंने विभिन्न समाचार पत्रों में उसकी तस्वीर देखी थी। एक तस्वीर में तुम और भूमिका भी उसके साथ थी। कितने खुश लग रहे थे आप तीनों। उसी दिन मैंने यह संकल्प लिया था कि तुमसे अवश्य मिलूँगी, कभी।''

अब मैं थोड़ी भावुक थी। मेरे दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर भावना मुझसे बोली, ''आप मेरी से बड़ी हैं। मेरी बेटी को आशीर्वाद दीजिए कि यह अपने पापा का नाम ऊँचा करे। मैं इसे डॉक्टर बनाना चाहती हूँ, सेना में भेजना चाहती हूँ। बस यही मेरा एकमात्र लक्ष्य है।''

मैंने उसके स्वर में जो संकल्प का घोष सुना उससे मुझे लगा कि सीमाओं पर शत्रु का संहार करने वाले शूरवीर अपनी वीरांगनाओं के इसी धैर्य और आस्था का संबल पाकर निश्चिन्त हो कर रक्षा कर्म में जुट पाते होंगे।

अपनी बेटी की ओर देखती हुई भावना बोली, ''इसके जन्म पर मुझे परिवार से काफी कुछ सुनना पड़ा था क्योंकि घर के बड़ों को पुत्र की चाह थी। पर अब मैं इससे ही अपना वंश चलाऊँगी, इसके नाम के साथ मोहन का नाम सदैव जुड़ा रहेगा।''

भावना के इस रूप को देख कर मुझे बहुत खुशी हो रही थी। किन्तु एक प्रश्न जो मेरे मन में अभी तक बैठा था, पर इतनी हँसती-खेलती नवयुवती को मैं फिर से उस दारुण पल की याद नहीं दिलाना चाहती थी, फिर भी पूछ लिया, ''भावना आप को सूचना कैसे मिली?

धरती पर आँखें गड़ाए दूर कहीं कुछ खोजती सी वो बोली, ''मुझे पता नहीं था कि वो किसी मिशन पर गए हैं। 11 अगस्त को ही तो गुड़िया का जन्मदिन मना कर 15 अगस्त को गए थे। कुछ दिन फोन पर भी बात होती रहती थी। पिछले तीन दिनों से नहीं हुई थी। फिर एक दिन इनके दोस्त बार-बार फोन करके पूछ रहे थे कि भाभी आप कैसी हो? मुझे नहीं पता था कि वो मुझे किसी अशुभ सूचना के लिए तैयार कर रहे थे। फिर शाम को 'एस एम' साहब का फोन आया था। कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या कह रहे थे। बस सुन्न सी मैं यही समझ सकी कि ...

अब वो चुप थी। पहली बार मैंने उसके शरीर में कंपन देखी थी। उसकी बच्ची चुपचाप अपनी माँ का हाथ लेकर उसे सहला रही थी। कितने असमय ही बड़े हो जाते हैं शहीदों के बच्चे! कैसे समझ लेते हैं अपना उत्तरदायित्व! मैंने उसके मौन को नहीं तोड़ा। उसकी आर्द्र आँखों की पीड़ा मेरी आँखों में भी प्रतिबिम्बित हो रही थी।

उसने गले में पतली सी माला पहन रखी थी जो शायद शादी के समय मोहन ने उसे पहनाई होगी। उसे बड़े प्रेम से छू कर बोली, ''यह है न उनका मेरे साथ होने का चिह्न। और फिर मैंने उनकी लैपटॉप, वर्दी, मोटर साइकल, फोन सभी चीज़ें सम्भाल कर रखी हैं।

मैंने वातावरण को थोड़ा सहज करते हुए पूछा, ''और उनकी शायरी वाली डायरी? उसे तो तुम रोज़ पढ़ती होगी?''

अब वो थोड़ा शर्मा गई थी। भावना ने बताया, ''हाँ पढ़ती हूँ; कई बार, बार-बार। और फिर उनके मित्र भी मुझे उनका लिखा भेजते रहते हैं जो उन्होंने पलटन में रहते हुए किसी नोटबुक में लिख छोड़ा होगा।''

फिर स्वयं ही कहने लगी, ''मैंने उनकी समाधि बनवाई है, घर के सामने अपनी ज़मीन पर। पहाड़ों में वीरों की समाधि बनवाने का भी प्रावधान है। वहीं पर एक छोटा सा मंदिर बनेगा। गाँव में उनके नाम की सड़क है, स्कूल है। स्टेडियम को भी उनका ही नाम दिया गया है। बहुत से लोग आते रहते हैं उस समाधि पर। कई संस्थाएँ भी मुझे बुलाती रहती हैं। सब से अधिक मैं जो काम कर रही हूँ वो यह है कि मैंने अन्य वीर नारियों से सम्पर्क बना लिया है। उनसे बातचीत करती रहती हूँ।

''और पलटन के साथ क्या सम्पर्क सूत्र है?'' मेरे यह पूछने पर कहने लगी, ''पलटन ही तो मेरा घर है। इन्होंने ही तो मेरा घर बनवाने में मेरी सहायता की। फोन भी आते रहते हैं। आप इतनी दूर से मिलने आई हो, आप भी मेरी अपनी हो। मैं अकेली कहाँ हूँ?''

बातों का सिलसिला तो कभी समाप्त नहीं हो सकता था किन्तु अभी और भी कार्यक्रम थे। मेरे मन में मोहन के उस महा अभियान के विषय में कई प्रश्न थे। इसीलिए हम दोनों फिर मिलने का वादा कर के विदा हुए। उसके जाने के बाद मैंने एक अजीब सा एकाकीपन महसूस किया। भावना के साथ मेरा एक अटूट संबंध जो जुड़ गया था।

दो जुलाई के दिन पलटन में कोई विशेष कार्यक्रम नहीं था। बस वो विदा लेने का दिन था। मैंने भी भावना और भूमिका से मिलने के लिए उन्हें अपने पास बुलाया था। हम तीनों सुबह-सुबह उस गौरवशाली वीरस्थली पर गए जहाँ यूनिट के अन्य तीन अशोक चक्र विजेता शहीदों के साथ मोहन की कांस्य मूर्ति स्थापित थी। उन पर चढ़ाई गई श्रद्धा सुमन से पिरोई मालाएँ अभी तक वातावरण को सुगन्धित कर रहीं थी। मैंने चुपचाप नतमस्तक हो कर उन वीरों को नमन किया। मेरे पास खड़ी भावना और भूमिका मोहन की मूर्ति को अपलक निहार रहीं थी। शायद उससे कुछ कह रही हों, अपने मन की बात। उस पल मैं सोच रही थी कि एक युवा पत्नी के मन में अपने शूरवीर पति की मूर्ति को देख कर क्या भाव उठ रहे होंगे? वो कौन से मधुर पलों को याद कर रही होगी? नन्ही सी बिटिया क्या पूछ रही होगी अपने पिता से? भावना तो शायद अपने अलौकिक प्रेम का कोई संदेश दे रही होगी किन्तु भूमिका? कौन जाने उसके भोले-भाले मन में कितने प्रश्न उठ रहे होंगे। वो तो आतंकवाद की घृणित परिभाषा भी नहीं जानती होगी। बड़ी होकर ही शायद समझ पाएगी अपने बहादुर पिता के महाबलिदान का संकल्प और लक्ष्य।

मैंने भावना से कहा, ''देखो तो सामने ही खड़ा है, तुम्हें कैसा लग रहा है?''

भावना ने भी कुछ सहज भाव से उत्तर दिया, ''बिलकुल वैसे ही, जैसे वो 'मेरे' थे। वो तो सदा ही मेरे मन-मस्तिष्क में ऐसे ही रहेंगे, जन्म-जन्म तक।''

मैं समझ गई थी कि भावना ने आठ जन्मों की बात क्यूँ कही थी। ऐसे परमवीर की पत्नी होने का मान उसे मिला था और वो उस गौरव के साथ, अपनी बच्ची का पालन पोषण करते हुए जीना चाहती थी। हमने एक दूसरे के साथ फोन पर सम्पर्क रखने का वचन लिया और विदा ली।

मेरी दृष्टि अभी भी उस वीर स्थली पर टिकी थी यहाँ पर अपने सशक्त हाथों में शस्त्र थामे चार योद्धा भारत माँ की रक्षा के लिए समस्त राष्ट्र का उद्बोधन कर रहे थे। मैं लौट आई थी उस पावन स्थली से इस विश्वास के साथ कि केवल उत्तराखंड के लालकुइयाँ गाँव में ही नहीं, देश के कोने-कोने में शहीदों के ऐसे स्मारक बनें ताकि हमारा देश, आने वाली पीढ़ी शहीदों के महाबलिदान को सदियों तक न भूले।

***

शोध आलेख

# हिन्दी कहानी और लिव-इन संबंध

## ( प्रवासी महिला कहानीकारों का संदर्भ )

डॉ. मधु संधु

कभी कहा जाता था कि शादियाँ स्वर्ग में तय होती हैं और पृथ्वी पर निभाई जाती है, जबकि आज माना जाता है कि तलाकयाफ़्ता होने से लिव-इन में रहना कहीं बेहतर है। 'लिव-इन संबंध' आज का ज्वलंत विषय है। आधुनिकता और महानगर, कंपनीकरण और उन्मुक्त वातावरण, पाश्चात्य जीवन शैली और प्रवास, बदलते मूल्य और उत्तरदायित्वहीनता, उच्चाकांक्षाएँ और बंधन-विद्रोह ने इसे जन्म दिया है। लिव-इन यानी बिना परिणय के प्रणय, आपसी सहमति से युवक- युवती का पति- पत्नी की तरह रहना। भारतीय मूल्यवत्ता या वैश्विक मूल्यवत्ता के इतिहास में झाँकने पर यह शब्द बहुत छोटा, छिछोरा, असामाजिक ठहरता है। परिवार जैसी सामाजिक संस्था पर प्रश्न चिह्न लगाता है। बच्चों की सुरक्षा और संरक्षण के रास्ते आढ़े आता है। लिव- इन क्यों ? मात्र यौनाकांक्षाओं के लिए, शादी से पहले एक- दूसरे को परखने- जाँचने के लिए, टाइम पास के लिए ? लिव-इन का मैत्री भाव, उन्मुक्ति भाव, यौन क्षुधा- शमन आज के युगल को काफी उपयोगी और आरामदेह लगता है।

'लिव-इन संबंध' पिछले कुछ दशकों से उभरा अत्याधुनिक लाइफ-स्टाइल से जुड़ा एक विवादास्पद, आयातित और मुख्यत: महानगरीय मुद्दा है, जिसके मूल में बदलते सामाजिक मूल्य, सुरक्षा, अर्थ, सहवास, जीवन-साथी के लिए जाँच-परख, उपयोगिता, आनंद आदि देखे जा सकते हैं। अंग्रेज़ी में इसके लिए cohabitation शब्द भी प्रयुक्त होता है। कोई भी वयस्क लड़का- लड़की यदि लंबे समय तक साथ रहते हैं तो उनके संबंधों को लिव-इन माना जाता है। ज़रूरी है कि दोनों मानसिक तौर पर स्वस्थ हों और अपना भला-बुरा समझते हों और अकेले रहने की स्थिति के लिए पहले से तैयार हों। स्पष्ट हो कि दूसरा उनका उपभोग-उपयोग तो नहीं कर रहा है। बेज़ा फायदा तो नहीं उठाया जा रहा। विक्टोरियन समय में इसे भले ही अपराध या पाप माना जाता रहा हो, लेकिन आज अमेरिका, ब्रिटेन, डेनमार्क, ऑस्ट्रेलिया, नार्वे, स्वीडन, स्कॉटलैंड जैसे देशों में यह आम बात है। सभी देशों में कुछ शर्तों और अंतर के साथ लिव-इन में रह रहे युगलों को विवाहितों जैसे ही अधिकार दिये गए हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार अमेरिका में 23%(2003 में), डेन्मार्क, नार्वे, स्वीडन में 50%, ऑस्ट्रेलिया में 22% लिव- इन युगल पाये गए। यूनाइटेड स्टेट्स के एक राष्ट्रीय सर्वे में पाया गया कि 2002 में 15 से 44 वर्ष की स्त्रियों में से आधी से ज़्यादा लिव-इन में रह चुकी थीं और 65% युगलों ने पाँच वर्ष के भीतर शादी कर ली थी। 2011 में यह संख्या 7.6 मिलियन हो गई। भारत में लिव- इन सम्बन्धों पर कोई अलग से कानून तो नहीं बना, लेकिन अलग-अलग समय पर कोर्ट ने याचिकाओं पर निर्णय सुनाये हैं। भारत में 1927 और फिर 1929 में यानी अंग्रेज़ी राज्य में पहली बार प्रिवी काउंसिल ने लिव- इन संबंधों पर न्यायिक व्यवस्था दी थी। 2010 के एक फैसले में लिव-इन की संतान को जायज़ माना गया। न्यायधीशों ने राधा-कृष्ण की मिथ का उदाहरण भी दिया। बच्चों का पिता की संपत्ति पर हक़ भी माना गया। 2015 के एक निर्णय में लिव-इन की स्त्री को संपत्ति में अधिकार का समर्थन मिला। यानी यहाँ भी लिव-इन संबंधों को वैधानिक मान्यता मिल चुकी है। लेकिन लिव-इन संबंधों में रहने वालों को परिवार एवं समाज की प्रतिक्रिया झेलने के लिए पहले ही तैयार रहना चाहिए। अलग होने के लिए इन्हें तलाक की प्रक्रिया की ज़रूरत नहीं, लेकिन फ़ीमेल पार्टनर भरण -पोषण का दावा भी कर सकती है। उसका शारीरिक या मानसिक शोषण नहीं किया जा सकता। विदेशों में लिव-इन में आने से पहले पार्टनर से एग्रीमेंट भी किया जाता है।

संपर्क:13 प्रीत विहार, आर एस मिल, जीटी रोड, अमृतसर 143104 पंजाब
मोबाइल: 8427004610
ईमेल: madhu_sd19@yahoo.co.in

आज से लगभग एक शताब्दी पहले प्रेमचंद ने लिव-इन संबंधों पर मिस पद्मा कहानी लिखी थी। निर्मल वर्मा दो घर वगैरह में लिव-इन की बात कर चुके हैं। अमृता-इमरोज, चाँद- फिज़ा, विपाशा-जॉन, राजेश खन्ना-अनीता, कृष्णा अभिषेक-कश्मीरा शाह, रश्मि देसाई-नंदीश संधु- जैसे लिव-इन जोड़ों के नाम भी लिए जाते हैं।

प्रवासी कहानी लिव-इन संस्कृति में जन्म ले रही कहानी है। ब्रिटेन से उषा राजे सक्सेना की क्लिक / तान्या दीवान बदली सोच और बदले ज़माने की कहानी है। यहाँ पुरानी और नई पीढ़ी दोनों लिव-इन की समर्थक हैं। इस लाइफ स्टाइल में शादी जैसी बेवकूफी के लिए कोई जगह नहीं। गयनेकोलॉजिस्ट माँ केरियर सजग बेटी चाहती है। बेटी के मादक अस्थाई संबंधों से उसे कोई परेशानी नहीं। वह ऐड्रियन और पीटर के साथ होली डे मना सकती है। ऐशली के साथ लिव-इन मे रह सकती है। देश -विदेश मे यात्राएँ कर सकती है, पर बस इतना ही कहा जाता है कि इन लोगों के साथ सिरियस मत होना। वह लोगों को राय दे सकती है, ले नहीं सकती। पति या बच्चों की मुसीबत उसे नहीं चाहिए। अपनी स्वतन्त्रता उसे बहुत प्रिय है। यानी अत्याधुनिक पीढ़ी की जीवन शैली में लिव-इन उसकी सुविधा और ज़रूरत दोनों है।

लिव-इन ने पूरे विश्व के मूल्यों को झकझोर कर रख दिया है। उषा राजे सक्सेना की ही मि. कोमिटमेंट की नायिका लिव-इन की समर्थक है, लेकिन यह उसका गंतव्य नहीं है। ईरान- इराक युद्ध के कारण पितृविहीन 16 वर्षीय मुनीरा को लंदन में आकर विस्थापित के रूप में रहना पड़ता है और बुहारान चौदह वर्ष का था जब लीबिया में फतवे के कारण उसे पलायन करना पड़ा। मुनीरा इक्कीसवीं शती की स्वतंत्र विचारों की, स्ट्रीट वाइज़ समर्थ और साहसी लड़की है। वह अपने बूते पर कास्ट कटर और चेन स्टोर जैसे प्रतिष्ठित इदारों की मैनेजिंग डायरेक्टर बन कर मोटी रकम कमा रही है। मुनीरा और बुहरान का पिछले पाँच सालों से प्रेम प्रसंग चल रहा है। मित्र समाज में लोग उन्हें कपल की तरह ही जानते हैं। दोनों के इस लगाव के मूल में दुख, सहज विश्वास, स्नेह और अपनापन है। मुनीरा हर दिन को सेलिब्रेट करने का बहाना ढूँढ़ लिया करती है। बुरहान के विवाह से इंकार करने पर उसे अपने जीवन के पाँच वर्ष उस पर इन्वेस्ट करने का दुख होता है और वह नया जीवन साथी ढूँढ़ने के लिए भी तैयार है। प्रतीक्षा वह नहीं कर सकती। बुरहान भी उसे जल्दी से बीयर केन का छल्ला ही पहना देता है।

अनेक कहानियों में लिव-इन के मूल में अर्थतन्त्र और जिजीविषा है। उनकी वाकिंग पार्टनर की रिफ्त अर्से से लिव-इन में रह रही है। ओपेन रिलेशनशिप है। घर के सारे खर्च फिफ्टी फिफ्टी। आना जाना साथ-साथ। फिर भी दोनों आश्वस्त हैं कि जब मन होगा बिना कड़वाहट के अलग-अलग रास्ता बना लेंगे। शादी यहाँ ओल्ड ऐज़ कान्सैप्ट है। किन्तु स्त्री जानती है कि लिव इन में वह सुरक्षा नहीं, जो शादी में है।

क्या वेल्फेयर स्टेट का संरक्षण लिव-इन को बढ़ावा देता है ? वेल्फेयर स्टेट के फ़ायदों से ही/भी जीने का जुगाड़ हो सकता है। अमेरिका से इला प्रसाद की दर्द में काले समुदाय की एंजेला जैसे ही अठारह की होती है, माँ उसे घर से निकाल देती है। वह डॉन के साथ लिव-इन में रहने लगती है। एक ब्यूटी पार्लर में सफाई कर्मचारी की नौकरी करती है और फिर बाल काटना सीख लेती है। लेकिन जीने के लिए इतना काफी नहीं। डॉन के चले जाने पर उसे लंगड़े थॉमस के साथ उसको मिलने वाली सरकारी सहायताओं के कारण लिव-इन में रहना पड़ता है।

ब्रिटेन से अचला शर्मा की कहानी दिल में एक कसबा है लिव- इन और परिवार की ध्वस्त होती अवधारणा लिए है। कहानी की नेहा के पिता शोमेन बंगाली ब्राह्मण हैं और माँ प्रभा मेरठ के बनिया परिवार की है, जबकि नेहा ब्रिटिश इंडियन है। उसका जन्म ब्रिटेन का है। ऑक्सफोर्ड से पढ़ाई पूरी करने के बाद एक बड़े बैंक मे काम कर रही है। जब पढ़ती थी तो माँ को चिंता थी कि कहीं बॉय फ्रेंड न बना ले और आज चिंता है कि वह मार्टिन के साथ लिव-इन में क्यों रह रही है। गर्भ ठहर जानें पर भी वे लोग शादी क्यों नहीं करते। नेहा को लगता है कि माँ की स्माल टाउन मानसिकता के कारण कोई भी लड़का उससे शादी नहीं करेगा।

अमेरिका से सुषम बेदी की चिड़िया और चील की चिड़िया अपना सम्पन्न परिवार छोड़ एक छोटी सी नौकरी करके अपने एक सहपाठी के साथ लिव-इन मे रहने लगती है। माँ का ऑपरेशन होने पर उसकी देख-भाल के लिए समय नहीं निकालती। भारत से मौसी को बुलवाया जाता है। चिड़िया घर में रहे या लिव-इन में, एक ही बात है। उम्र तीस हो जाती है, न उसे भारत में कोई लड़का पसंद आता है, न अमेरिका में। चिड़िया लॉन्ग जंप सीख चुकी है। डॉ. माँ के जीवनानुभव उसके लिए बेकार हैं। माँ उसके लिए प्रजातन्त्र की बातों से फुसलाने वाली तानाशाह है। अमेरिकी आकाश में उड़ानें भर-भर कर चिड़िया लौट आती है।

सुषम की सड़क की लय में प्रवासी भारतीय युवा वर्ग है, जिसे भारतीय और विदेशी संस्कृति के बीच से जीवन की लय पकड़नी है। एक लय होती है सड़क की और एक होती है जीवन की। नेहा ने ड्राइविंग लाइसेंस लेना है- गाड़ी के लिए भी और जीवन के लिए भी। पापा समझाते हैं कि मैनहेटन वाले भीड़भाड़ वाले इलाके में गाड़ी धीमी चलानी चाहिए, जबकि हाइवे पर स्पीड तेज़। वहाँ धीमे चलाने से यातायात में गतिरोध उत्पन्न होता है। पीली बत्ती पर गाड़ी रोकनी होती है और यदि तेज़ गति से आ रहे हो और अचानक पीली बत्ती आ जाए तो स्पीड बढ़ा कर निकल जाना चाहिए। मम्मी सदैव जीवन की लय समझाती है, जिसे न पहचानने के कारण ममेरी बहन का तलाक हुआ, अंशुल अनेक लड़कों के साथ मादक अस्थाई संबंध रखने के बाद सन्यासिन हो गई। नेहा अपने क्लासफ़ेलो पीटर के साथ सती पर फ़िल्म बनाने जा रही है। पीटर से वह लगाव भी महसूस करती है, किन्तु पापा की उसे अकेले न मिलने की हिदायतें तथा पीटर के देह संबंधी अमेरिकन संस्कार उसके लिए लाल बत्ती बन जाते हैं। यानी पापा लिव-इन जैसी स्थिति के उत्पन्न होने से पहले ही लाल बत्ती सी चेतावनी दे देते हैं।

उनकी रणभूमि की तलाकयाफ़ता,

ऑफिसर अचला को ऐरिक के साथ लिव इन में रहना बेहतर लगता है। तीन चार तलाक़ों के बाद ऐरिक के अंदर भी विवाह संस्था के प्रति कोई भ्रम नहीं बचा।

अमेरिका से सुधा ओम ढींगरा की टॉरनेडो में दो विधवाओं के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत है। बेटियों के लिए माँ के प्रेमी/ यौन सहचर इतने खतरनाक हो सकते हैं कि उन्हें बेघर कर देते हैं। उनका बचपन किशोरावस्था सब ध्वस्त करके रख देते हैं। क्रिस्टी और सोनम किंडर गार्डन से सहेलियाँ हैं। दोनों के पिता की मृत्यु हो चुकी है। सोनम की माँ वंदना के पास भारतीय संस्कार हैं, योग दर्शन है, आर्थिक सुरक्षा है। जबकि क्रिस्टी की माँ जेनेफर के पास मूल्यहीनता, रोज़ बदलते पुरुष मित्र और आर्थिक तंगी हैं। माँ जानती है कि उसके लिव-इन जैसे पुरुष पार्टनर की निगाह बेटी पर है, पर उसे छोड़ती नहीं, कुछ देर उसे अपने घर से दूर ज़रूर रखती है। जैसे ही जेनेफर केलब से शादी कर उसे घर लाती है, क्रिस्टी सदा के लिए चली जाती है।

दिव्या माथुर की तमन्ना कहानी में पश्चिम के गर्ल फ्रेंड और पार्टनर वाले संबंध को लेकर चिंता व्यक्त की गई है। भारत में शादी से पहले गर्भ ठहरना शर्म का विषय है, जो आत्महत्या का भी कारण बनता है जबकि पश्चिम के युवा ढोल सा पेट लिए भी शादी करते हैं। तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते दिव्या माथुर कहती हैं कि वहाँ भी दाम्पत्य की मूल्यवत्ता को सम्मान से देखा जाता है।

लिव-इन ने बहुत कुछ बदल दिया है। सामाजिक आयोजन शादी लिव-इन पार्टनर का नितांत वैयक्तिक मामला हो गई है। अमेरिका से सुदर्शन प्रियदर्शिनी की देशांतर में बेटा जॉन और आयरिश लड़की जेनी की शादी का कार्ड आया है। वर्षों से दोनों लिव-इन में थे। शादी भारतीय और क्रिश्चियन दोनों विधियों से होगी, लेकिन कार्ड में लड़के के माता- पिता का कहीं नाम तक नहीं। मानों उन्हें दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंका जाता है। कार्ड लड़की की उस माँ की तरफ से है, जिसकी दूसरी शादी के कारण सरनेम बेटी से भिन्न है।

उषा राजे सक्सेना की मेरे अपने/ रिश्ते कहानी की युवा नायिका ने सात वर्ष पहले माँ की मृत्यु और पिता की अति व्यस्त, आत्मकेंद्रित, स्वार्थी, रूमानी एवं अतिरिक्त अभिजात जीवन शैली के कारण सब छोड़ दिया था। अब वह मिर्चा के साथ पार्टनरशिप मे काम करती है। उसके साथ लिव-इन मे रहती है। उससे शादी करना चाहती है।

ब्रिटेन से नीरा त्यागी की कैन आई एश्योर यू आई शैल नेवर नीड देम में लिव-इन ने पुरुष को निरंकुशता और स्त्री को उत्तरदायित्व दिये हैं। छत्तीस वर्षीय रीता और डेविड में प्यार पनपता है। दोनों पाँच वर्ष साथ रहते हैं। हर खर्च शेयर करते हैं। रीता के गर्भवती होने की सूचना पा डेविड उसे फूलों का गुलदस्ता भेंट करता है और अपनी कार और सामान लेकर चलता बनाता है। रीता बच्चे की परवरिश, घर के खर्चों मे उलझी रहती है। डेविड वाले ऑफिस मे नौकरी को मन नहीं मानता। पर बेटे थॉमस का चेहरा उसे जीने की प्रेरणा देता है और वह पहले से अधिक सम्पूर्ण और शक्तिशाली स्त्री बन जाती है। लिव-इन स्त्री के लिए घाटे का सौदा है। यह उसे न सुरक्षा देता है, न सम्मान।

डेन्मार्क से अर्चना पेन्यूली की अगर वो उसे माफ कर दे, विवाहित पुरुष के लिव-इन संबंधों को पत्नी और किशोरी बेटी द्वारा भावात्मक और बौद्धिक स्तर पर स्वीकारने की कहानी है। कहानी भारत की पृष्टभूमि लिए है। यह बोड़ो आतंकवादियों से लड़ रहे और उसका शिकार हुये बहादुर कमांडर रवि की कहानी है। यह उस बेटी ईशा की कहानी है, जिसे अपने पन्द्रवें जन्मदिन से दो दिन पहले पता चलता है कि उसके वात्सल्यमय पिता के पास एक दूसरी औरत और बच्चा भी है। वह पोस्टिंग स्थल पर प्रेमिका रेशमा और बच्चे के साथ रहता था। ऐसी लिव-इन पार्टनर, जो प्रेमी के हत्यारों को मार कर ही दम लेती है। बुद्धिजीवी कॉलेज प्रवक्ता पत्नी रेखा के दाम्पत्य पर अतिशय विश्वास की भले ही किरचें हो गई हों, लेकिन पर- स्त्रीगामी पति को भी माफ करती यह स्त्री लिव-इन सौतन का बच्चा पालने के लिए संकल्पबद्ध है।

लिव-इन विवाह संस्था के अस्तित्व को चुनौती है। लंबे समय तक ऐसे रिश्ते नहीं ठहरते। सदियों के चिन्तन-मनन ने वैश्विक सामाजिक व्यवस्था को जिस ऊँचाई तक पहुँचाया, उसके समक्ष अनैतिक हैं, अपराध और पाप है। विवाह एक पवित्र धार्मिक संस्कार है, सात फेरों या सात संकल्पों से उदभूत रिश्ता है, गृहस्थ का प्रवेश द्वार है, पितृ ऋण से मुक्त करने का साधन है, सामाजिक सुरक्षा का आयोजन है, जबकि लिव-इन स्वछ्न्द यौनाचार है। वाकिंग पार्टनर, क्लिक, दिल में एक कस्बा है, रणभूमि, चिड़िया और चील में अत्याधुनिक नायिकायों ने इसका वरण किया है। मि. कामिटमेंट में सारे लगावों के साथ-साथ यह विवाह के लिए इनवेस्टमेंट है। दर्द में जिजीविषा की ज़रूरत है। टॉरनेडो, सड़क की लय, देशांतर, तमन्ना में यह प्रश्न चिह्नों से घिरा विषय है।

***

संदर्भ: www.advocatekhoj.com, https//en.m.wikipedia.org, उषा राजे सक्सेना, क्लिक / तान्या दीवान, वाकिंग पार्टनर, राधाकृष्ण, दिल्ली, 2004, उषा राजे सक्सेना, मि. कमिटमेंट/ बीयर केन का छल्ला, वाकिंग पार्टनर, राधाकृष्ण, दिल्ली, 2004, उषा राजे सक्सेना, वाकिंग पार्टनर, राधाकृष्ण, दिल्ली, 2004, इला प्रसाद, दर्द, तुम इतना क्यों रोई रूपाली, भावना, दिल्ली, 110091, अचला शर्मा, दिल में एक कसबा है,: अभिव्यक्ति, 26 मार्च 2012, सुषम बेदी, चिड़िया और चील, पराग, दिल्ली, 1995, सुषम बेदी, सड़क की लय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, दिल्ली-2, 2007, सुषम बेदी, रणभूमि, सड़क की लय, नेशनल, दिल्ली, 2007, सुधा ओम ढींगरा, टॉरनेडो, पाखी, नवम्बर, 2009, दिव्या माथुर, तमन्ना, पंगा तथा अन्य कहानियाँ, मेघा बुक्स, दिल्ली, 2009, सुदर्शन प्रियदर्शिनी, देशांतर, कहानी कोश, http://gadyakosh.org/Gk/देशान्तर/-सुदर्शन-प्रियदर्शिनी, उषा राजे सक्सेना, मेरे अपने/ रिश्ते, वह रात और अन्य कहानियाँ,प्रकाशक: सामयिक, नई दिल्ली, 2007, नीरा त्यागी की कैन आई ऐशयोर यू आई शैल नेवर नीड देम, गर्भनाल, मार्च 2011, इंटरनेट -http://www.garbhanal.com/uploaded/magazine/2011-Mar-SOURCE.pdf, अर्चना पेन्यूली, अगर वो उसे माफ कर दे, अभिव्यक्ति, 9 मार्च 2007।

## कविताएँ

### रिम्पी खिल्लन सिंह की कविताएँ

संपर्क:प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय
मोबाइल:9899155563
ईमेल: rimpi.khillan@gmail.com

### शोर

शोर मेरा अपना है जो बजता है भीतर
बाहर शीशे के देखता हूँ
तो लगता है गूँगे लोग
फैल गए हैं
चारों तरफ हिलाते हैं हाथ
कभी ऊपर,कभी नीचे
कभी दाएँ,कभी बाएँ
मुझे कुछ सुनाई नहीं देता
हो सकता है वो गूँगे न हों
मैं ही हो चुका हूँ बहरा
कानों के परदे फट गए हैं
अच्छा है अब कानों पर जू नहीं रेंगती
और मैं ले सकता हूँ कुछ आँखों से काम।
***

### सन्नाटा

इतना बुरा नहीं है खाली होना
ऊपर तक भरी हुई लबालब इस दुनिया में
अक्सर जब कम पड़ने लगते हैं शब्द
देने लगते हैं बस न्यूनतम अर्थ
तब उग सकता है आपके भीतर एक छूँछापन
एक खोखल की तरह
जहाँ आकर गिरता हो शब्द और
धड़ाम से टूट जाता हो.....
आप समेटते हुए उसके टुकड़े दरक सकते हैं
इस हद तक कि चूरा-चूरा हो जाएँ
इतना बुरा भी नहीं है दरकना
जब जुड़कर कुछ बनाया न जा सके
छूँछेपन के बीच होता है एक शून्य
शून्य जो कुछ नहीं होता
बस एक सन्नाटा होता है
अपनी सी ही आत्मीयता में लिपटा सन्नाटा
जिसमें फिर सुनी जा सकती है
सुई तक के गिरने की आवाज़
जो भेदती है यहाँ से वहाँ तक
आर-पार हो जाती है
भीतर एक नन्हा सा सुराख़
करते हुए
जहाँ से छनकर आता है
इक नियंत्रित प्रकाश
जो अँधेरे के बीच से गुज़र जाता है
टार्च की रौशनी की तरह
और सिहर उठता है रोया
भीतर तक खिंच आता है
इक टनल
जहाँ से गुज़र सकती है कोई भी रेल
चाहे किसी रफ्तार की भी हो
कोई थरथराहट नहीं होती
बस रौशनी की एक पतली
लकीर होती है
जिसमें सब कुछ कौंधता है एक साथ
अँधेरा भी, टनल भी और गाड़ी भी
तब आप खाली होते हैं थोड़ा-थोड़ा
और उठने लगते हैं ऊपर
हल्के पँख की तरह।
***

### अँधेरा सुनता है आवाज़

अँधेरा रचता है आकाश भीतर
जब कहीं कोई कान नहीं होता
सुनने के लिए आवाज़
कोई झरोखा नहीं बचता दीवार पर
दीवार का ठंडापन देह में उतर जाता है
और देह की सीलन मन के आसपास
काई सी जमा होने लगती है....
तब अँधेरा खुलता है रौशनी जैसा
टिमटिमाता हुआ
तब कोई शब्द जन्म लेता है तारे की तरह
अँधेरे की कोख से
और रचता है नई आकाश गंगा
तब धुलता है मन
काली आभा की रौशनी से
और जन्म होता है गीत का
बीतता है एक प्रसव काल
ढीली पड़ती है समय की पकड़
अँधेरा तानता है आकाश
सचमुच,कोई सुने न सुने
अँधेरा सुनता है आवाज़।
***

### पीठ पर घर

घर पीठ पर उतर आया है
रात होते ही पीठ टूटती सी
महसूस होती है
देह खुद एक घर बन गई हो जैसे
जिसमें
जाने कौन-कौन आ गया है बसने
रोज़ ओढ़ना,बिछाना,
समेटना फालतू का सामान
जो कभी ज़रूरी था.....
फिर बुहार देना सुबह प्यार की तरह
कुछ नहीं ठहरता सब बरता जाता है
देह भी, प्यार भी और भूख भी
रात भर पीठ पर होता है घर
सुबह अक्सर देह भारी होती है
आज फिर मुँह खोलेगा घर
बरतना होगा पेट भर खाना
और परोस देना होगा ज़रूरत का प्यार
रात को ठंडी दीवार पर रखते हुए हाथ
सौंप देनी होगी सारी थकान
सुबह ताज़ा दम उठना होगा
फिर से बरतने के लिए एक घर।
***

### राजेन्द्र नागदेव की कविताएँ

संपर्क: डी के 2 - 166/18, दानिशकुंज, कोलार रोड, भोपाल- 462042
मोबाइल: 8989569036
ईमेल: raj_nagdeve@hotmail.com

### जिनके घर नहीं होते

धीरे-धीरे धुँधलाता है आकाश
धीरे-धीरे बदलते हैं छायाओं में पेड़
धीरे-धीरे सो जाते हैं घोंसलों में परिंदे
धीरे-धीरे लौटती हैं घरों को तब थकी-हारी साँसें

घर सोखता है
परास्त लहूलुहान देह का गीलापन स्पंज सा

कितनी सारी गंध घरों में!
जीवित यादों की, मृत बातों की
जय की,पराजय की
हिलोरों से टकरा किनारे पर पड़ी श्लथ नावों की
नक़्क़ाशीदार फूलदान में
कुम्हलाए उदास फूलों की
किलकारियों, चित्कारों की
ज़रा से हँसने, ज़रा से रोने की
घर, अनगिन गंधों की अजीब कॉकटेल....

जिनके घर नहीं होते
कहाँ जाता होगा उनकी देह का गीलापन?
किस आकाश में जाकर घुलते होंगे अंतर के भीषण चक्रवात?
टूटती-बिखरती देह के टुकड़े समेट
कौन बनाता होगा पूरी देह फिर से?

प्रश्नों के दरख़्तों का
घना उत्तरहीन जंगल है
बिना घर का आदमी।
***

## बिका हुआ घर

एक चील की छाया अभी-अभी ज़मीन पर चलती हुई
छत पर चढ़ी
फिर ज़मीन पर दूसरी तरफ उतर
पेड़ों के झुरमुट में समा गई

अब वहाँ कोई नहीं रहता
जाने किसने, जाने कब
जाने किनके लिए बनाया होगा मकान
जो अब उम्र के आख़िरी दौर में है
और कभी भी अपनी ज़मीन के साथ खरीद लिया जाएगा....

लगता है चील कोई आत्मा है
मकान इसका घर रहा होगा कभी
कई संबंध, कोई संबंध न रहने पर भी टूटते नहीं
जलते नहीं, पिघलते नहीं,
नहीं रहा मकान
आदमी के अंदर रहता है....
सहज नहीं होता
बचपन, यौवन और बुढ़ापा
किसी घर-आँगन में छोड़ बिना मुड़े निकल जाना
गोबर लिपी ज़मीन की गंध
खपरैलों में बसे घोंसलों में गौरैया के अण्डे
दरकती दीवारों में गुमसुम पड़ी कितनी ही स्मृतियाँ
एक भरा पूरा संसार कल दब कर ज़मीन पर बिछ जाएगा
आकाश तक फैली इमारत की नींव बन

बरसों बाद कोई आएगा कुछ ढूँढ़ता हुआ
पूछेगा यहीं तो था मेरा घर
दिखाई क्यों नहीं देता?
***

## बीच संवाद में

पुराना था मित्र
मगर इतना शिष्टाचार भी नहीं निभा सका
कि, कह देता जा रहा हूँ
बीच संवाद में ही उठ कर चला गया
जैसे जाने से बस उसी का संबंध हो

बहुत से धागे टूट जाते हैं
किसी के चले जाने से अचानक
वह भूल गया

चुना भी उसने वह रास्ता
जिस पर किसी के लिए
यू-टर्न नहीं होता

पाताल में गया
किसी ग्रह पर चला गया
अंतरिक्ष में भटक गया
कहाँ गया?
घुल गया धुंध में लुप्त होते रास्ते के साथ
आख़िर गया कहाँ?

उसे बताना है
कप में छूट गई काफी ठंडी हो गई है
उसकी अधूरी ग़ज़लों के पन्ने
बेचैनी से फड़फड़ा रहे हैं,
कहाँ होगा इस समय?
किस पते पर लिखूँ खत?
नहीं, कुछ नहीं लिखूँगा
हो सकता है इस समय
अपनी बिटिया के कंधे पर स्नेहिल हाथ रख
पूछ रहा हो-
''बेटी! चट्टान से उस दिन जब तू फिसली थी
और नदी में बह गई थी निर्जीव
उसके बाद सत्ताईस लंबे वर्षतूने अकेले
कहाँ, किस तरह बिताए?''
***

## रेखा भाटिया की कविताएँ

संपर्क: 9305 Linden Tree Lane,
Charlotte, NC-28277
मोबाइल:7049754898
ईमेल: rekhabhatia@hotmail.com

## तुम लौट आए

तुम फिर लौट आए भी तो क्या
पहले अधिकार तय कर लो
मैं रिश्ते फिर जी लूँगी
भूल तो न सकूँगी यादें वो खट्टी
मीठी बोली से मीठी बन पाएँगीं ?
जो फूल तुम भेजते थे
गुनाहों के बाद
उसकी सज़ा मेरे आँसुओं को मिली
फिर फूल न भेजना काँटे हैं चुभते
गुज़रे वक्त को गुज़रा ही रहने दो
कुरेदे ज़ख्म चाशनी नहीं रिसते
मासूम मन बूढ़ा हो चला था
कभी पहले तुम्हारे लौटने से पहले
समय की धार उल्टी बहने से रही
बूढ़ा मन यौवन पार कर चुका
तुम लौटे हो अपनी ख़ुशी के लिए
मेरे दर्द का इलाज कदाचित इतना है
तुम लौट आए भी तो क्या
मौसम बदल चुका है इस बार
खाली लटका घोंसला
उदास नहीं करता.....
***

## ज़िन्दगी ज़िन्दगी लगती है

तुम जो हो मेरी ज़िन्दगी में
तब कोई गम नहीं ज़िन्दगी में
ज़िन्दगी ज़िन्दगी लगती है
अभी आई मौत मुझसे डरती है
जब तुम साथ हो सफर सुहाना-सा है
तुम्हारे बिन बसंत बदनुमा तो है
जब पास बैठते हो थामकर मेरा हाथ
किस्मत की रेखाएँ गहरा जाती हैं
प्रगाढ़ता से छूते हो लब मेरे
प्रकृति के फीके रंग सुर्ख हो जाते हैं
मेरे केश उलझे थे तुम्हारी करवट से
तुम्हारी शरारत से
मुँडेर बैठे पंछी फड़फड़ाए
बंद से हो जाते हैं नयन
तुम्हारे सामीप्य में
खो जाती हूँ बिन देखे सुख-सागर में
उस दिन तुमने पूछा था तन्हाइयों में
चाँदनी की गवाहियों में
मेरे कल का सपना
सोचती हूँ बादलों संग सन्देश भिजवा दूँ
कल परसों बरसों इंतज़ार न करना
कल का सपना आज ही साकार करना
कहकहों में तुम्हारे,मेरी जान बक्श देना
तुम हो मेरी ज़िन्दगी में जब साथ
ख़ामोशी से बैठ मौत का इंतज़ार न करना।
***

## अनिश्चित ख़ुशी

ख़ुशी यहाँ अनिश्तिच
कुछ भी नहीं सिवाय तुम्हारे
मैंने जाना
सभी कोनों में दुनिया के ढूँढ़ना तुम्हें
दु:ख हँसता खेलता बाट जोहता था तुम्हारी
क्या तुम डर गई थी दु:ख के खेल से

दुनिया समझी तुम उलझी हुई हो
कहीं भी छलक पड़ती हो बिना वजह
कभी खो जाती हो रिश्तों, दोस्ती में
निराश करती सालों की डोर तोड़ती

आधुनिक फूहड़ताएँ अंतहीन सीमाएँ
रातें लंबी हो सुबहें सिकुड़ गई
नई सुबहें, नई खुशियाँ एक प्रश्न
सूरज का द्वार पश्चिम में झुकता
किरणें चाँद तारे उनमें बसी हो
पंछी पेड़ पानी वर्षा संग खड़ी हो
दूषित वातावरण में झलक धुँधली तुम्हारी
मैं बंद खिड़की दरवाज़ों में सुरक्षित हूँ

कविता किताब ज्ञान खँगाला
भूगोल घूम इतिहास छाना
हाहाकार मची है होड़ लगी है
ढूँढ़ने की यात्रा चलती रहती

कहीं तो थम जाओ यहीं कहीं
किलकारी मारता बालक बैचेन किए
सुना है मैंने तुम बच्चों की सहेली
वयस्क हाथ थामे बच्चे छुड़ाते

बालपन छोड़ो हठ्ठी न बनो
बच्चे भी उम्र से बड़े हो गए
तुम्हारी उम्र कब बढ़ेगी बताओ
वयस्कों संग भी दोस्ती क्या कर पाओगी

निराशा भरा वयस्क सागर गहरा
सिहर जाता है बचपन उस दबाव में
मासूमियत खो गई कई राहों में
निश्चय कर एक राह मिल जाओ।।
***

## मंजु मिश्रा की कविताएँ

संपर्क: 3966 Churchill Dr.,
Pleasanton CA 94588
मोबाइल: 510-376-8175
ईमेल: manjumishra@gmail.com

## गिद्ध ही गिद्ध

चिड़िया
तुम सुन रही हो न
घोंसले की
दहलीज़ के बाहर
आँधियाँ ही आँधियाँ हैं
हर तरफ
नोचने को पर तुम्हारे
उड़ रहे हैं
गिद्ध ही गिद्ध यहाँ
हर तरफ

पैने करने होंगे
अपने ही नाख़ून तुमको
कोई नहीं आएगा बचाने
मुखौटों के अंदर
बस कायरों की
भीड़ ही भीड़ है यहाँ
हर तरफ।
***

## यादें पीपल सी

मन के
आँगन की
दीवारों परज
न जाने कहाँ-कहाँ
कौन-कौन सी दरार ढूँढ़ कर
उग आती हैं यादें
और धीरे-धीरे
पीपल सी जड़ें जमा लेती हैं
फिर एक दिन
ढह जाती है
आँगन की दीवार
और यादें दफ़न हो जाती हैं
अपने ही बोझ तले।
***

## ज़िंदगी का गणित

बरस महीने दिन
छोटे-छोटे होते
अदृश्य ही हो जाते हैं
और मैं
बैठी रहती हूँ
अभी भी
उनको उँगलियों पे
गिनते हुए
बार-बार
हिसाब लगाती हूँ
मगर
ज़िन्दगी का गणित है कि
सही बैठता ही नहीं।
***

## जड़ें

काश कि
हम लौट सकें
अपनी उन्हीं जड़ों की ओर
जहाँ जीवन शुरू होता था
परम्पराओं के साथ
और फलता फूलता था
रिश्तों  के साथ

मधुर-मधुर, मद्धम- मद्धम
पकता था
अपनेपन की आँच में
मैं-मैं और-और की
भूख से परे
ज़िन्दा रहता था
एक सम्पूर्णता
और संतुष्टि के
अहसास के साथ।
***

## केंचुए

काट दिए पर
सिल दी गईं ज़ुबाने
और आँखों पर पट्टी भी बाँध दी
इस सबके बाद दे दी हाथ में कलम
कि लो अब लिखो निष्पक्ष हो कर
तुम्हारा फैसला जो भी हो
बेझिझक लिखना

गूँगे बहरे लाचार
आपके रहमो करम पर ज़िन्दा  लोग
क्या मजाल कि जाएँ आपके खिलाफ
ऐसी जुर्रत भी करें
हमारी मति मारी गई है क्या
हुजूर माई बाप
आप की दया है तो हम हैं
आप का जलवा सदा कायम रहे और
हमारे काँधों पर पाँव रख कर
आप अपना परचम लहराएँ
विश्व विजयी कहलाएँ

हम तो बस
सदियों से यूँ ही
तालियाँ बजाते आए  हैं
आगे भी वही करेंगे
राजा चाहे जो हो
हमें क्या, भूखे प्यासे रोएँगे तड़पेंगे
मगर राजा की जय बोलेंगे
और हक़ नहीं भीख के
टुकड़ों पर पलेंगे

जब जी चाहे
पुचकारो मतलब निकालो
फिर गाली दे कर हकाल दो
हम इंसान कहाँ कुत्ते हैं
दर असल हम कुत्ते भी नहीं
वो भी कभी-कभी भौंक कर काट लेते हैं
हम तो उस से भी गए  गुज़रे
रीढ़ विहीन, शायद
केंचुए हैं.....
***

## सुमन उपाध्याय की कविताएँ

संपर्क: डी-305, सेवेन एलेवेन रेजीडेंसी,
लक्ष्मी पार्क, कनाकिया रोड, मीरा
रोड(ईस्ट),
ठाणे, महाराष्ट्र, पिनकोड- 401107
ईमेल:sumanbala.umesh@gmail.com

## तुम्हारा साथ

तुम थे, तो तुम्हारा होना जैसे
हरी दूब पर ओस की बूँदें,
तुम्हारा होना हिम्मत ही नहीं
कंधे पर बलिष्ठ हाथों की थपकी,
अदृश्य सही,
महसूसती सदैव सामानांतर।

अब, जबकि तुम नहीं हो पास
लेकिन हो मेरे पूरे व्यक्तित्व में
रहोगे हमेशा मेरे अंदाज़-ए-सोच में।

तुम्हारी बेवफाई सिर-माथे,
हथियार बना लेने की ताकत भी तो
तुमसे ही पाई है मैंने।

सुनो, जब भी मिलना
निगाहें न चुराना
पुराने बही-खाते रद्दीवाला ले गया।
***

## याद है तुम्हें

जब पहली बार झाँका था तुमने
मेरे मन की अधखुली खिड़की से अन्दर
कितना अँधेरा था ना !!?!!
फिर तुमने टटोला था मेरा मन
महसूस था मैंने
तुम्हारी हथेली के स्पर्श को अपने बालों में
कितना ही मृदु था वो
पूछा था तुमने, बड़ी ही कोमलता से
'कहीं मैंने अतिक्रमण तो नहीं किया'
मैंने कहा तो कुछ नहीं
तुमने ही मान लिया और अदृश्य हो गए।

और मेरे स्मृतियों में रह गई
तुम्हारी काँपती उँगलियाँ।
सुना है कलाकारों की उँगलियाँ वैसी ही
होती हैं।
***

## यह जीवन है

बाँधो,
तुम बाँध बाँधो,
बुद्धि की तीक्ष्णता पर
मन की खुली चाहतों पर
आँखों में पलते सपनों पर
स्वयं पर स्वयं के अधिकार पर
और
बहने दो सिर्फ कलकल कोमलता।
सौम्य सेवाभाव की सर्वसुलभता।
पर हाँ,आवेगों को मरने न देना।
यह जीवन नहीं प्रवंचना मात्र है।
कान दो !
स्मरण रखना; आवेगों का दबाव बढ़ेगा
और बढ़ेगा
और बढ़ेगा,
टूटेंगे एक-एक कर सारे बाँध
जलजला आएगा

तुम उत्सव मनाना
तुम्हारा व्यक्तित्व
रचेगा अप्रछन्न अस्तित्व
तुम मन्त्र पढ़ना
चाक चलाना और
छेनी-हथौड़ी के संगीत पर नर्तन करना
फिर,
पसीने से लथपथ
एकांत में,
पहाड़ की सबसे ऊँची छोटी पर बाँसुरी बजाना।
यह तो बहकी-बहकी बातें हैं !
क्यों, नहीं बहकना तुम्हें ?
यह तो आत्म-प्रवंचना है।
नहीं, यह जीवन है।
***

## शापित होंगे

कोई मंदिर वहीं बनाएगा
कोई मस्जिद वहीं बचाएगा
कोई गाय बचाएगा
कोई सूअर बचाएगा
कोई सीरिया को सबक सिखाएगा
कोई कोरिया को औकात बताएगा
कोई अमेरिका को आँख दिखाएगा

सामुदायिक चेतना और प्रेम की बातें
नक्कारखाने में गूँजेगी,
नदी, पहाड़ और जंगल की बातें
अनर्गल कही जाएँगी
जीवन के आधार, स्त्री और किसान को
अपने मौलिक अधिकारों के लिए निर्वस्त्र होना पड़ेगा
समझदार भविष्य बनाएगा,
प्रलापक इतिहास से सीखने को चिल्लाएगा
हम अहिल्या बनने को शापित होंगे।
***

## संघर्ष का संगीत

हम लोहा हैं, लोहा।
हम भागा नहीं करते, क्योंकि
हमें थामना है पूरी ईमारत।
क्योंकि हम लोहा हैं,
मुश्किलें संगीत हैं हमारे लिए
हम संगीत का सामना ही नहीं करेंगे
थोड़ा संगीत गाएँगे,
थोड़ा ओढ़ेंगे
थोड़ा सा बिछा लेंगे,
और इस तरह अपने हिस्से का
पूरा संगीत जी जाएँगे।
हम लोहा हैं, लोहा !!
आवरण हमारा आचरण नहीं
अपना खुरदुरापन पसंद है
असुंदर होना ही
हमारी पहचान है।
***

## धर्म जैन की कविताएँ

संपर्क : 1512-17 Anndale Drive,
Toronto M2N2W7, Canada
फ़ोन : + 416 225 2415
ईमेल : harmtoronto@gmail.com


## कल मिलो तो

कल मिलो तो साथ लाना
माटी की वो ही महक
जो तुम्हारी, बस तुम्हारी है
परिजात फूलों की सुगंध
तुम-सी नहीं लगती।

कल मिलो तो बाल वैसे ही भले
कहीं उलझे, कहीं बिखरे
अभिजात्य केशों में
अँगुलियाँ नहीं फँसतीं, नहीं चलतीं।

कल मिलो तो रंग पानी का
तुम्हारी आँख पर हो
नर्म पलकों पर सजावट
अच्छी नहीं लगती।

कल मिलो तो होंठ सूखे
हों अ-रंगे, अ-कृत्रिम
लिपिस्टिकी अनुभूतियाँ
कुदरती नहीं लगती।

कल मिलो तो गोधूलि-सा चेहरा मद्धम
मुस्कुराता, हो बुलाता
बनावटी आभा वहाँ,
अपनी नहीं लगती।

कल मिलो तो शाम में हो
शाम की आवारगी
कॉकटेली थिरकनें
मन की नहीं लगतीं।

कल मिलो तो तुम मिलो
जैसे मिलीं पहले-पहल
अप्सरा बनीं तुम प्रिया
उत्सव नहीं लगतीं।
***

## उस समय से

उस समय से इस समय तक
बस गडरिए ही चले
गर्दन झुका भेड़ें जुड़ती रहीं।

करोड़ों भेड़ें लील गया महाभारत
कलिंग में बहीं खून की नदियाँ
धुँआ हो गया हिरोशिमा
वियतनाम, ईरान से सीरिया तक
आदमी ही कटा, गडरिए चलते रहे
उस समय से इस समय तक।

राजवंशों की भृकुटियाँ झुका दीं प्रजातंत्र ने
तय था भर पेट घास मिलना भेड़ों को
सचेत हो गए गडरिए
बदल लीं टोपियाँ, खेत और पगडंडियाँ
नहीं बदलीं भेड़ें, सिर झुका जुड़तीं रहीं
उस समय से इस समय तक।

नहीं दिखी किसी को बंजर होती धरती
बिवाइयाँ फट पड़ीं उसकी छाती पर
दाने को तरसतीं
दर-दर भटकतीं
अँगूठे लगातीं भेड़ें
नहीं देख पाईं भेड़ें राजमार्ग की सड़क
उस समय से इस समय तक।

कोख में घुटे शिशु, माँ की लाश के साथ
भागते बच्चे, युवतियाँ और मर्द
नहीं लाँघ पाए नक्शों की लकीरें

बस चश्मदीद रहीं भेड़ें
उस समय से इस समय तक।

बहुत बढ़ी दुनिया अखबार में
चाँद, मंगल, ब्रम्हांड और परे
ज़हर होती हवा, फैलाती रही दमा, तपेदिक
ख़ाँसती रही बुढ़िया, तपता रहा बूढ़ा
लाचार, दवा के लिए तरसती भेड़ें
हाँकते रहे गडरिए
उस समय से इस समय तक।
***

## दो साल की वह

फुटपाथ पर चलते हुए
छूना चाहती है पौधों को,
फूलों और काँटों को
चाहती है वह पत्तियों को हवा में उछालना।

काँव-काँव करता कौआ गुज़रता है उसके ऊपर
देखती है अपने आकाश को
उड़ते हुए हवाईजहाज़ को
चाहती है वह पंख फैलाना।

गुनगुनाने लगती है तैरती बतखों के साथ
संग होना चाहती है उनकी
मदमस्त अठखेलियों में
चाहती है वह पानी में बहना।

डॉगी को देख नाचने लगती हैं अँगुलियाँ
सहलाने लगती है उसकी पीठ
देखती है पूँछ का अलमस्त नाचना
चाहती है वह अनवरत थिरकना।

दूब में दौड़ती हुई गिलहरी
चढ़ने लगती है यकायक पेड़ पर
भौंचक्की आँखों से देखते-देखते
चाहती है वह सरपट दौड़ना।

वह दौड़ना चाहती है
थिरकना चाहती है
बहना चाहती है
उड़ना चाहती है
उछलना चाहती है
अपनी दुनिया से रू-बरू होने के लिए।
***

## अमृतलाल मदान की कविताएँ

संपर्क: सारशब्द कुंज, 1150/11, प्रोफ़ेसर कालोनी, कैथल 136027
मोबाइल:09466239164
ईमेल : amritlalmadanw@gmail.com


## दुखिया बेटी की माँ-बापू को लोरी

सो जा सो जा रे बाबुल प्यारे
रैना आधी बीत गई
तुम तो दुनिया से ना थे हारे
वो तो बैरन जीत गई।
मैं जब से हूँ पीहर में आई
घड़ियाँ घर की ज्यों खड़ सी गईं
गठरी दुखों की संग जो लाई
नींदें माँ की भी उड़ सी गईं
सो जा सो जा री प्यारी माए
अँखियों को पोंछ ज़रा
देखें तन पे जो नीले साए
क़िस्मत ने लेख लिखा।
मैं तो लालच के घर थी ब्याही
लूटे सबने जहाँ मेरे सपने
रोने की भी थी घोर मनाही
कोसे सबने जहाँ मेरे अपने
मैं थी बकरी वे कसाई
ना ना रोवे मत ना माई
मैं सूँ लाड़ों गुड़िया थारी
आजा बापू गोद म्हारी
आजा ख़ूब सुलाऊँ
थारी पीठ सहलाऊँ
थारे आँसू पी-पी जाऊँ
थारी धीर बँधाऊँ
मैं लड़ूँगी दम है जब तक
मैं जानूँगी कोख का जातक
मैं पढ़ूँगी आगे-आगे
ख़ुद बुनूँगी भाग्य के धागे
लागे दोनों को मेरी नींदें
रख लो मुझ से कुछ उम्मीदें
ग़म ना बेटे का भी करना
मुझ को बेटा ही समझना
मैं हूँ बेटी लाख से न्यारी
सो जा सोजा माई दुलारी
सो जा सो जा बाबुल प्यारे
तोड़ दिखाऊँगी चाँद सितारे
आ झुलाऊँ चाँद का झूला
माँ के संग झूले माँ का दूल्हा
सुन लो सुन लो मेरी लोरी
थारी तो बनी रहे यह जोड़ी।
***

## ( हरियाणा के मोरनी हिल्ज़ पर रची तीन कविताएँ )

यह तमस हटे
पौ फटे
तो कुछ दिखे
पुनर्जन्म आज फिर से घटे
नश्वरता का भ्रम मिटे
भीतर की धुंध भी छटे
जीवन ताल ठोंक कर डटे।
***

धुँध-धुँध कोहरा कोहरा
बादल-बादल गुमसुम गुपचुप
स्पष्ट भी ज्यों अस्पष्ट-अस्पष्ट
ऐसे में सुनना किसी पास की डाली पर
स्माधिस्थ कोई पंख युक्त बुद्ध
स्वालाप में लीन अल्लसुबह
''मत कर स्वंय से युद्ध
स्वीकार सब कुछ सब सुख-दु:ख
आख़िर सब कुछ होना नष्ट
कैसा कष्ट कैसा कष्ट कैसा कष्ट।''
***

इन पर्वतों पर
रात बूँदें पड़ी या ओस
भान नहीं
अल्लसुबह जो आदि गंध थी
व्याप्त चहुँ ओर ओर-छोर
नर्म-नर्म धुँध में धुली-धुली घुली-घुली
मंदिर की पावनता सी
कुछ ऐसा महसूसा हो पहले
ज्ञात नहीं
क्यों धरती पर स्वर्ग आबाद नहीं ?
***

## नव पल्लव

### समुद्र विजय की माँ पर दो कविताएँ

संपर्क:9720 Dayton Ct.,Raleigh, NC-27617
मोबाइल:9194919807
ईमेल: samudra.vijay@gmail.com

1

एक भेड़
ढ़ाणी से दूर
उँचे धोरे पर से तकती है
शुष्क आकाश से
खाली ज़मीं तक का
विस्तार।

खेजड़ी की नग्न छाया में
न कोई रुख न कोई काया

मुझे लगता है
यहाँ कोई नहीं अपना।

मगर
अब भी उड़ती है -
हाथ-पाँव, माथे-मुख
और बालों में
चिपक-लिपट जाती है,
शायद प्यार जतलाती है,
मुझसे
मेरे गाँव की रेत।

ढ़ाणी = बाँस और फूस का बना कच्चा घर
धोरा = रेत का टीला

***

2

जब-जब मैं रुठ जाता था,
तुम दुलार से मनाती थी।
एक शहर था परियों का,
उँगलियाँ थाम तुम घुमाती थी।
ताप तन का हो या मन का
रात भर जाग तुम सुलाती थी।

रतजगे ये बरसों के,
बहुत थक गई होगी तुम भी,
नींद तो आती होगी लेकिन
तनिक ठहर जाओ ना।

फूल बनो या तारा,
या फिर बन के एक किरण,
मेरे वीरान-उदास मन को,
स्नेहिल उजाले से भर जाओ ना।
विराट में विलीन हो कर
मेरी छत्र-छाया बन जाओ ना।

बहुत थक गई होगी,
अब तुम सो जाओ, माँ।
जिसे सुन-सुन के
अखियाँ मूँदी,
सपने बुने,
श्रम पाया,
वही बचपन की लोरी
मैं सुनाऊँ,
और तुम सो जाओ, माँ।

***

**फार्म IV**

**समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण ( देखें नियम 8 )।**

**पत्रिका का नाम : विभोम स्वर**

**1. प्रकाशन का स्थान :** पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

**2. प्रकाशन की अवधि :** त्रैमासिक

**3. मुद्रक का नाम :** जुबैर शेख़।
**पता :** शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

**4. प्रकाशक का नाम :** पंकज कुमार पुरोहित।
**पता :** पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

**5. संपादक का नाम :** पंकज सुबीर।
**पता :** रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
**क्या भारत के नागरिक हैं :** हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. **उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं। स्वामी का नाम :** पंकज कुमार पुरोहित। **पता :** रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
**क्या भारत के नागरिक हैं :** हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

**मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।**

**दिनांक 20 मार्च 2017**

**हस्ताक्षर पंकज कुमार पुरोहित**
**( प्रकाशक के हस्ताक्षर )**

# मीरा स्मृति पुरस्कार और सम्मान समारोह

मीरा फांउडेशन एवं साहित्य भंडार की ओर से 29 अक्टूबर को नार्थ सेंट्रल ज़ोन वैस्ट कल्चरल सेंटर, इलाहाबाद में आयोजित मीरा स्मृति पुरस्कार एवं सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। कई वर्षों से दिए जा रहे इस पुरस्कार में रचनाकारों से पहली बार उपन्यास आमंत्रित किए गए। इस बार यह पुरस्कार दिल्ली की प्रज्ञा और इलाहाबाद की भूमिका द्विवेदी को मिला। वरिष्ठ आलोचक विजयबहादुर सिंह पुरस्कार समारोह के अध्यक्ष रहे। वरिष्ठ कथाकार ममता कालिया ने इस अवसर पर पुरस्कृत उपन्यासों-'गूदड़ बस्ती' और 'आसमानी चादर' पर विशेष वक्तव्य दिया। उन्होंने प्रतियोगिता में आईं पांडुलिपियों में इन दो पांडुलिपियों के वैशिष्ट्य को उजागर किया। युवा रचनाशीलता पर बात करते हुए उन्होंने रचनाकारों को लेखन का एक ही स्टाइल को पकड़कर न चलने का सुझाव दिया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रो. राजेंद्र कुमार ने भी उपन्यास की रचना-प्रक्रिया की चर्चा करते हुए इन दोनों उपन्यासों पर अपनी बात केंद्रित की। उनका कहना था कि ''उपन्यास में कथा एक ढाँचा है ज़रूरी है इस ढाँचे के भीतर क्या दृष्टि दी गई है। उपन्यास सिर्फ कथा नहीं है चरित्र और उसका निर्वाह इसका महत्त्वपूर्ण पक्ष है।'' अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में विजय बहादुर सिंह ने कहा लेखन में शील और कुल बड़े गुण हैं। उन्होंने हर लेखक के लिए दोहराव से बचने की बात कही। दोनों उपन्यासकारों को उनकी रचनात्मकता के लिए उन्होंने बधाई दी। इस वर्ष इस पुरस्कार के लिए रचनाकारों से पहली बार उनके उपन्यास की पांडुलिपि आमंत्रित की गईं थीं। कार्यक्रम के संचालक अशोक त्रिपाठी के अनुसार कई चरणों में चलने वाले इस प्रतियोगिता के निर्णय में पूरी पारदर्शिता के साथ हर रचनाकार को एक क्रमांक दिया गया। अंतिम निर्णय के बाद क्रमांक के अनुसार दो उपन्यासकारों का नाम सामने आया। पुरस्कृत पांडुलिपियों में दिल्ली की प्रज्ञा का उपन्यास 'गूदड़ बस्ती' और इलाहाबाद की भूमिका द्विवेदी अश्क का उपन्यास 'आसमानी चादर' अंतिम चरण तक आकर सर्वसम्मति से प्रथम स्थान पर स्वीकृत हुए। इस कार्यक्रम में डॉ. विजय अग्रवाल ने उपन्यासों पर अपनी बात रखी। उपन्यास की रचना-प्रक्रिया पर अपना वक्तव्य देते हुए प्रज्ञा ने कहा-''मेरे लिए यह उपन्यास लिखना खुद को और अपने समाज को नए सिरे से जानने की यात्रा जैसा रहा। यह उपन्यास दलित जीवन के संघर्षों को समर्पित है। यह सुरेंद्र नाम के नौजवान की कहानी है। उपन्यास में दलित समाज की पीड़ा, उनके आक्रोश के साथ उनके अंतर्विरोधों को भी स्वर देने की कोशिश मैंने की है। 'गूदड़ बस्ती' किसी खास शहर की खास बस्ती नहीं है हर शहर में ये बस्तियाँ हैं और उसी हिकारत से इनके नाम रखे जाते हैं जिस हिकारत से समाज की तथाकथित ऊंची जातियाँ इन्हें देखती हैं।'' 'आसमानी चादर' के बारे में भूमिका द्विवेदी का कहना था-''मेरे लिए सुखद है कि इसे इलाहाबाद ने मान्यता दी। यह एक लड़की के जीवन की कहानी है जो आजादी के साथ जीना चाहती है। वह मुक्त है। इलाहाबाद और दिल्ली जिसकी शिक्षा का परिवेश है। वह आधुनिक लड़की है जो अपने संघर्षों में जीती है। उपन्यास की कहानी निहारिका नाम की लड़की के इर्द-गिर्द घूमती है।'' इस अवसर पर दोनों उपन्यासकारों को पंद्रह-पंद्रह हज़ार रुपये की राशि, प्रशस्ति-पत्र, श्रीफल देकर और शॉल उढ़ाकर सम्मानित किया गया। इसी अवसर पर मंच से 'गूदड़ बस्ती' और 'आसमानी चादर' दोनों उपन्यासों का लोकार्पण भी हुआ। हर वर्ष दिया जाने वाला यह प्रतिष्ठित पुरस्कार साहित्य भंडार के सतीश अग्रवाल और विभोर अग्रवाल के विशेष प्रयासों से आयोजित होता रहा है। प्रतियोगिता के निर्णायक मंडल में दूधनाथ सिंह, ममता कालिया, विजय अग्रवाल, अशोक त्रिपाठी रहे। इससे पहले पंकज मित्र, पंकज राग, विमल चंद्र पांडेय, मनोज पांडेय, बद्रीनारायण आदि चर्चित रचनाकार मीरा स्मृति पुरस्कार से पुरस्कृत किए जा चुके हैं। कार्यक्रम के दूसरे सत्र में प्रो. नित्यानंद तिवारी,नीलकांत, डॉ. दामोदर दीक्षित, डॉ. अशोक कुमार कालिया को मीरा स्मृति सम्मान से नवाजा गया। इस समारोह की अध्यक्ष श्रीमती ममता कालिया रहीं और मुख्य अतिथि इलाहाबाद विवि के वी.सी. प्रो.हंगलू रहे। ममता कालिया ने कहा ''आज सार्थक बातें करने की आवश्यकता है। स्त्री प्रताड़ना, यौन शोषण चिंता के विषय हैं। आज अच्छे विचारों और संस्कृति को बचाए जाने की आवश्यकता है।'' मुख्य अतिथि प्रो. हंगलू का कहना था-''जातिवाद का बैक्टीरिया हमें बर्बाद कर रहा है। हमें सोचना होगा बदलाव बेहतरी की ओर है या बर्बादी की ओर।'' इस अवसर पर सभी सम्मानित विभूतियों ने भी अपनी बात रखी। कृतिका अग्रवाल ने अपनी नृत्य प्रस्तुति से समाँ बाँध दिया। डॉ. शांति चौधरी ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

इस अवसर पर इलाहाबाद के अनेक साहित्यकार, संस्कृतिकर्मी, शिक्षक और शहर के बाहर से आए लोग भी बड़ी संख्या में मौजूद रहे। संतोष चतुर्वेदी, सूर्यनारायण सिंह, विवेक निराला, हितेष सिंह, रमेश दुबे, श्रीरंग, सुबोध शुक्ल, अंकित उपाध्याय, मीनू दुबे, सत्यकेतु आदि लोग मौजूद थे।

***

## एक दिवसीय साहित्य उत्सव का आयोजन

छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह के गृह नगर कवर्धा के स्थानीय वीर सावरकर सभागार में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास,भारत (मानव संसाधन विकास मंत्रालय,भारत सरकार) ने कवर्धा की अत्यंत पुरानी और सक्रिय संस्था 'आयाम' के तहत राष्ट्रीय पुस्तक सप्ताह के तहत एक दिवसीय साहित्य उत्सव का आयोजन किया।

इस आयोजन में चर्चा गोष्ठी, व्यंग्य पाठ व परिचर्चा के साथ स्थानीय कवियों की रचनाओं का पाठ भी प्रमुख रहा।

पहले सत्र में कार्यक्रम के शुरुआत में आयाम संस्था के अध्यक्ष नीरज मनजीत ने बताया-कि हमारी संस्था का गठन सन 1972 से हुआ,तब से लेकर अब तक संस्था के कार्यक्रम अबाध गति से जारी हैं।पहले पत्रिका भी निकालते थे, विगत कई वर्षों से वह मृतप्राय: हैं,लेकिन अब लगता है कि वह पुन: निकेलगी।

इस अवसर पर न्यास के सहायक सम्पादक व नोडल अधिकारी छत्तीसगढ़ डॉ. ललित किशोर मंडोरा ने बताया कि न्यास की प्राथमिकता नई संभावनाओं की तलाश कर उन्हें मुख्य धारा से जोड़ना है। छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर के आयोजन में न्यास के अध्यक्ष डॉ. बलदेव भाई शर्मा ने पिछले वित्त वर्ष में कहा था कि न्यास आने वाले समय में अधिक से अधिक कार्यक्रम व कार्यशालाओं का आयोजन कर रचनाकारों को न्यास से जोड़ने में पहल करेगा।

इस अवसर पर न्यास की चम्पारण में आयोजित नवसाक्षर लेखन कार्यशाला में तैयार कवर्धा की रचनाकार डॉ. विश्वासी एक्का की पुस्तक 'कजरी ' का लोकार्पण भी किया गया।

कार्यक्रम में परिचर्चा का विषय था- पुस्तक संस्कृति और शब्द की महत्ता, इस विषय पर बोलते हुए बिलासपुर के कथाकार डॉ. सतीश जायसवाल ने कहा- सामान्य तौर पर पुस्तक को लोग ईजी ले लेते है,वह ड्राइंग रूम की शौभा बन कर रह गई,लेकिन मैं पुस्तक को एक संस्कार के तौर पर लेता हूँ,पुस्तक मुझे नया उत्साह देती है,उम्र के इस पडाब पर आकर भी मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरी रुचि में कोई कमी आई हो,रुचि लगातार बढ़ी हैं।

रायपुर से पधारे कथाकार व आकशवाणी केंद्र के पूर्व प्रमुख श्री तेजिंदर ने कहा-

पुस्तक मनुष्य की आदत को बताती है कि उसकी रुचि क्या है,उसको क्या पढ़ना हैं। इस मौके पर उन्होंने कुछ रोचक प्रसंग भी सुनाएँ। उन्होंने कहा कि मेरा सीधा संवाद पुस्तक से हैं। मैं नई तकनीक से भागता हूँ,जो सुख पुस्तक में है वह सुख न तो लेपटॉप में है और न वाट्सप पर पर आनंद। मुझे लगता है पुस्तक व्यापक समूह तक आज भी जोड़ती है और दावे के साथ कह सकता हूँ कि वह आगे भी अपने पाठकों को बाँधे रखेगी। इस सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ पत्रकार व लेखक श्री रमेश नैय्यर ने की।

इसी कार्यक्रम के दूसरे सत्र में वर्तमान समय में व्यंग्य की आवश्यकता और व्यंग्य पाठ में विनोद साव,रवि श्रीवास्तव, गिरीश पंकज,स्नेहलता पाठक, गुलबीर सिंह भाटिया ने हिस्सेदारी की। इस सत्र की अध्यक्षता डॉ सुशील त्रिवेदी,पूर्व आई ए एस अधिकारी व छत्तीसगढ़ पत्रिका के प्रधान संपादक ने की।

तीसरे और अंतिम सत्र में काव्य संध्या के तहत स्थानीय दस कवियों ने अपनी बेहतरीन रचनाएँ सुनाकर सभी श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर दिया। कवियों में समयलाल विवेक,अजय चंद्रवंशी,विश्वासी एक्का, पुष्पांजलि नागले, सुनील गुप्ता,बृजकिशोर पांडेय,संतराम थवाईत,अंकुर गुप्ता,सुखदेव सिंह के अलावा भागवत गुप्ता रहे।

इस अविस्मरणीय एक दिवसीय साहित्य उत्सव को बड़े चाव से कवर्धा की स्थानीय जनता ने सुना और आत्मसात् भी किया।

***

## भारत-जापान के सांस्कृतिक संबंध अटूट- डॉ. मिज़ोकामी

''भारत-जापान के बीच सदियों पुराने सांस्कृतिक संबंधों के साथ दोनों ही देशों के बीच मज़बूत व्यापारिक रिश्ता रहा है। भारत के स्वाधीनता संग्राम के दौरान भी भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों को जापान की सहानुभूति एवं सहयोग प्राप्त हुआ। व्यापार की दृष्टि से दोनों देशों के उद्यमी मजबूत पार्टनर के रूप में विश्व के लिए मिसाल बने हैं।'' ये उद्गार जापान के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. तोमियो मिज़ोकामी ने बैंक ऑफ़ बड़ौदा के मुंबई स्थित कॉर्पोरेट कार्यालय में 'भारत-जापान आर्थिक एवं सांस्कृतिक संबंधों' पर आयोजित व्याख्यान में व्यक्त किए। इस अवसर पर डॉ. मिज़ोकामी ने भारत-जापान संबंधों के भौगोलिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक पहलुओं के संबंध में विस्तार से जानकारी दी। इस व्याख्यान की यह विशेषता रही कि संपूर्ण व्याख्यान हिन्दी भाषा में प्रस्तुत किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. सुनीता यादव, उप निदेशक (कार्यान्वयन), क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (पश्चिम), गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग ने की।

प्रारंभ में अतिथियों का स्वागत् श्री दिनेश कुमार नामदेव, महाप्रबंधक, सुविधा प्रबंधन एवं कार्यालय प्रशासन एवं उप महाप्रबंधक (मा.सं.प्र.) श्री जयदीप दत्ता राय ने किया। कार्यक्रम का संयोजन एवं संचालन उप महाप्रबंधक (राजभाषा) डॉ. जवाहर कर्नावट ने किया तथा आभार माना मुख्य प्रबंधक (राजभाषा) श्री पुनीत कुमार मिश्र ने।

***

## नमिता सिंह की पुस्तक 'स्त्री प्रश्न' का लोकार्पण समारोह

''स्त्रीवाद का तात्पर्य स्त्रियों के लिए समान अधिकार तथा उनका कानूनी संरक्षण है। कृशि आधारित सामंती व्यवस्था में स्त्री केवल संतानोपत्ति का साधन थी। लगभग दो सौ वर्षों के लंबे संघर्षों के बाद स्त्री को समान लोकतांत्रिक अधिकार मिले और सशक्तीकरण की दिशा में प्रगति हुई लेकिन आज उपभोक्तावादी व्यवस्था ने स्त्री को भी उत्पाद के रूप में बदल दिया है और उसे बाज़ार तथा विज्ञापन की वस्तु बना दिया है।'' कथाकार-साहित्यकार नमिता सिंह ने अपनी नई पुस्तक 'स्त्री प्रश्न' के लोकार्पण के अवसर पर आयोजित गोष्ठी 'उपभोक्तावादी समाज में स्त्री-संघर्श' में यह विचार प्रस्तुत किये। आयोजन जनवादी लेखक संघ, प्रगतिशील लेखक संघ तथा जन संस्कृति मंच के संयुक्त तत्वाधान में हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए शिक्षाविद प्रो. ज़किया सिद्दीकी ने कहा कि अपनी पहचान बनाने का संघर्श ही स्त्रियों को आगे बढ़ाता है। पिछड़ापन दूर करने के लिये स्त्री-शिक्षा और आर्थिक आत्मनिर्भरता बहुत ज़रूरी है। हिंदी विभाग के अध्यक्ष प्रो. अब्दुल अलीम ने स्त्री अधिकारों के प्रति समाज के पढ़े लिखे लोगों को संवेदनशील होने की ज़रूरत पर बल दिया और कहा कि सबके संयुक्त प्रयासों से ही इसे प्रगति मिल सकती है। 'स्त्री-प्रश्न' पुस्तक पर विस्तार से चर्चा करते हुए प्रो. अजय बिसारिया ने कहा कि नमिता सिंह साहित्यकार होने के साथ पिछले चालीस वर्षों से सामाजिक क्षेत्र में भी सक्रिय हैं और विभिन्न संगठनों के माध्यम से हर वर्ग की स्त्रियों के बीच काम करने के अनुभवों को आज के प्रचलित विमर्श से एक अलग रूप दिया है। सामान्यतया प्रचलित स्त्री विमर्श मध्य ओर उच्च मध्यवर्ग की समस्याओं पर केंद्रित होता है लेकिन इस पुस्तक में हाशिये के वंचित समाज की स्त्रियाँ, उनके स्वास्थ्य, रोज़गार, यौनिक हिंसा जैसे विषयों पर चर्चा की गई है। डॉ. जया प्रियदर्शिनी ने पुस्तक पर चर्चा करते हुए कहा कि लेखिका ने पिछली पीढ़ियों की उन अनाम स्त्रियों के जीवन की चर्चा भी की है जिन्होंने आज की नई पीढ़ी के लिये संघर्ष का रास्ता बनाया। सबसे महत्त्वपूर्ण है कि स्त्री संघर्ष के इतिहास और परंपरा की चर्चा भी इस पुस्तक में की गई है।

डॉ. दीपशिखा सिंह ने संचालन करते हुए कहा कि आज इक्कीसवीं सदी में बाज़ार आधारित स्त्री-प्रश्न नए रूप में हैं। पुस्तक में स्त्रीवाद से संबंधित सवालों को उठाते हुए लेखिका ने सिर्फ अकादमिक अध्ययन ही नहीं बल्कि लोगों के बीच काम करते हुए प्राप्त होने वाले व्यावहारिक अनुभवों के आधार पर चर्चा की है। विभिन्न वर्ग और समुदायों की सामाजिक स्थितियों और समस्याओं को भी चर्चा में शामिल किया गया है।

'उपभोक्तावादी समाज में स्त्री संघर्श' विषय पर चर्चा में भाग लेते हुए प्रो. समी रफ़ीक ने अंग्रेज़ी साहित्य से अनेक प्रसंगों का उल्लेख किया और कहा कि आज समाज में प्रगति का जो स्वरूप है उसमें स्त्री और पर्यावरण दोनों का क्षरण हो रहा है। स्त्री-जीवन और पर्यावरण दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। एडवोकेट हरनारायण सिंह ने कहा कि वकालत के पेशे में लड़कियों को अपनी जगह बनाने के लिये बहुत संघर्ष करना पड़ता है। सामान्यतया लोग उनकी क्षमता पर भरोसा नहीं करते हैं। दिल्ली से आए पत्रकार देवादित्य ने कहा कि स्त्री संघर्ष को वैचारिक आधार देने के लिये विभिन्न विश्वविद्यालयों के स्त्री अध्ययन केन्द्रों की प्रमुख भूमिका रही है लेकिन अब सरकार और यू.जी.सी. इन स्त्री अध्ययन विभागों के अनुदान खत्म कर उन्हें बंद कर देना चाहती है जो बेहद चिंताजनक है। डॉ. प्रभाकर भार्मा ने स्त्री संघर्श की प्रथम उद्घोषिका कवियत्री मीराबाई की चर्चा की। प्रो. तसनीम सुहेल ने घर-परिवार में बेटे-बेटी के बीच भेदभाव खत्म करने की आवश्यकता पर बल दिया। दिल्ली से ही पधारे डॉ. सुशील कुमार ने कहा कि स्त्री और समाज के संबंध तथा अंतर्विरोधों पर हम लोग चर्चा तो करते हैं लेकिन उन्हें व्यवहार में नहीं लाते। बाज़ारवाद के जाल से बचने के लिये आत्मालोचन की ज़रूरत है। चर्चा में प्रो. कमलानंद झा, प्रो. आसिम सिद्दीकी और आलम ने भी भाग लिया। कार्यक्रम में प्रो. प्रदीप सक्सेना, प्रो. सगीर अफराहीम, प्रो. एम. शाहुल हमीद, डॉ. सीमा सगीर, प्रो. सिराज अजमली, डॉ. प्रेमकुमार, प्रो. राजीव भुक्ल, प्रो. रेशमा बेगम, डॉ. निर्मला कुमारी, डॉ. मंजू भार्मा, डॉ. रामवीर सिंह, डॉ. जावेद आलम, डॉ. भाहबाज़ अली खांन, डॉ. फातिमा जेहरा, नीलोफ़र उस्मानी आदि बड़ी संख्या में लोग उपस्थित थे।

***

## पूरन सिंह की कहानी का मंचन

श्रीराम सेंटर, मन्डी हाउस नई दिल्ली में कथाकार पूरन सिंह की कहानी नरेशा की अम्मा उर्फ भजोरिया का मंचन किया गया। इसका आयोजन हिन्दी अकादमी नई दिल्ली ने किया। नाटक के निर्देशक कैलाश चंद तथा सहायक निर्देशक मुकेश गौतमी थे। समाज मे फैली जाती पांति की दुर्भावनाओं को प्रस्तुत करते एक तथाकथित चरित्रहीन स्त्री की बहादुरी को साक्षात करती यह प्रस्तुति बहुत ही साकार रही। खचाखच भरे हाल मे जहाँ सकटे लाल की भूमिका में निर्देशक और अभिनेता हनु यादव के अभिनय ने समा बांध दिया वही निर्देशक और अभिनेत्री कुसुम स्वतंत्र ने नरेशा की अम्मा की भूमिका को साकार कर दिया।

***

## व्यंग्य के क्षेत्र में अतुलनीय योगदान के लिए गिरीश पंकज को 'व्यंग्यश्री'

रायपुर। हिन्दी भवन, नई दिल्ली प्रतिवर्ष शीर्षस्थ व्यंग्यकार पंडित गोयपालप्रसाद व्यास के जन्मदिवस पर किसी एक प्रतिष्ठित व्यंग्यकार को व्यंग्य लेखन के क्षत्र में उनके अतुलनीय योगदान के लिए 'व्यंग्यश्री' सम्मान से सम्मानित करता है। आगामी 13 फरवरी, 2018 को बाईसवाँ व्यंग्यश्री सम्मान प्रख्यात व्यंग्यकार गिरीश पंकज को हिन्दी भवन सभागार में प्रदान किया जाएगा। सम्मान स्वरूप उन्हें एक लाख ग्यारह हज़ार एक सौ ग्यारह रुपये की राशि, वाग्देवी की प्रतिमा, प्रशस्ति पत्र, रजतश्रीफल तथा शॉल आदि भेंट किए जाएँगे। हिन्दी भवन के संचालक डॉ. गोविन्द व्यास ने पिछले दिनों यह जानकारी दी। इसके पहले व्यंग्यश्री सम्मान सर्वश्री श्रीलाल शुक्ल, रवीन्द्रनाथ त्यागी,शेरजंग गर्ग, मनोहरश्याम जोशी, केपी सक्सेना, लतीफ़ घोंघी, शंकर पुणताम्बेकर, गोपाल चतुर्वेदी, ज्ञान चतुर्वेदी, सूर्यबाला, विष्णु नागर, यज्ञ शर्मा, प्रेम जन्मेजय, नरेंद्र कोहली, हरीश नवल, हरि जोशी,जवाहर चौधरी, सुभाष चन्दर और आलोक पुराणिक आदि को प्रदान किया जा चुका है।

गिरीश पंकज विगत चालीस वर्षो से व्यंग्य लिख रहे है। उनके सोलह व्यंग्य संग्रह, सात व्यंग्य समेत बासठ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। पंद्रह छात्रों ने इनके व्यंग्य साहित्य पर शोध कार्य भी किया है। व्यंग्य साहित्य में योगदान के लिए इनको इनके व्यंग्य देश की महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशित होते रहे है। यह सिलसिला आज भी जारी है।व्यंग्य साहित्य लेखन के लिए इनको पहले भी अनेक समान प्राप्त हो चुके है, जिनमे मिठलबरा की आत्मकथा (उपन्यास) के लिए रत्न भारती सम्मान, भोपाल, लॉफ्टर क्लब इंटरनेशन, मुंबई द्वारा स्वर्ण पदक सम्मान, अटटहास न्यूज लेटर, रायपुर के सम्पादन के लिए, माफिया (उपन्यास) के लिए लीलारानी स्मृति सम्मान (पंजाब), अटटहास युवा सम्मान, लखनऊ, श्रीलाल शुक्ल (परिकल्पना) व्यंग्य सम्मान, लखनऊ, विदूषक सम्मान, जमशेदपुर, समग्र व्यंग्य लेखन के लिए रामदास तिवारी सृजन सम्मान- रांची, व्यंग्य उपन्यास लेखन के लिए गहमर में प्रदत्त सम्मान प्रमुख है। और अब व्यंग्यश्री। गिरीश पंकज साहित्य और पत्रकारिता में निरंतर सक्रिय है। अनेक देशों का चुके गिरीश पंकज कुछ महत्त्वपूर्ण दैनिकों में चीफ रिपोर्टर और सम्पादक रहने के बाद इन दिनों 'सद्भावना दर्पण' नामक त्रैमासिक अनुवाद पत्रिका का सम्पादन-प्रकाशन कर रहे है।

***

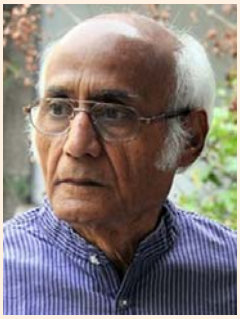

## इब्बार रब्बी को राजकमल चौधरी पुरस्कार

हिन्दी के सुपरिचित कवि-पत्रकार श्री इब्बार रब्बी को 'मित्रनिधि' द्वारा स्थापित प्रथम राजकमल चौधरी पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा। मित्रनिधि के सचिव डॉ. रत्नेश गुप्ता के अनुसार यह निर्णय वरिष्ठ कवि-कथाकार और संस्था के संरक्षक विष्णु चन्द्र शर्मा ने किया है। उल्लेखनीय है कि इब्बार रब्बी साधारण जीवन, मौलिकता, सूक्ष्म दृष्टि और सहजता के असाधारण कवि हैं। पुरस्कारस्वरूप उन्हें 21,000 रुपये,स्मृति चिह्न और शॉल भेंट किया जाएगा। संयोजक के अनुसार यह आयोजन जल्द ही राजधानी में आयोजित होगा।

***

## डॉ. नीरज दइया को संभागीय पुरस्कार

केन्द्रीय विद्यालय संगठन जयपुर ने इस वर्ष के संभागीय प्रोत्साहन पुरस्कार के लिए ने शैक्षणिक कर्मचारियों के अंतर्गत बीकानेर के केंद्रीय विद्यालय क्रमांक एक के हिंदी स्नातकोत्तर शिक्षक डॉ. नीरज दइया और प्राथमिक शिक्षक बी.एम. माली का चयन किया है। संगठन के उपायुक्त डॉ. जयदीप दास ने जयपुर में पुरस्कारों की घोषणा करते हुए बताया कि संगठन के स्थापना दिवस 15 दिसम्बर के दिन राजस्थान के केंद्रीय विद्यालयों के श्रेष्ठ कर्मचारियों एवं शिक्षकों का सम्मान किया जाएगा। सम्मान के अंतर्गय प्रमाण-पत्र, शॉल एवं पुरस्कार राशि पाँच हज़ार रुपये सम्मानितों को अर्पित की जाती है।

बीकानेर संकुल प्रभारी आर. पी. एस. शिवरायन एवं प्राचार्य सरजीत सिंह ने बताया कि संगठन प्रतिवर्ष शिक्षकों-कर्मचारियों को विभिन्न श्रेणियों में उनके विगत पाँच वर्षों के कार्यों के आधार पर प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान करता है, इस सत्र के लिए चयनित बीकानेर के डॉ. नीरज दइया एवं बी.एम. माली ने विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए अनेक कार्य किए वहीं शिक्षा में नवीन तकनीक और नवाचारों के लिए भी ये अग्रणी रहे हैं। विद्यालय परिवार के सदस्यों ने इनके चयन से हर्षित है।

***

# साहित्यकार डॉ. लारी आज़ाद को एक लाख का कर्मवीर सम्मान

विगत दिनों एशिया प्रसिद्ध भारतीय कृषि अनुसन्धान संसथान आई. ए. आर. आई. दिल्ली के भव्य सभागार में साहित्यकार प्रोफेसर लारी आज़ाद को एक लाख रुपये का कर्मवीर सम्मान प्रदान किया गया। डॉ. लारी आज़ाद को कुलाधिपति केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय इम्फाल पद्मभूषण प्रो आर. बी. सिंह तथा निदेशक कृषि,कस्तूरबा गाँधी ट्रस्ट, इंदौर डॉ. हीरानंद पांडेय, पूर्व समन्वयक अखिल भारतीय पुष्प विज्ञान परियोजना डॉ. रामलखन मिश्र, सुलभ इंटरनेशनल के संस्थापक पद्मभूषण डॉ. विंदेश्वर पाठक एवं अन्य वैज्ञानिकों ने संयुक्त रूप से अर्पित किया। डॉ. लारी को प्रशस्ति पत्र, स्मृति चिन्ह, अंगवस्त्र, श्रीफल एवं एक लाख रुपये की राशि प्रदान की गई। डॉ. शक्तिबोध द्वारा डॉ. लारी पर लिखित ग्रन्थ कर्मवीर का लोकार्पण भी हुआ। नागरिक स्वावलम्बन एवं स्वाभिमान विकास परिषद् दिल्ली की ओर से अभिनन्दन पत्र भी प्रस्तुत किया गया तथा सभी अतिथियों को वितरित किया गया। डॉ. लारी के साहित्यिक जीवन व हिंदी भाषा के उत्थान में वैश्विक योगदान पर शमशीर फिल्म्स जालंधर द्वारा एक वृत्तचित्र सरस्वतीपुत्र डॉ. लारी आज़ाद भी प्रदर्शित किया गया। डॉ. शक्तिबोध ने उनकी कृतियों का काव्यपाठ भी किया।

पद्मभूषण डॉ. विंदेश्वर पाठक ने कहा कि डॉ. लारी के मुख में सरस्वती विराजती है, वे जब बोलते हैं तो जी करता है कि सुनते जाएँ, सुनते जाएँ। पद्मभूषण प्रो. रामबदन सिंह ने कहा कि डॉ. लारी जैसे लिजेंड्री व्यक्तित्व देश के सच्चे कर्मवीर व विश्व मानवता के प्रेरणास्रोत हैं। डॉ. शक्तिबोध ने कहा कि उन्होंने डॉ. लारी पर विशद काव्य ग्रन्थ का लेखन उनके डेढ़ दशक तक प्रेरक कार्यों को देखने के बाद तथा उनके चार दशकों में किये गए अपूर्व योगदान के अध्ययन के बाद किया है। इस अवसर पर विचार व्यक्त करते हुए दर्जन भर विद्वानों ने डॉ. लारी के साहित्यिक व सांस्कृतिक योगदान की उन्मुक्त सराहना की। सेंटर फॉर वुमेन स्टडीज़ बीकानेर विश्वविद्यालय की निदेशक डॉ. मेघना शर्मा ने संचालन किया। सम्मान -स्वीकार ज्ञापन के पूर्व डॉ. लारी आज़ाद ने पुरस्कार राशि संस्थान के भावी सत्कार्यों हेतु लौटा दिया। प्रो. लारी ने अपने सम्बोधन में कहा कि हमने जो कुछ भी किया है वह हमारा कर्त्तव्य था, हमने अपने समाज या समय पर कोई एहसान नहीं किया।

***

# वार्षिक उत्सव मनाया

टू मीडिया ग्रुप ने 12 नवंबर 2017 को श्री गोवर्धन विद्या निकेतन में अपना सातवाँ वार्षिकोत्सव मनाया। जिसमें अतिथि के रूप में दिल्ली के उपमुख्यमंत्री के बड़े भाई श्री नरेंद्र कुमार सिसोदिया, श्री त्रिभवन कौल, स्थानीय निगम पर्षादा कुसुम तोमर, ए.जी.एस. ग्रुप के चेयरमैन अमित गर्ग, सुश्री साक्षी, अशोक कश्यप,अतुल गोयल,डॉक्टर वीणा मित्तल, वसुधा कनुप्रिया, फिज़ाकत अली, राजेंद्र नाथ रहबर तथा श्री रामकिशोर उपाध्याय ने अध्यक्षता की। कार्यक्रम का शुभारम्भ सभी अतिथियों द्वारा दीप प्रज्वलित करके किया। सभी अतिथियों ने टू मीडिया के कल,आज और कल के बारे में अपने विचार दिए,तथा टू मीडिया टीम को शुभकामनाएँ दी। इस मौके पर टू मीडिया नवम्बर-2017 अंक जो त्रिभवन कौल के व्यक्तित्व-कृतित्व पर केन्द्रित विशेषांक है, का विमोचन भी हुआ। मंच संचालन श्वेताभ पाठक ने किया।

***

# मॉरीशस एवं दक्षिण अफ्रीका के विद्वानों के आतिथ्य में बैंक ऑफ़ बड़ौदा द्वारा संगोष्ठी आयोजित

मुंबई: बैंक ऑफ़ बड़ौदा के मुंबई स्थित कॉर्पोरेट कार्यालय, में 'हिन्दी का अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य्' विषय पर एक संगोष्ठी आयोजित की गई। इस संगोष्ठी में मॉरीशस के प्रसिद्ध लेखक एवं पत्रकार श्री राज हीरामण, हिन्दी शिक्षा संघ, दक्षिण अफ्रीका की अध्यक्ष डॉ. उषा शुक्ल, प्रवासी संसार पत्रिका के संपादक श्री राकेश पाण्डे सम्मिलित हुए। कार्यक्रम की अध्यक्षता देश के प्रसिद्ध लेखक एवं व्यंग्यकार श्री हरीश नवल ने की।

प्रारंभ में कार्यक्रम के संयोजक डॉ. जवाहर कर्नावट ने अतिथियों का परिचय दिया। बैंक के महाप्रबंधक श्री राधाकांत माथुर ने स्वागत वक्तव्य प्रस्तुत किया। श्री हीरामण ने हिन्दी के विकास में मॉरीशस के योगदान एवं भारतीय संस्कृति के प्रभाव पर विस्तार से प्रकाश डाला। डॉ. उषा शुक्ला ने दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी की स्थिति एवं उनकी संस्था द्वारा वहाँ हिन्दी के प्रचार-प्रसार संबंधी गतिविधियों पर प्रकाश डाला। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री हरीश नवल ने वैश्विक स्तर पर हिन्दी के सकारात्मलक पहलुओं से श्रोताओं को अवगत कराया। कार्यक्रम को प्रवासी संसार, नई दिल्ली के संपादक श्री राकेश पाण्डे एवं श्री एम.एल. गुप्ता ने भी संबोधित किया। अंत में आभार प्रदर्शन मुख्य प्रबंधक श्री पुनीत मिश्र ने किया

***

# सोइ भगी पिरपिराट

मित्रों, इन दिनों एक बहुत विचित्र सी बात यह हो रही है कि हम सब केवल और केवल सोशल मीडिया पर ही निर्भर हो गए हैं। जब तक यह निर्भरता दूसरी बातों को लेकर थी, तब तक तो ख़ैर सब ठीक भी था किन्तु अब हम अपने झगड़े सुलझाने भी सोशल मीडिया पर जाने लगे हैं। कुछ हुआ नहीं कि तुरंत भाग पड़ते हैं फेसबुक पर स्टेट्स लगाने। और उसके बाद तुरंत कई सारे फ़ुरसतिये कव्वे उस स्टेट्स पर आकर काँव-काँव करने जुट जाते हैं। यदि आप ध्यान से देखेंगे तो पाएँगे कि ये कव्वे लगभग इस प्रकार की सारी फेसबुक स्टेट्स पर दिखाई देते हैं। इनको न ऊधो से कुछ लेना होता है, न माधो को कुछ देना होता है। इनको बस अपने काँव-काँव की गले में हो रही ख़ारिश मिटानी होती है। यह कव्वे अक्सर जिस किसी ने भी अपनी वॉल पर पंचायत बिठाई है, उसके पक्ष में ही काँव-काँव करते हैं। और प्रत्युत्तर में पंचायत बिठाने वाला- 'बहुत-बहुत धन्यवाद आदरणीय सच की इस लड़ाई में मेरा साथ देने के लिए।', 'आभारी हूँ कि आपने मेरे पक्ष में आकर बात रखी।', 'आपके साथ खड़े होने से मेरा संघर्ष मज़बूत हुआ है।' आदि आदि आदि... । कहीं कहीं तो यह भी होता है कि फेसबुक के किसी कमेंट के उत्तर में ही कमेंट्स दर कमेंट्स आ जाते हैं। इनका शुक्रिया, उनका प्रति शुक्रिया, फिर उनका प्रति प्रति शुक्रिया। मामला इस प्रकार हो जाता है मानों यहाँ पर कश्मीर समस्या, फिलीस्तीन-इज़राइल समस्या जैसी किसी बड़ी समस्या की बात चल रही हो। कुल मिलाकर बात ये कि जो मामला एक बार फ़ोन उठाकर सामने वाले को कॉल करने से शायद सुलझ सकता था, वो इतना उलझ जाता है कि दोनों पक्षों में दुश्मनी की नौबत आ जाती है। इसके बाद उन कव्वों का कोई पता नहीं होता जो काँव-काँव मचा रहे थे। वे तो अब अगले किसी फेसबुक स्टेट्स की ओर निकल चुके होते हैं। अक्सर तो यह भी होता है कि दोनों पक्ष अपनी-अपनी वॉल पे अपना-अपना पक्ष दुकान लगा कर रख देते हैं। पक्ष और विपक्ष के कव्वे अपना-अपना सच चुन लेते हैं और अपनी-अपनी सुविधा भी। उसके बाद अपने हिसाब से काँव-काँव करने लगते हैं। लेकिन क्या किसी ने कभी सोचा कि ऐसा कर के हम अपने आपको किस ख़तरनाक स्थिति में डाल रहे हैं। हमारे अंदर की सहनशीलता को हम कितना कम कर रहे हैं। हम बिना आगे-पीछे देखे, सोचे बस दौड़ पड़ते हैं फेसबुक की ओर स्टेट्स लगाने। बात को व्यक्तिगत से सार्वजनिक करने। बात जब तक व्यक्तिगत होती है तब तक उसका उपचार, उसका समाधान करना संभव होता है। जिसके लिए हमारे बुज़ुर्ग कहते थे कि घर की बात अभी घर में ही है। लेकिन एक बार बात सार्वजनिक हो जाए, तो फिर कुछ भी ठीक कर पाना संभव नहीं होता है। और फेसबुक के साथ तो आप अपनी बात को सार्वजनिक भी नहीं, वैश्विक कर रहे हैं। सारी दुनिया को बता रहे हैं। बशीर बद्र को भूल रहे हैं जिन्होंने कहा था -दुश्मनी जम कर करो लेकिन ये गुंजाइश रहे, जब कभी हम दोस्त हो जाएँ तो शर्मिंदा न हों। मेरी नानी अक्सर एक कहानी सुनाती हैं जिसमें एक चुहिया बहुत शिकायत करने वाली होती है, वह चूहों के राजा की मुँह लगी भी है। ज़रा-ज़रा सी बात पर भाग कर महल पहुँच जाती है शिकायत करने। उसकी शिकायत से चूहों का नुकसान होता है। बाद में वो बैठकर पछताती है। इस कहानी में नानी एक वाक्य कहती हैं, जब भी चुहिया को कुछ भी शिकायत जैसा दिखता तो वह महल की ओर तेज़ गति से भागती है, इसको नानी अपनी लोक बोली में कहती हैं - 'सोइ भगी पिरपिराट' ('सोइ' मतलब 'वैसे ही', 'भगी' मतलब 'दौड़ी' और 'पिरपिराट' मतलब 'सरपट'।) तो मित्रों आप भी अपने आप को देखिये कि इन दिनों आप भी तो ज़रा क्रोध आते ही 'सोइ भगी पिरपिराट' नहीं हो रहे हैं, यदि हो रहे हैं तो रुक जाइए, सोचिए।

सादर आपका ही,

पंकज सुबीर

पंकज सुबीर
पी. सी. लैब, शॉप नंबर 3-4-5-6,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के
सामने, सीहोर, मप्र, 466001
मोबाइल : 9977855399
ईमेल : subeerin@gmail.com

# शिवना प्रकाशन : जनवरी 2018 सेट में शामिल पुस्तकें

प्रगति मैदान पर आयोजित होने वाले नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2018 में "शिवना प्रकाशन-ढींगरा फ़ाउण्डेशन" का स्टॉल हॉल क्रमांक 12 ए / 12 में स्टॉल क्रमांक 105 है। कृपया अवश्य पधारें।

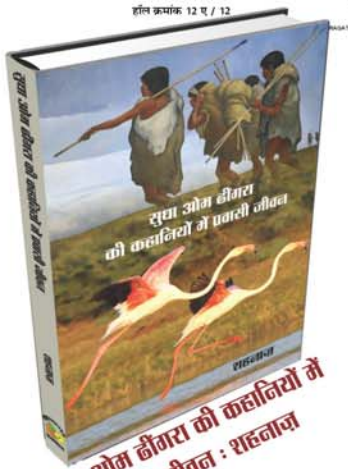


सुधा ओम ढींगरा की कहानियों में प्रवासी जीवन : शहनाज़

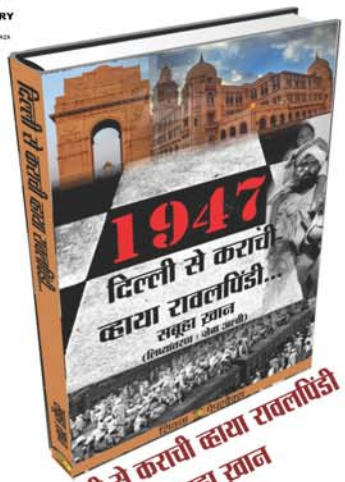


दिल्ली से कराची काया रावलपिंडी सबूहा ख़ान

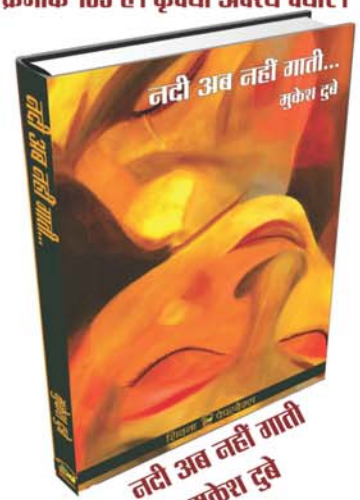


नदी अब नहीं माती मुकेश दुबे

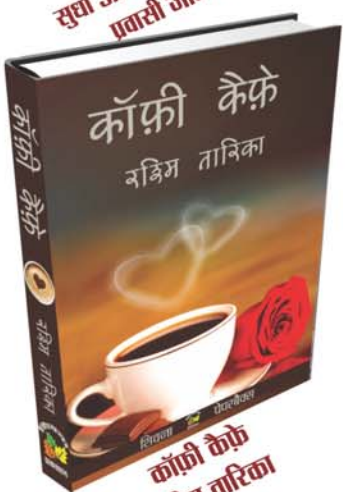


कॉफ़ी कैफ़े रश्मि तारिका

प्रवासी भारतीय की समस्याएँ एवं संवेदनाएँ : प्रसीता पी

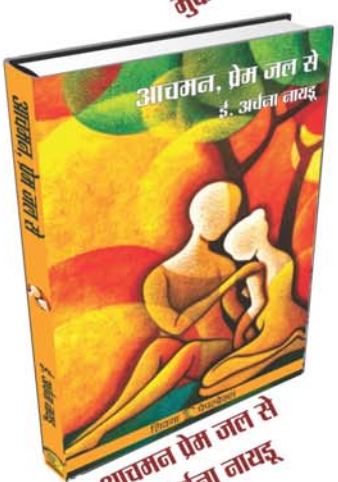


आचमन प्रेम जल से ई. अर्चना नायडू

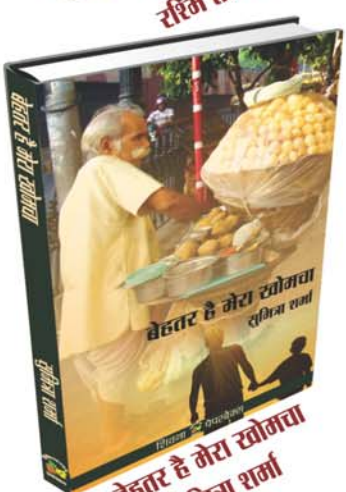


बेहतर है मेरा खोमचा सुमित्रा शर्मा

ज़मीं पर चाँद हीरा लाल मिश्र

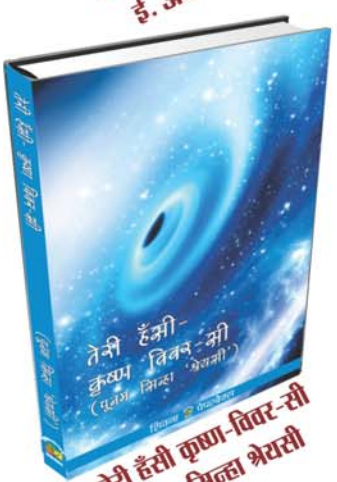


तेरी हँसी कृष्ण-बिंदर-सी पूनम सिन्हा श्रेयसी

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2018
6-14 जनवरी 2018
प्रगति मैदान, नई दिल्ली

नई दिल्ली के प्रगति मैदान पर आयोजित होने वाले "नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2018" में लेखक मंच पर आयोजित कार्यक्रम में शिवना प्रकाशन के नए सेट की पुस्तकों का विमोचन किया जाएगा।

**शिवना प्रकाशन कार्यक्रम**
**"पुस्तक विमोचन समारोह"**
लेखक मंच, हॉल क्रमांक 12
दिनांक : 9 जनवरी 2018
समय : 12:45 से 2:15 तक
मुख्य अतिथि :
डॉ. प्रेम जनमेजय
अध्यक्षता :
डॉ. सुशील सिद्धार्थ
संचालन : शहरयार

***

**विभोम-स्वर कार्यक्रम**
**"अनुवाद की आवाजाही हिन्दी, उर्दू और अंग्रेज़ी साहित्य के बीच"**
लेखक मंच, हॉल क्रमांक 12
दिनांक : 12 जनवरी 2018
समय : 12:45 से 2:15 तक
मुख्य अतिथि :
सबूहा ख़ान (उर्दू)
अध्यक्षता :
तरुण पिथोड़े (अंग्रेज़ी)
वक्ता : गीताश्री (हिन्दी), प्रज्ञा (हिन्दी), ज़ेबा अल्वी (उर्दू)
संचालन : पंकज सुबीर

शिवना प्रकाशन
शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan

शिवना प्रकाशन की पुस्तकें सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर

amazon http://www.amazon.in
flipkart.com http://www.flipkart.com
paytm https://www.paytm.com
ebay http://www.ebay.in

दिल्ली में पुस्तकें प्राप्त करें : हिन्दी बुक सेंटर, 4/5 आसफ अली रोड
फोन : 011-23286757 http://www.hindibook.com

Vibhom Swar ● Quarterly ● January-March 2018 ● RNI No. MPHIN/2016/70609 ● ISSN2455-9814

# शिवना प्रकाशन : जुलाई 2017 में प्रकाशित सेट की पुस्तकें

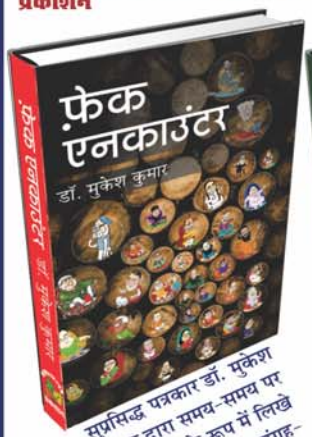


सुप्रसिद्ध पत्रकार डॉ. मुकेश कुमार द्वारा समय-समय पर साक्षात्कार के रूप में लिखे गए व्यंग्य लेखों का संग्रह-
फ़ेक एनकाउंटर
मूल्य : 300 रुपये
पेपरबैक संस्करण

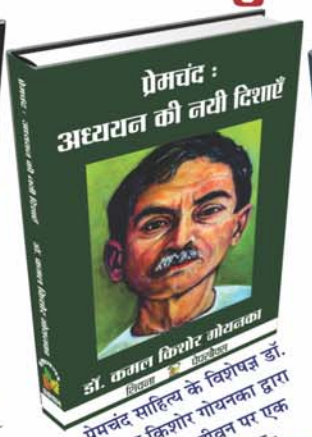


प्रेमचंद साहित्य के विशेषज्ञ डॉ. कमल किशोर गोयनका द्वारा प्रेमचंद के जीवन पर एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक-
प्रेमचंद: अध्ययन की नई दिशाएँ
मूल्य : 475 रुपये
पेपरबैक संस्करण

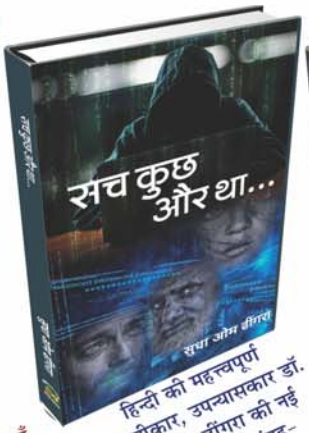


हिन्दी की महत्त्वपूर्ण कहानीकार, उपन्यासकार डॉ. सुधा ओम ढींगरा की नई कहानियों का संग्रह-
सच कुछ और था...
मूल्य : 250 रुपये
सजिल्द संस्करण

चर्चित कहानीकार तथा उपन्यासकार पंकज सुबीर की नौ नई कहानियों का संकलन-
चौपड़े की चुड़ैलें
मूल्य : 250 रुपये
सजिल्द संस्करण

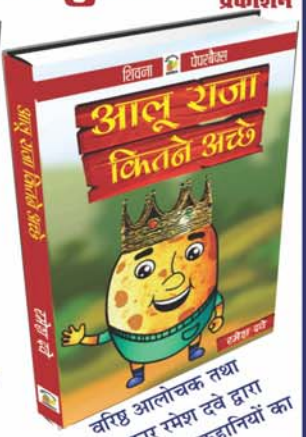


वरिष्ठ आलोचक तथा कथाकार रमेश दवे द्वारा लिखी गई बाल कहानियों का संग्रह-
आलू राजा कितने अच्छे
मूल्य : 49 रुपये
पेपरबैक संस्करण

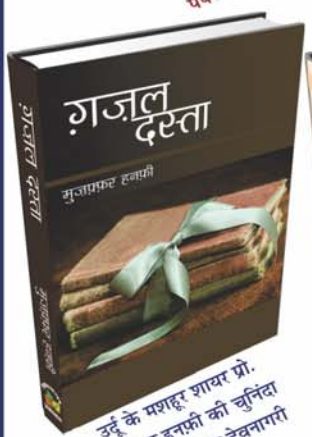


उर्दू के मशहूर शायर प्रो. मुज़फ़्फ़र हनफ़ी की चुनिंदा ग़ज़लों का संग्रह देवनागरी लिपि में-
ग़ज़ल दस्ता
मूल्य : 220 रुपये
पेपरबैक संस्करण

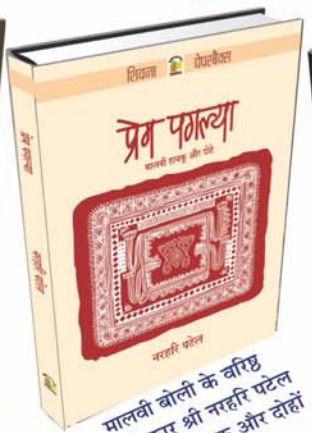


मालवी बोली के वरिष्ठ साहित्यकार श्री नरहरि पटेल के मालवी हायकु और दोहों का संग्रह-
प्रेम पगाल्या
मूल्य : 200 रुपये
पेपरबैक संस्करण

सुप्रसिद्ध शायरा, कवयित्री तथा अभिनेत्री लता हया की आधुनिक कविताओं का संग्रह-
मॉडर्न अबला
मूल्य : 220 रुपये
पेपरबैक संस्करण

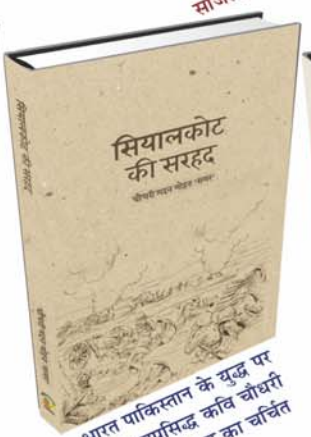


भारत पाकिस्तान के युद्ध पर केंद्रित सुप्रसिद्ध कवि चौधरी मदन मोहन समर का चर्चित खण्ड काव्य-
सियालकोट की सरहद
मूल्य : 220 रुपये
सजिल्द संस्करण

डॉ. आज़म की ग़ज़ल के व्याकरण पर एक ज़रूरी किताब-
शब्द, शुद्ध उच्चारण एवं पदभार
मूल्य : 350 रुपये
सजिल्द संस्करण

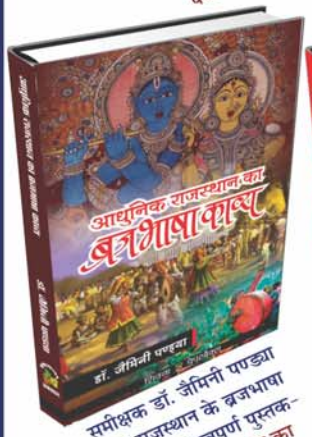


समीक्षक डॉ. जैमिनी पण्ड्या द्वारा राजस्थान के ब्रजभाषा काव्य पर महत्त्वपूर्ण पुस्तक-
आधुनिक राजस्थान का ब्रजभाषा काव्य
मूल्य : 450 रुपये
पेपरबैक संस्करण

युवा लेखक राजेश सोनवार का प्रेम तथा जीवन के द्वंद्व की पृष्ठभूमि पर लिखा गया उपन्यास-
दो जुलाई दो हज़ार पाँच
मूल्य : 200 रुपये
पेपरबैक संस्करण

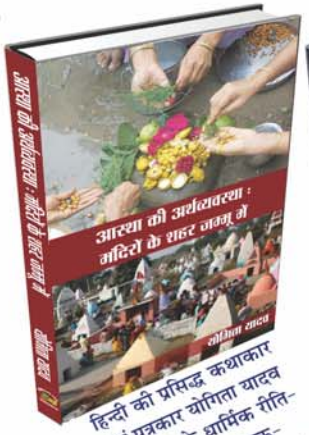


हिन्दी की प्रसिद्ध कथाकार एवं पत्रकार योगिता यादव द्वारा जम्मू के धार्मिक रीति-रिवाजों पर पुस्तक-
आस्था की अर्थव्यवस्था
मूल्य : 200 रुपये
सजिल्द संस्करण

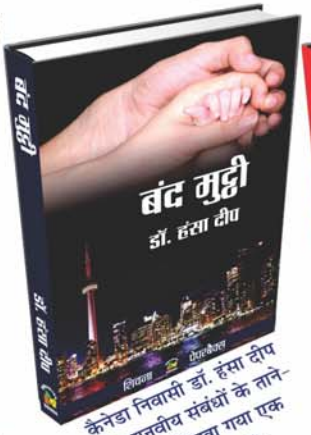


कैनेडा निवासी डॉ. हंसा दीप द्वारा मानवीय संबंधों के ताने-बाने पर लिखा गया एक रोचक उपन्यास-
बंद मुट्ठी
मूल्य : 275 रुपये
पेपरबैक संस्करण

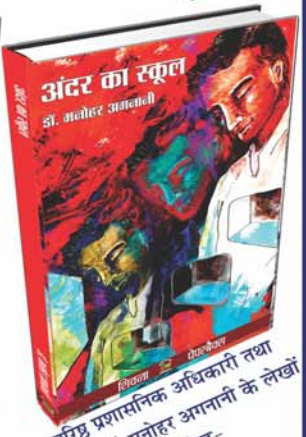


वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी तथा लेखक डॉ. मनोहर अगनानी के लेखों का संग्रह-
अंदर का स्कूल
मूल्य : 150 रुपये
पेपरबैक संस्करण

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-695918, Mobile 09584425995, 07828313926, 09806162184

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।